इंदिरा गांधी
राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
समाज कार्य विद्यापीठ

BSW – 126

परिवार स्थापन में समाज कार्य

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

परिवार में शिक्षा 1

''शिक्षा मानव को बन्धनों से मुक्त करती है और आज के युग में तो यह लोकतंत्र की भावना का आधार भी है। जन्म तथा अन्य कारणों से उत्पन्न जाति एवं वर्गगत विषमताओं को दूर करते हुए मनुष्य को इन सबसे ऊपर उठाती है।''

– इन्दिरा गाँधी

''स्वास्थ्य और सामाजिक कल्याण'' की चेयर के अन्तर्गत् विकसित कार्यक्रम

"Education is a liberating force, and in our age it is also a democratising force, cutting across the barriers of caste and class, smoothing out inequalities imposed by birth and other circumstances."

- **Indira Gandhi**

खंड

1

परिवार जीवन शिक्षा

इकाई 1
परिवार जीवन में संकल्पना

इकाई 2
परिवार जीवन शिक्षा – संकल्पना और अर्थ

इकाई 3
परिवार जीवन शिक्षा का महत्व

इकाई 4
परिवार जीवन शिक्षा में घर, विद्यालय और धर्म की भूमिका

इकाई 5
जीवन में नैतिक मूल्यों और व्यक्तित्व का विकास

विशेषज्ञ समिति (मूल)

प्रो. पी.के. गांधी
जामिया मिलिया इस्लामिया,
नई दिल्ली

डॉ. डी.के. दास
आर.ए. कॉलेज ऑफ सोशल वर्क, हैदराबाद

डॉ. पी.डी. मैथ्यू,
भारतीय सामाजिक संस्थान,
नई दिल्ली

डॉ. एलेस वड़वुम्मथला,
सी.बी.सी.आई.सेण्टर, नई दिल्ली

प्रो. ग्रेशियस थॉमस,
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. ए.पी.बर्नबास (सेवानिृत्त)
आई.आई.पी.ए.
नई दिल्ली

डॉ. रंजना सहगल,
इंदौर स्कूल ऑफ सोशल वर्क, इंदौर

डॉ. रमा वी. बारू
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

डॉ. जेरी थॉमस
डॉन बास्को
गुवाहटी

प्रो. सुरेन्द्र सिंह,
कुलपति
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ
वाराणसी

प्रो. ए.बी. बोस (सेवानिवृत्त)
सतत् शिक्षा विद्यापीठ
इग्नू नई दिल्ली

प्रो. के.के. मुखोपाध्याय
दिल्ली विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. ए.आर.खान
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. आर.पी. सिंह
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. ऋचा चौधरी
डॉ. बी.आर.अम्बेडकर कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. प्रभा चावला,
इग्नू, नई दिल्ली

विशेषज्ञ समिति (संशोधन)

प्रो. सुषमा बत्रा
समाज कार्य विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. आर.आर. पाटिल
समाज कार्य विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

डॉ. बीना एन्थोनी रेजी
अदिति महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. संगीता शर्मा धोर
डॉ. भीम राव अम्बेडकर कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. ग्रेशियस थॉमस
समाज कार्य विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. रोज़ नेम्बियाकिम
समाज कार्य विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. सौम्या
समाज कार्य विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. जी. महेश
समाज कार्य विद्यापीठ, इग्नू नई दिल्ली

डॉ. सायन्तनी गुइन
समाज कार्य विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम निर्माण दल (मूल)

इकाई लेखक

इकाई 1 एवं 2 डॉ. शुभाकांत महापात्र एनओएस, नई दिल्ली

इकाई 3 प्रो. तरेसा चाको, कल्लूर हाऊस, कोचीन

इकाई 4 एवं 5 प्रो. मैरीमैथ्यू, संतोष नगर, त्रिवेन्द्रम

विषय संपादक

प्रो. थॉमस कलम,
सेंट जोहन्स मेडिकल कॉलेज,
बंगलौर

परामर्शदाता, इग्नू, नई दिल्ली

भाषा सम्पादक (अंगेजी)

प्रो. कुसुम चोपड़ा,
जे.एन.यू., नई दिल्ली

खण्ड सम्पादक एवं

पाठ्यक्रम संयोजक

प्रो. ग्रेशियस थॉमस,
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम निर्माण दल (संशोधन)

इकाई लेखक

इकाई 1 एवं 2 डॉ. शुभाकांत महापात्र एनओएस, नई दिल्ली

इकाई 3 प्रो. तरेसा चाको, कल्लूर हाऊस, कोचीन

इकाई 4 एवं 5 प्रो. मैरीमैथ्यू, संतोष नगर, त्रिवेन्द्रम

विषय संपादक	खंड संपादक	कार्यक्रम एवं पाठ्यक्रम संयोजक	भाषा संपादक (हिंदी)
डॉ. नीता कुमारी अम्बेडकर कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय	डॉ. सायन्तनी गुइन, इग्नू, नई दिल्ली	डॉ. सायन्तनी गुइन, इग्नू, नई दिल्ली	डॉ. नीतू, शिक्षा विभाग, नई दिल्ली।

मुद्रण निर्माण

अक्टूबर, 2020

© इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, 2020

ISBN -81-

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफ (मुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय के बारे में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदानगढ़ी, नई दिल्ली–110068 से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, समाज कार्य विभाग द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर कम्पोजिंगः

पाठ्यक्रम परिचय

'परिवार स्थापन में समाज कार्य' पाठ्यक्रम में आपका स्वागत है। परिवार समाज की मूल इकाई है। परिवार में बालक पैदा होते हैं, उनकी देखभाल की जाती है, पालन–पोषण किया जाता है और उन्हें सम्पूर्ण जीवन के लिए शिक्षित किया जाता है। समाज में परिवार जीवन शिक्षा सामाजिक जीवन के भाग के रूप में विद्यमान है। तेजी से बदलते सामाजिक परिदृश्य में तीव्र अनुभूत आवश्यकता और सार्वजनिक माँग पर परिवार जीवन शिक्षा की लोकप्रिय अवधारणा ने शिक्षा के एक क्षेत्र के रूप में मुकाम प्राप्त कर लिया है।

इस पाठ्यक्रम में चार खंड हैं। पहला खंड **'परिवार जीवन शिक्षा'** है। यह खंड परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में विभिन्न एजेंसियों की भूमिका के साथ–साथ परिवार जीवन शिक्षा की अवधारणा, अर्थ और महत्व का व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करता है। परिवार जीवन शिक्षा में विभिन्न एजेंन्सियों की भूमिका की पहचान करने के अतिरिक्त, यह खंड परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने की प्रविधियों के बारे में भी बताता है। व्यक्ति विकास के सिद्धांत, व्यक्तित्व के प्रकार, नैतिक मूल्यों का अर्थ और व्यक्तित्व और नैतिक मूल्यों के बीच सम्बन्धों पर चर्चा की गयी है।

खंड दो **'यौन स्वास्थ्य शिक्षा'** के बारे में है। यह खंड आपको यौन स्वास्थ्य शिक्षा की अवधारणाओं से परिचित कराएगा। इस खंड में एक पुरूष तथा महिला में अंतर जैविक अन्तर और सांस्कृतिक 'प्रकार, दोनों लिंगों की अद्वितीयता और अंतर और अंतरों' के बावजूद एक पुरूष तथा महिला की समानता के आंकलन का भी वर्णन किया गया है। यौन स्वास्थ्य शिक्षा का महत्व और यौन स्वास्थ्य शिक्षा के बारे में जागरूकता उत्पन्न करने में विद्यालय के अतिरिक्त, मीडिया की भूमिका, यौन स्वास्थ्य शिक्षा के महत्व का भी इस खंड में वर्णन किया गया है।

खंड तीन '**परिवार कल्याण के कार्यक्रम**' के बारे में है। इस खंड में, आप महत्वपूर्ण अवधारणाओं जैसे परिवार संरचना, गतिविधियाँ और सम्बन्ध, पारिवारिक गतिकी, भारतीय परिवारों को प्रभावित करने वाले सामाजिक परिवर्तन परिवारों में समस्याएँ और अन्तःक्षेप रणनीतियाँ, भारतीय परिवारों के संदर्भ में नीतियाँ और कार्यक्रम के बारे में समझेंगे। इस खंड में परिवार नियोजन प्रविधियों और गर्भपात के चिकित्सीय रूपों के बारे में भी चर्चा की गयी है।

खंड 4 '**वैवाहिक जीवन में प्रमुख समस्याएँ**' के बारे में है। यह खंड तलाक, अलगाव और प्रवास के मनो–सामाजिक प्रभावों के बारे में वर्णन करता है। इस खंड में विवाह, दहेज और दहेज मृत्यु से सम्बन्धित कानूनी मुद्दों की व्याख्या की गई है। इस खंड में घरेलू हिंसा के कारणों तथा प्रभाव की भी विवेचना की गई है।

यह पाठ्यक्रम आपको परिवार स्थापन में परिवार जीवन शिक्षा और समाज कार्य की एक व्यापक समझ प्रदान करेगा।

खंड 1 का परिचय

'परिवार स्थापन में समाज कार्य' पाठ्यक्रम में आपका स्वागत है। इस पाठ्यक्रम के पहले खंड में परिवार जीवन शिक्षा की संकल्पनाएँ, अर्थ और महत्त्व का वर्णन किया गया है। यह खंड परिवार शिक्षा प्रदान करने तथा जीवन में नैतिक मूल्यों के विकास में घर, स्कूल और धर्म की भूमिका की भी चर्चा करता है। इस खंड में पांच इकाइयाँ हैं। इस खंड की **इकाई 1** में परिवार जीवन की संकल्पना पर चर्चा की गई है। इसमें विवाह और परिवार के अर्थ और महत्त्व को स्पष्ट किया गया है। **इकाई 2** परिवार जीवन शिक्षा की संकल्पना एवं अर्थ से संबंधित है। यह इकाई परिवार जीवन शिक्षा के विभिन्न प्रकारों का मूल्यांकन भी करती है। **इकाई 3** परिवार जीवन शिक्षा के महत्त्व का वर्णन करती है। यह इकाई परिवार जीवन शिक्षा के मुख्य उद्देश्यों तथा इसमें व्यक्ति, परिवार और समुदाय की भूमिका का वर्णन करती है। **इकाई 4** पारिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में घर, स्कूल और धर्म की भूमिका का वर्णन करती है। **इकाई 5** व्यक्तित्व और जीवन में नैतिक मूल्यों के विकास का वर्णन करती है। यह इकाई व्यक्तित्व की प्रकृति, व्यक्तित्व विकास के सिद्धांत, नैतिक मूल्यों, अर्थ तथा व्यक्तित्व एवं नैतिक मूल्यों के बीच संबंधों का भी वर्णन करती है।

इस खंड की पाँच इकाइयाँ परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में विभिन्न एजेंसियों की भूमिका के साथ परिवार जीवन शिक्षा की संकल्पना, अर्थ और महत्त्व पर व्यापक विचार प्रस्तुत करती हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि यह खंड परिवार जीवन शिक्षा की अनिवार्यताओं का वर्णन करता है।

इकाई 1 परिवार जीवन की संकल्पना

*प्रो. ग्रेशियस थॉमस

रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 परिवार और विवाह की सामाजिक संस्थाएँ

1.3 संयुक्त राष्ट्र घोषणाओं में परिवार की संकल्पना

1.4 भारतीय संदर्भ में परिवार जीवन

1.5 परिवार जीवन शिक्षा में विभिन्न प्रकार के मूल्यों के महत्त्व

1.6 सारांश

1.7 शब्दावली

1.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई में परिवार जीवन के बुनियादी पहलुओं के बारे में पढ़ाना व जानना शामिल है। "परिवार जीवन शिक्षा का परिचय" नामक इस पाठ्यक्रम में परिवार से संबंधी कुछ मूलभूत संकल्पनाओं को स्पष्ट करना एक प्रमुख उद्देश्य है। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

* प्रो. ग्रेशियस थॉमस, समाज कार्य विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली।

- समाज की मूल इकाई के रूप में परिवार की संकल्पना को समझ सकेंगे;
- परिवार का अर्थ, विवाह और संबंधों के महत्त्व से अवगत हो सकेंगे, और
- पारिवारिक मूल्यों और बंधन की संकल्पना को जान सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

कई सामाजिक विचारक परिवार को समाज की आधारशिला मानते हैं। अनंत काल से एक वयस्क पुरुष का वयस्क महिला के साथ विवाह परिवार की रचना का आधार रहा है। यही परिवार है, जिसमें बच्चे पैदा होते हैं, उनका लालन–पालन होता है और उन्हें शिक्षा दी जाती है। वर्षों से विश्वव्यापी समाज, परिवार–प्रतिमानों में होने वाले परिवर्तनों के साक्षी हैं। प्रगति और सुधारों के माध्यम से जीवन शैलियों में आमूल परिवर्तन होते आ रहे हैं। वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद के वर्तमान परिदृश्य से परिवार और घरों के रूपों में विविधता आई है। इन परिवर्तनों के साथ–साथ सामाजिक समस्याएँ और व्यक्तिगत परेशानियाँ निरंतर बढ़ती जा रही हैं। पिछली पीढ़ियों ने परिवार जीवन के क्षेत्र में हो रहे परिवतों और कई उन्नत देशों के जीवन शैलियों की कल्पना भी नहीं की होगी। कई देशों के लोग वर्तमान परिवार जगत को द्वितीय विश्व युद्ध से पहले के परिवार जगत से बहुत भिन्न रूप में देखते हैं। फिर भी सामाजिक संगठनों की बुनियाद के रूप में परिवार और विवाह की संस्थाओं का अस्तित्व विद्यमान है। इस इकाई में हम भारतीय संदर्भ में सामाजिक जीवन की प्राथमिक संस्थाओं के रूप में विवाह की संकल्पना और उसके अर्थ के संबंध में विस्तार से चर्चा करेंगे। हालांकि कई विदेशी समाजों में परिवार के स्वरूप में कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन देखे जा सकते हैं फिर भी अधिकांश भारतीय पारंपरिक पारिवारिक जीवन, संस्कृति और परंपराओं से बंधे हैं। यह आने वाली कई पीढ़ियों तक लम्बे समय तक बना रहेगा। अतः परिवार जीवन के बुनियादी पहलू और अपने समाज के उत्तरदायी नागरिक बनाने में इसकी सम्पन्नता की जाँच करना संगत होगा।

1.2 परिवार और विवाह की सामाजिक संस्थाएँ

परिवार किसी भी समाज की मूलभूत इकाई होती है। परिवार के अंतर्गत माता–पिता और बच्चे आते हैं। माता–पिता व बच्चों के साथ परिवार जीवन में स्थिरता सारे मानव समाज और उसके दीर्घ–काल तक बने रहने का मूल तत्व/सार है। विश्व भर के हर समाज में इस आधारभूत इकाई को सुरक्षित रखने के लिए विवाह की पवित्रता, उसका स्थायित्व, परस्पर स्नेह प्रमुख शक्तियाँ हैं। कई समाजों और संस्कृतियों में किसी भी अन्य विचार को अत्यधिक महत्त्व देने वाले व्यक्तिगत अधिकारों की प्रमुखता के संबंध में काफी चर्चाएँ/विचार–विमर्श हो रहे हैं। पारस्परिक दायित्वों पर आधारित समाज के जनहित को संवर्धित करने के प्रयास किए जा रहे हैं और व्यक्तिगत अधिकारों पर बल देना धीरे–धीरे कम होता जा रहा है। विवाह और परिवार के परंपरागत और प्राचीनतम संस्थानों पर इसके क्या नकारात्मक परिणाम होंगे इस पर विचार किए बिना उपभोक्तावाद और वैश्वीकरण के इस युग में यह प्रक्रिया व्यक्तिगत आजादी और पसंद पर पूर्ण बल की ओर अग्रसर हो रही है।

ऐसी प्रक्रिया के सामुदायिक जीवन और शांति व स्थिरता बनाए रखने के पारस्परिक बाध्यताओं और दायित्वों पर आधारित राष्ट्रों की दीर्घकालिक उत्तर जीविता पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़ेंगे।

मूलभूत संकल्पनाएँ

इन महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य सामाजिक संस्थाओं पर आगे चर्चा करने से पहले यह उपयुक्त होगा कि हम परिवार, नातेदारी (सगोत्रता) और विवाह की आधारभूत संकल्पनाओं को परिभाषित कर लें।

परिवार

कई समाजशास्त्री परिवार को समाज की आधार–शिला मानते हैं। जार्ज पीटर मरडाक के अनुसार, परिवार एक सामाजिक समूह है सामान्य निवास, आर्थिक सहयोग और प्रजनन इसकी विशेषताएँ हैं। इसमें दोनों लिंगों के वयस्क शामिल

हैं, इनमें से कम से कम दो सामाजिक रूप से अनुमोदित लैंगिक संबंधों को बनाए रखते हैं, अपने या गोद लिए एक या अधिक बच्चे हो सकते हैं।

इस परिभाषा के अनुसार, परिवार के सदस्य एक साथ रहते हैं, संतति पैदा करते हैं, मिल जुल कर काम करते हैं और एक साथ संसाधनों को जुटाते/एकत्रित करते हैं। वयस्क पुरुष व महिला अपने समाज विशेष के मूल्यों के अनुसार लैंगिक संबंध स्थापित करते हैं और सन्तान पैदा करते हैं।

एंथोनी गिडेन्स के अनुसार : परिवार व्यक्ति का वह समूह है जो प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा होता है और जिसके वयस्क सदस्य बच्चों की देखरेख का दायित्व लेते हैं। कन्साइज ऑक्सफोर्ड शब्दकोश में परिवार का वर्णन "माता–पिता व बच्चों के समूह'' या घर के सदस्य विशेष के रूप में माता–पिता व उनके बच्चे के रूप में किया गया है। द यूनाइटेड स्टेट्स ब्यूरो ऑफ सेन्सिज परिवार को दो या दो से अधिक लोगों जो रक्त विवाह अथवा गोद लिए जाने के द्वारा संबंधित है और साथ रहते हैं, के रूप में परिभाषित करता है।

द बेनियर इंस्टीटयूट ऑफ फैमिली (2004) परिवार को परम्परागत प्राणि रचना शास्त्रीय और समाजशास्त्रीय परिभाषाओं में संबद्धता के रूप में परिभाषित करता है।

परिवार दो या दो से अधिक लोग जो पारस्परिक सहमति, जन्म और/अथवा गोद लिए जाने के बंधनों द्वारा एक साथ बंधे है, और जो एक साथ, विभिन्न जिम्मेदारियों का निर्वाह करते हैं, का एक संयोजन है। इनमें से कुछ जिम्मेदारियाँ हैं :

- सदस्य की शारीरिक जीविका रक्षा निर्वाह और देखभाल
- जन्म देने अथवा गोद लेने के द्वारा नए सदस्यों को जोड़ना
- बालकों का समाजीकरण
- सदस्यों का सामाजिक नियंत्रण

- उत्पादन, उपभोग, वस्तुओं और सेवाओं का वितरण, और
- प्रेम का प्रभावी पोषण (कराकेर, मैग एलिक्स एंड ग्रोचॉवस्की, जेनेट आर, 2006)

सगोत्रता/रिश्तेदारी

सगोत्रता का शब्दकोश में अर्थ है "रक्त संबंधी"। सगोत्रता दो प्रकार की हो सकती है : (i) वैवाहिक संबंधों के जरिए (ii) पीढ़ी की वंशावली के जरिए जो रक्त संबंधियों को जोड़ती है जैसे कि माता और पिता की ओर से, सहोदर, संतति इत्यादि। इस तरह सगोत्रता के अंतर्गत या तो आनुवंशिक वंशावली होती है या विवाह से प्रारंभ वंशावली होती है। संक्षेप में परिवार रिश्तेदारों का समूह है।

जाति और नस्ल के मामले में बालक अपने माता–पिता की सामाजिक स्थिति (स्टेटस) को अपने जन्मोपरांत तुरन्त प्राप्त कर सकता है। वंशानुगतता अथवा उत्तराधिकार के मामले में बालक अपने माता–पिता की सामाजिक स्थिति (स्टेटस) को कुछ समय पश्चात प्राप्त करता है। असे प्रायः 'विलम्बित सम्बन्ध' की प्रक्रिया के रूप में उल्लेखित किया जाता है। आगे चलकर बालक अपने आगामी जीवन में कुछ स्वतः अर्जित सामाजिक स्थितियाँ भी प्राप्त कर सकता है जो उसके माता–पिता की सामाजिक स्थिति से अलग हो सकती है। इन सामाजिक स्थितियों की प्राप्ति से संबंधित लाभ अथवा हानि बालक को अधिकतर अपने अभिभावक से प्राप्त होती है। उदाहरणतया, एक उच्च वर्ग के व्यक्ति का पुत्र, अकादामिक क्षेत्र में उपलब्धियाँ अर्जित करने में, एक निम्नवर्गीय व्यक्ति के पुत्र की तुलना में अधिक लाभ की स्थिति में रहता है। यह मुक्त वर्ग की व्यवसायगत् नियुक्ति के मामले में भी सत्य है। इसे प्रायः 'तरल सम्बन्ध के रूप में उल्लेखित किया जाता है। यहाँ उपलब्धि का कारक पूणरूपेण सम्बन्ध के कारक का निषेध नहीं करता (शंकरराव, सी एन 2001)।

यह सत्य है कि बालक की अधिसंख्य महत्त्वपूर्ण सामाजिक स्थितियाँ (स्ट्रेटस) रिश्तेदारी के कारक पर निर्भर हैं। अधिकतम मामलों में, नागरिकता सम्बन्ध, धार्मिक संबद्धता और सामुदायिक सदस्यता, अभिभावक की पहचान पर निर्भरता का मामला है। अभिभावक से ही बालक को वर्ग अथवा जाति की सामाजिक स्थिति मिलती है।

रिश्तेदारी के बंधन के कारण, बालक न केवल वृहद् समाज में, वरन् परिवार में भी, अपनी सामाजिक स्थिति (स्टेट्स) को प्राप्त करता है। बालक पुत्र अथवा पुत्री की सामाजिक स्थिति को प्राप्त करता है। अभिभावक से रिश्तेदारी के संबंध में वह एक पोता, भतीजा, एक भाई, एक चचेरा भाई अथवा एक पुत्र हो सकता है। रिश्तेदारी संबंधों से परस्परिक अधिकार और कर्त्तव्य तय होते हैं। यहां तक कि आधुनिक समाज में भले ही विस्तारित रिश्तेदारी बंधन नहीं है लेकिन नजदीकी पारिवारिक बंधन सामाजिक रूप से महत्त्वपूर्ण है। कुछ समुदायों में अधिकांशतः सामाजिक जीवन इनसे निर्देशित होता है। (शंकर राव, सी.एन. 2001)

विवाह है...

विवाह क्या है? यह एक संघ है, सबसे पहले। यह एक एकजुट है, दो दिल एक हो रहे हैं। विवाह भाईचारा और मित्रता है। यह एक साथ होना, एक साथ काम करना, एक साथ काम करना, और इसे किसी अन्य तरीके से नहीं करना है।

विवाह समझ है। यह दूसरे की गलती को अनदेखा करना है। यह हर तरह से दूसरे के समय, भावनाओं और इच्छाओं पर विचार करता है।

विवाह देखभाल करना है। यह चिंता करना है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि अन्य व्यक्ति की अच्छी तरह से देखभाल की जा रही है, चाहे यह आपकी पहुँच से बाहर है। विवाह दया है। यह बच्चे के शब्दों को कह रहा है और उन शब्दों को कार्रवाई में डाल रहा है।

विवाह समर्थन है। यह आपके साथी को, उनके प्रोजेक्ट में, अच्छे और बुरे समय में, आपके प्रयासों का समर्थन कर रहा है। यह उन्हें नैतिक समर्थन, भौतिक सहायता, प्रार्थना समर्थन, चारों ओर से समर्थन दे रहा है। यह उन्हें खुश कर रहा है और जब वे बुरा महसूस करते हैं तो उन्हें प्रोत्साहित करते हैं। विवाह दूसरे को उठाने के लिए छटपटा रहा है। दूसरे के कमज़ोर होने पर यह मजबूत होता है। विवाह अपने साथी को नुकसान, शारीरिक और भावनात्मक से बचाना है।

विवाह प्रावधान है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि आपका हिस्सा उनकी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए कर रहा है। यह आपके हिस्से के बोझ को खींच रहा है। विवाह दिन–ब–दिन कठिन काम है। यह आपके साथी की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए आपकी पहुँच से बाहर जा रहा है, भले ही आप ऐसा महसूस न करें। विवाह एक मदद के उधार देना है।

विवाह एक त्याग है। आप जिसे प्यार करते हैं, उसके लिए यह खुद को देना है। यह अपने साथी को खुश करने के लिए अपने खुद के विचारों या इच्छाओं को छोड़ने के लिए तैयार है। यह देना और देना और फिर से देना है। विवाह समर्पण, झुकना, एक साथ पिघलाव है। विवाह अतिरिक्त दूरी तय करना है। विवाह करुणा है। यह अपने लिए दूसरे की खुशी को प्राथमिकता देता है।

विवाह देना और लेना है। शादी मोड़ ले रही है; यह एक तरफा नहीं है। विवाह प्रस्तुतिकरण है। यह दूसरे व्यक्ति को मौका दे रहा है शादी एक दूसरे को जीने और प्यार करने और मदद करने वाली है। विवाह एक दूसरे से सीख रही है। विवाह विनीत है।

विवाह खुले विचार वाली है। विवाह दूसरे के लिए चलना है। विवाह सुनना और समझना है।

बुरे समय के साथ–साथ अच्छे के लिए भी विवाह हो रहा है। विवाहित प्रेम अच्छे और बुरे दोनों के लिए है, चाहे परीक्षा कितनी भी कठिन या मुश्किल क्यों न हो।

वैवाहिक प्यार कभी उम्मीद नहीं खोता। यह हमेशा वहाँ है, हमेशा भरोसेमंद, हमेशा दूसरों को प्यार और आराम देने के लिए हमेशा तैयार रहें। विवाह छोटी चीज़ों को पारित करने के लिए सीख रहा है।

विवाह ईमानदारी और खुले तौर पर संवाद करना है। यह आपके दिल और गहरे विचारों को विनम्रतापूर्वक साझा करने के लिए तैयार है। विवाह एक साथ बात करना, प्रार्थना करना, चर्चा करना और सहमत होना है। विवाह दूसरे की बातों को अनदेखा करके आपको बीच में नहीं आने देता, बल्कि एक रास्ता ढूंढता है; यह समाधान बनाता है। विवाह हाथ से हाथ मिलाकर, दिल से दिल तक साथ देना है।

विवाह खोज है। यह एक–दूसरे की खोज, एक–दूसरे के बारे में सीखना और सभी मजेदार बातें जो आप कहते और करते हैं। विवाह एक अच्छा सेंस ऑफ ह्यूमर है। यह एक साथ आराम और आनंद लेना है।

विवाह सम्मान है। विवाह एक–दूसरे पर विश्वास है। विवाह दूसरे को स्वीकार करना जैसे वे हैं। विवाह यह एहसास है कि आप अपने साथी के बिना अधूरे हैं।

विवाह आपके लिए अब तक का सबसे संतोषजनक और मजबूत अनुभव हो सकता है।

डेविड ब्रांट बर्ग

विवाह

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के अनुसार "विवाह महिला व पुरुष के एक साथ रहने और अक्सर बच्चे उत्पन्न करने के लिए एक कानूनी संगम है। ''इस कानूनी संगम को समाज, राज्य और धर्म (उनके लिए जो धर्म में विश्वास रखते हैं और उसका अनुसरण करते हैं) की मंजूरी प्राप्त होती है। विवाह पुरुष और महिला का होता है न कि लड़के और लड़की का। प्रत्येक समाज (राष्ट्र) के निर्धारित मूल्य होते हैं जो

वयस्काव्यवस्था को परिभाषित करते हैं। भारत में महिला व पुरुष के विवाह की निर्धारित उम्र क्रमशः 18 वर्ष और 21 वर्ष है। विवाह एक सामाजिक संस्था है जो विवाहित पुरुष व महिला को पति–पत्नी के रूप में एक साथ रहने की अनुमति प्रदान करती है। यह आशा की जाती है कि पुरुष व महिला मात्र एक साथ न रहे बल्कि एक साथ रहते हुए बच्चे भी पैदा करें। एंथनी गिडसंज के अनुसार, 'विवाह को सामाजिक रूप से स्वीकृति और दो वयस्कों के बीच अनुमोदित यौन संगम के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।'

परिवार, सगोत्रता और विवाह के बीच अंतःसंबंध

विवाह पर आधारित परिवार समाज की मूलभूत इकाई है। सुखी एवं सफल विवाह और परिवार विद्यमान समुदायों की नींव है।

पुरुष व महिला विवाह कर लेने के उपरांत एक दूसरे के सगोत्र (रिश्तेदार) बन जाते हैं।

यह विवाह बंधन विभिन्न रिश्तेदारों को एक साथ जोड़ता है। माता–पिता, दादा–दादी, नाना नानी, बहन, भाई, चाचा–चाची और अन्य रक्त संबंधी विवाह के जरिए साथी (पति/पत्नी के रिश्तेदार बन जाते हैं। विवाह महिला और पुरुष के बीच एक स्थायी व पुष्ट बंधन है जो शेष जीवन के लिए पति–पत्नी बन जाते हैं। यह वैवाहिक मिलन उनके लिए बच्चों के जन्म और स्थायी एवं स्नेहपूर्ण (देखरेख करने वाले) परिवेश को सुनिश्चित करता है।

पारिवारिक संबंध व्यापक सगोत्र समूहों में पाए जाते हैं। हमें परिवार के सदस्यों की संख्या के आधार पर प्रायः परिवारों के दो सामान्य रूप देखने को मिलते हैं (i) मूल परिवार और (ii) विस्तृत या संयुक्त परिवार। .

मूल परिवार में माता–पिता और बच्चे (अपने या गोद लिए हुए (दत्तक) होते हैं। विस्तृत परिवार या संयुक्त परिवारों में अपेक्षाकृत ज्यादा सदस्य हो सकते हैं जो

रक्त संबंधी होते हैं जैसे दादा–दादी, माता–पिता, माता–पिता के भाई और बहन, उनके पति/पत्नी, बच्चे, नाती इत्यादि। भारत जैसे तेज गति से परिवर्तनशील समाज भारत में मूल परिवार शहरी क्षेत्रों में आम है जबकि संयुक्त परिवार प्रायः गाँवों में ज्यादा पाए जाते हैं। अधिकांश मामलों में ऐसा देखा गया है कि माता–पिता अपने विवाहित बच्चों के साथ रहते हैं। फिर भी भारत के शहरी केंद्रों में वृद्धाश्रमों की दो कारणों से वृद्धि हुई है (i) छोटे परिवार की प्रवृत्ति (कम बच्चे पैदा करना) और (ii) नौकरी की तलाश या पति/पत्नी नौकरी के कारण अपने–अपने मूल स्थानों से देश या देश से बाहर बच्चो (वयस्कों) का स्थानांतरण।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) "परिवार'' को परिभाषित कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.3 संयुक्त राष्ट्र घोषणाओं में परिवार की संकल्पना

संयुक्त राष्ट्रों द्वारा 1948 में मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा मानवता की जीत थी। यह घोषणा व्यक्ति की गरिमा पर आधारित है और विभिन्न देशों के व्यक्तियों और अपने प्रत्येक सदस्य के लिए सम्मान को संवर्धित करती है व उसकी रक्षा

करती है। मानवाधिकारों की यह घोषणा आगामी सभी मानवाधिकार सभाओं और दस्तावेजों के लिए प्राधिकृत आधार है। पूर्ण आयु (वयस्क) के किसी भी पुरुष और महिला के लिए विवाह के अधिकार को मौलिक मानव अधिकार के रूप में परिभाषित किया गया है। परिवार को समाज के सहज और मौलिक समूह/इकाई के रूप में परिभाषित किया गया है और वह समाज तथा राष्ट्र द्वारा सुरक्षा प्रदान किए जाने का अधिकार रखता है। घोषणा के प्रस्तावना के प्रारंभिक वाक्य है कि ये मानव अधिकार ''अन्तर्निहित (सहज)'' और ''अदेय'' है और हमारी मानव गरिमा से बंधे हैं। यह नोट किया जाए कि:

- इन मानव अधिकारों का आधार मानव गरिमा है।
- इन्हें राजनैतिक इच्छा या बहुमत के निर्णयों से बदला नहीं जा सकता।
- ये प्राकृतिक कानून, राजनीति से ऊपर (पहले) और राजनीति से अलग हैं।
- ये राष्ट्रीय कानूनों से ऊपर है और कोई भी राष्ट्र ऐसे कानून नहीं बना सकता जो इसमें बदलाव कर सके।
- यह संयुक्त राष्ट्र घोषणा सभी मानव अधिकार दस्तावेजों का स्रोत है और जीवन विज्ञान पर आधारित प्राकृतिक परिवार की सुरक्षा करती है।
- वयस्क पुरुषों और महिलाओं को विवाह करने और परिवार बनाने का अधिकार है। (अनु 16)
- परिवार समाज की मौलिक इकाई है और विशेषाधिकारों और राजनीतिक सुरक्षा का हकदार है।
- परिवार और बच्चों के अधिकारों संबंधी सूत्रों को यूरोपीयन को कोर्ट ऑफ ह्यूमन राइट्स (ई सी एच आर 1950) और इंटरनेशनल कोवेंनेट ऑन इकोनोमिक, सोशियल एंड कल्चरल राइट्स (1966) जैसे कानूनी रूप से बाँधने वाली कन्वेशनों में दोहराया गया है।

परिवार व्यक्ति की पूर्ण शान के राह में उसकी मान्यता व विकास के लिए उत्कृष्ट, सर्वाधिक अनुकूल और अद्वितीय स्थान है। परिवार में ही मानव विकास के प्रथम

प्रयासों की पहल की जाती है और शिक्षा और मानव प्रोन्नति की प्रक्रिया यहीं से शुरू होती है। जिस व्यक्ति की परिवार में यह प्रारंभिक दिशा विन्यास नहीं मिलता उसे मानव अपेक्षित पूर्णता प्राप्त करने की राह में बहुत बाधाएँ आती है जिसके कारण वह व्यक्ति कहलाता (ती) है।

परिवार समाज का आधार है। समाज में व्यक्तियों के मानव विकास के लिए मानव अधिकारों के प्रति सम्मान होना जरूरी है। समाज में व्यक्तियों के मानवीय विकास के लिए मानवाधिकारों के प्रति सम्मान अनिवार्य। इन मानव विकास मूल्यों में जीवन स्वास्थ्य, ज्ञान, कार्य, समुदाय, धर्म और संस्कृति शामिल हैं। परिवार व्यक्तियों का लघुतम समुदाय है। परिवार के अनिवार्य मूल्य केवल तभी प्राप्त किए जा सकते हैं जब महिला और पुरुष दोनों विवाह में एक दूसरे को पूर्णतः समर्पित कर दें। स्नेह व प्यार के समुदाय को स्वीकार कर लें। प्रजनन/सृष्टि में नवजीवन के उपहार को पूरी तरह स्वीकार करने के इच्छुक हों और संतान की शिक्षा का दायित्व लेने के लिए तैयार हो।

माता–पिता बच्चे को ऐसा घर (माहौल) प्रदान करते हैं जिसमें बच्चा पल–बढ़ सके। वे सभी अधिकार जो व्यक्ति के रूप से विकसित होने के लिए प्राकृतिक रूप से अनिवार्य है, वे अत्यधिक प्रभावी ढंग से परिवार में वास्तविक बन जाते हैं। अपने स्वरूप में ही परिवार अधिकारों का विषय, मानव समाज का बुनियादी अवयव और पूर्ण मानव विकास में एक सर्वाधिक अनिवार्य शक्ति है। परिवार की सामाजिक मध्यस्था के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। परिवार "जीवन का आश्रय–स्थल'' है। यह मात्र मानव यथार्थता न होकर उससे कही अधिक है, यह वह स्थान है जहाँ अस्मिता के साथ व्यक्ति अपने लिए रह सकता है।

यदि परिवार मानवाधिकारों द्वारा सुरक्षित व विशेषाधिकार युक्त है, तो वे हर समय व हर स्थान पर वैध है। समाज की उत्तरजीविता विवाह और परिवार की ठोस संस्था पर निर्भर करती है। जब परिवार की परंपरागत संरचना समाज से लुप्त हो जाएगी तो लोग इस बात से अनभिज्ञ होंगे वे किसके बारे में बात कर रहे हैं।

अतः परिवार को किसी भी तरह से अपना विशेषाधिकृत राजनीतिक समर्थन नहीं खोने देना चाहिए। यदि यह समर्थन खो जाएगा तो समाज भीतर से ही नष्ट हो जाएगा। परिवार की ऐतिहासिक संकल्पना को लुप्त नहीं होने देना चाहिए। यदि ऐसा हो जाता है तो इस विद्यमान संकल्पना को बनाए रखना/जीवित रखना बहुत कठिन हो जाएगा।

राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर परिवार की संकल्पना को पुनः परिभाषित करने के प्रयास किए गए। कानूनी न्याययिक तथा संसदीय क्षेत्र में भी इस संदर्भ में प्रयास किए गए हैं। सार्वजनिक विचार–विमर्शों से भी ऐसे प्रयास को बल मिला। या समझना जरूरी है कि राजनीतिक बहुमत मानव अधिकारों को नहीं बदल सकती। वे अदेय और जन्मजात हैं। मानव की गरिमा के फलस्वरूप है न कि कुछ राजनीतिक निकायों द्वारा प्रदान किए गए हैं। मानवाधिकार वे अधिकार हैं जो सभी को प्राप्त होते हैं चाहे वह कोई भी हो और कहीं भी निवास करता हो।

परिवार को पुनः परिभाषित करने के प्रयास

कई देशों में कई ऐसे प्रभावी समूह व व्यक्ति हैं जो "परिवार'' की संकल्पना को पुनः परिभाषित करना चाहते हैं। वे इस संकल्पना में (पारंपरिक माता–पिता – बच्चों के परिवार के रूप में समान कानूनी स्तर के साथ) गोद लिए या गोद लिए बिना समलिंगी संगम, अपने या दत्तक बच्चों वाला एकल माता–पिता, विवाह से पैदा हुए बच्चों (विधवा/विधुर को नहीं) दपंत्ति के रूप में सहवास के लिए रहने वालों यहाँ तक कि जानवरों के दत्तक को भी शामिल करना चाहते हैं। इनमें से अधिकांश परिवार संरचना के अंतर्गत अन्यगमन में व्यभिचारी यौन, विवाह–पूर्ण यौन और मात्र आत्म–तुष्टि के लिए यौन के साथियों के अन्य रूप को स्वीकृति देते हैं। निस्संदेह ये सभी सड़कों पर रहने वाले पुरुष के लिए भ्रामक स्थितियाँ हैं।

सामाजिक वैधता का अनिवार्यतः कानूनी वैधता से कोई संबंध नहीं हैं। अल्पसंख्यक समूहों को अपने–आप मानव अधिकारों को दुर्बल बनाने वाले भाग की अनुमति प्रदान नहीं की जानी चाहिए। यह तो स्पष्ट ही है कि कोई भी राजनीतिक अधिसंख्यक या अल्पसंख्यक समूह समाज के सबसे संवेदनशील समूह अर्थात् बच्चों के अधिकारों को परिवर्तित नहीं कर सकता। कुछ छोटे–छोटे देशों के कानून के विचार व मत से सहमत होना उचित नहीं होगा। कानून में प्रत्येक मुद्दों पर सामाजिक प्रचलनों की यथार्थता और बहुमत अवश्य प्रतिबिंबित होना चाहिए। उदाहरण के लिए, नार्वे में अनुमानतः 50 प्रतिशत बच्चे वैवाहिक गठबंधन से पैदा होते हैं। सांख्यिकीय रूप से यह तथ्य मानदंड बन सकता है। कुछ छोटे देशों के प्रभावी समूहों द्वारा तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि कुछ अंतर्राष्ट्रीय अधिकार अपने राष्ट्रीय जनमत और परंपराओं के विरोधी हैं।

बच्चे और उनके "सुरक्षित आश्रय" अर्थात् परिवार को अपनी स्वार्थों और अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकारों की सुरक्षा के लिए राजनीतिक और कानूनी प्रक्रिया में तोड़–मरोड़ नहीं की जानी चाहिए। परिवार क्या, और बच्चों के अधिकारों के बारे में कोई भ्रांति नहीं होनी चाहिए। जो अधिकार बच्चों के हैं वे वयस्कों के नहीं हैं और ये अधिकार वयस्कों के अधिकार से अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। वयस्कों के विवाह करके परिवार बनाने के अधिकारों से हटकर राजनीतिक ध्यान बच्चों के माता–पिता के प्रति अधिकार और स्थायी पारिवारिक जीवन की ओर प्रवृत्त होने से यह परिणाम होगा कि चरम व्यक्तिवादियों को झुकना पड़ेगा।

परिवार का महत्त्व

पारिवारिक सदस्यों की भावात्मक, आर्थिक और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्यक्ति और उनके परिवार विभिन्न संघटनाएँ अपनाते हैं। वाल्ड (2001) न व्यक्ति के लिए विवाह और परिवार की महत्ता को निम्नलिखित कथन में सारतः प्रस्तुत किया है।

- युगल की भावात्मक और आर्थिक सेहत में विवाह करना महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकता है। विवाहित अभिभावक के साथ रहने से बच्चों को बहुत से लाभ और सुरक्षा प्राप्त होती है। जब लोग विवाह का चयन करते हैं तो समाज को लाभ होता है .... व्यस्कों की भवात्मक और आर्थिक सेहत में सुधार होता है, माता–पिता की अपने बच्चों को प्रोत्साहन मिलता है। (कर्राकेर, मैग एलिकस एण्ड ग्रोचॉवस्की जेनेट आर, 2006)।

बालक जैसे ही इस दुनिया में कदम रखता है तो सबसे पहले अपने पारिवारिक सदस्यों से उसका साक्षात्कार होता है। व्यक्ति के लिए परिवार इस संसार में पहली जगह है। बचपन से लेकर प्रौढ़ावस्था तक, एक बालक सबकुछ अपने परिवार से सीखता है। यह वह स्थान है जहाँ नैतिक मूल्य सिखाये जाते हैं और समाज की आध्यत्मिक और सांस्कृतिक विरासत हस्तांतरित होती है। आवश्यकता पड़ने पर पारिवारिक सदस्य सदैव उपलब्ध होते हैं। वे सदैव विभिन्न रूपों में, चाहे आर्थिक हो अथवा भावात्मक एक दूसरे की सहायता करते हैं।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार घोषणा की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.4 भारतीय संदर्भ में पारिवारिक जीवन

समाज परिवारों के छोटे समुदायों का समूह है जो एक साथ रहते हैं और अपने विकास व उत्तरजीविता के लिए एक दूसरे को सहयोग देते हैं। परिवार व्यक्ति का सबसे छोटा समुदाय है जिसमें वयस्क पुरुष और महिला होते हैं जो विवाह की संस्था द्वारा एक साथ रहने, बच्चे उत्पन्न करने उनका पालन–पोषण करने और शिक्षित करने का मुक्त समझौता करते हैं। ऐसे कई कार्य भी होते हैं जिनके लिए माता–पिता को दूसरे परिवारों विशेष रूप से सगोत्र दायरे और समाज से सहायता की ज़रूरत होती है।

परंपरागत भारतीय परिवार में अभी भी "संयुक्त परिवार'' है। जब पुत्र और पुत्रियों का (मातृवंशीय) का विवाह हो जाता है तो वे परिवार को छोड़कर नहीं जाते। वे अपनी पतिध पत्नी और बच्चों के साथ उसी परिवार में रहते हैं। संयुक्त परिवार एक कुटुम्ब की तरह है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी–अपनी भूमिका से अवगत होता है और ज़रूरत के समय अन्य सदस्यों की सहायता और एकता का ख्याल रखता है। बच्चे व नाती–पोते माता/पिता का सम्मान करते हैं और उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। माता/पिता की सत्ता सर्वोच्च होती है। हालांकि भारतीय परिवारों में अधिकांश परिवार पितृवंशीय स्वरूप के हैं लेकिन केरल के नैय्यर और मेघालय के खासी जैसे कुछ ऐसे परिवार हैं जो परंपरागत रूप से मातृवंशीय स्वरूप का अनुसरण करते हैं।

अधिकांश भारतीय घरों में अपने बच्चे के लिए जीवन साथी ढूंढने का दायित्व माता–पिता का ही होता है। इसे प्रायः उनके परम पावन कर्तव्य के रूप में देखा जाता है। ऐसी स्थितियाँ बहुत ही कम ही होती हैं जब युवा अपने जीवन साथी स्वयं चुनते हों। ऐसे विवाह अधिकांशतः कम प्रशिक्षित ग्रामीणों की तुलना में

शिक्षित नगरवासियों में पाए जाते हैं। परिवार नामः विवाह में माता–पिता पुत्रवधूध्दामाद के परिवार की पृष्ठभूमि, उसकी वित्तीय, सामालित धार्मिक और शैक्षणिक प्रस्थिति/सतर को भी ध्यान में रखते हैं। इस तरह विवाह में दो परिवारों और बच्चों की पूर्ण सहभागिता होती है और जो प्रायः विश्वास के साथ अपने माता पिता की पसंद को स्वीकार कर लेते हैं।

बेहतर शिक्षा और नौकरी के अवसरों के प्रभाव स्वरूप और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के संपर्क में आने के फलस्वरूप आज की युवा पीढ़ी अपने माता–पिता के अधिकार (सत्ता, आज्ञा) को आँख मूंदकर स्वीकार नहीं करता। वे अपेक्षाकृत अधिक आजादी और आत्मनिर्भर की खोज में हैं। जीवन साथी चुनने के संदर्भ में आज का युवा अपनी इच्छाओं को व्यक्त करने और अपने निर्णय स्वयं लेने के लिए ज्यादा आजादी चाहता है।

औद्योगीकरण, शहरीकरण, उपभोक्तावाद, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया से संपर्क तथा बेहतर व्यावसायिक और वृत्तिक शिक्षा की उपलब्धता के परिणामस्वरूप, तीव्र गति से बदल रहे सामाजिक परिदृश्य से पारिवारिक जीवन का प्रतिमान भी बदलावों के दौर से गुजर रहा है। ऐसे परिवर्तनों से देश के नगरों और गाँवों को भी प्रभावित हो रहे हैं। इन परिवर्तनों के साथ एक नए प्रकार का पारिवारिक जीवन उभर रहा है जो ज्यादा आत्मनिर्भर है और ज्यादा आत्म–निर्भर बनने के लिए संघर्ष कर रहा है।

पहले की अपेक्षा ज्यादा महिलाएँ शिक्षित हैं। ज्यादा महिलाएँ परिवार व्यवस्था की अपेक्षा परिवार से बाहर नौकरियाँ कर रही हैं। अधिकांश महिलाएँ पहले की अपेक्षा बड़ी उम्र में विवाह करना पसंद करती हैं। महिलाएं अपनी मान–मर्यादा व प्रतिष्ठा के प्रति ज्यादा सचेत हो रही हैं और परिवार तथा समाज में ज्यादा आत्मनिर्भर व जिम्मेदार बनना चाहती हैं। वह पारिवारिक विषयों में बोलने और निर्णय लेने का अधिकार चाहती हैं और अक्सर परिवार के बाहर कैरियर की इच्छा रखती हैं। वस्तुतः भारत में स्थानीय, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तरों पर महिलाओं की राजनीतिक

सहभागिता सहित उनकी सामाजिक स्थितियों को सुधारने के लिए कई कानून बनाए गए हैं।

मूल्य प्रथा

भारत में संपन्न मूल्य प्रथा है। यह परंपरागत मूल्य प्रथा अभी भी महत्त्वपूर्ण है और इसे आसानी से समाप्त (लुप्त) नहीं होने देना चाहिए। हालांकि कई ऐसे प्रभावी समूह और उपभोक्तावाद एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के प्रसार से जुड़े मुद्दे हैं जो लोगों की जीवनशैली को प्रभावित करते हैं लेकिन हमें ऐसे प्रभावों को अपने ऊपर हावी नहीं होने देना चाहिए। 1960 और 1970 के दशकों में उदारवादी विचारधाराओं द्वारा पश्चिमी देशों अमेरीका और आस्ट्रेलिया में मुक्त यौन, लोक हित पर व्यक्तिगत संतुष्टि, नारीवाद और परंपरागत परिवार प्रथा के अस्तित्व पर चुनौतियों के पक्षधरो में बहुत तबाही की गई थी। इसके परिणामस्वरूप विश्व के कई समाजों मे परंपरागत परिवार प्रथा टूटी है। एकल अभिभावक परिवार, बिना विवाह के एक साथ रहने, सहवास, समलिंगी संगम, तलाकशुदा और पिछले विवाह के बच्चों वाले पुरुष/महिला के साथ पुनः विवाह, दादा–दादी का नाती–पोतों के साथ रहना, वृद्ध आश्रमों, अनाथालयों और निराश्रय गृहों का आविर्भाव, नशा करने वाले परिवार, सैक्स उद्योग का प्रसार, सैक्स दुकानें, अश्लील साहित्य और सैक्स पर्यटन जैसे नए मॉडल (प्रतिमान) उभर कर सामने आने लगे। इन सभी पहलों ने संपन्न पुराने रीति–रिवाजों, प्रथाओं, नैतिकता, जीवन–सिद्धांतों, चरित्र और मूल्य प्रथा को काफी क्षति पहुँचाई है।

पारिवारिक जीवन और संबंधों के नए प्रतिमान नई पीढ़ी की अपेक्षाओं और ज़रूरतों की पूर्ति के लिए अनिवार्य है। हो सकता है आज के युवा के सम्मुख पुराने तैयार रिवाजों, प्रथाओं और परिवार के प्रतिमानों को रखना विवेकपूर्ण न हो। फिर भी उन्हें प्रतिष्ठित व शालीन जीवन के सकारात्मक पहलुओं, नैतिकता, मातृत्व, माता–पिता व बड़ों के प्रति सम्मान की भावना, यौन का सही अर्थ व लक्ष्य, विवाह और पारिवारिक जीवन के बारे में शिक्षित करना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण

तथा अनिवार्य है। इससे वे पारंपरिक मूल्यों का आधुनिक समय के साथ सामंजस्य स्थापित करके उनको व्यवहार में लाने के नए तरीके खोज सकेंगे।

मूल्यों को चुनौती देने वाली प्रवृत्तियाँ

विश्वव्यापी समाज अपनी मूल्य प्रथाओं के संबंध में कुछ समूहों, घटनाओं और विकासात्मक पहलुओं से मिलने वाली अनेकों चेतावनियों का सामना कर रहा है जिसका प्रभाव दूरगामा है। यह गर्व का विषय है कि भारतीय लोकतंत्र ऐसे चेतावनियों का मुकाबला करने के लिए तैयार है और अपने संपन्न मूल्यों और संस्कृति तथा परंपरागत प्रथाओं को सुरक्षित रखे (संजोए) हुए है।

जहाँ तक मूल्य–प्रथा के संरक्षण का संबंध है एक हजार मिलियन व्यक्तियों से भी अधिक वाला यह वृहतर लोकतंत्र शेष विश्व को एक प्रतिमान (उदाहरण) प्रस्तुत कर रहा है और उनके लिए आशा की किरण है। पहले की अपेक्षा ज्यादा से ज्यादा महिलाएँ शिक्षा प्राप्त कर रही हैं, नौकरियाँ कर रही हैं. देश के राजनीतिक और सामाजिक–आर्थिक विकास में शामिल हो रही है। निश्चित रूप से महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया ने देश में काफी सकारात्मक व नकारात्मक प्रवृत्तियों को जन्म दिया है। फिर भी अधिकांश जनसमुदाय (अपनी जीवन शैलियों के प्रति अटल है और अपने पारिवारिक मूल्यों, नैतिक मूल्यों और धार्मिक प्रथाओं को जीवित रखे हुए है।

विज्ञान की उन्नति, शिक्षा, मीडिया, प्रौद्योगिकी और पश्चिम जीवन शैलियों के प्रभाव ने भारतीय समाज को भी कुछ प्रभावित किया है जिसके फलस्वरूप पुरातन पद्धति को चुनौती देने वाली गैर–मानव जातीय प्रथाएँ हमारे समाज में भी स्थान ले रही हैं। इससे विवाह पूर्व और विवाहेतर यौन, किशोर गर्भवतियों और गर्भपात, वेश्यावृत्ति, मानसिक बीमारी, नशीले पदार्थों का व्यसन, तलाक, विभिन्न यौन अभिविन्यास एकल माता/पिता वाले घरों, आत्महत्याओं और सुखमृत्यु की माँग जैसे मामलों में वृद्धि हुई है। हांलाकि ये सभी आज के समाज का हिस्सा ही है

फिर भी ये मीडिया के जरिए जो प्रभाव छोड़ते हैं उससे युवा पीढ़ी पथभ्रष्ट हो रही है जिसे समाज के लिए अनर्थकारी माना जा रहा है। इस पतनशील प्रवृत्ति का सामना करने के लिए लोगों को ऐसी सामाजिक समस्याओं के परिणामों के संबंध में शिक्षित करना जरूरी है। यह भी आवश्यक है कि उन विलीन हो रहे मूल्यों को भी रिकार्ड करे जो आने वाली युवा पीढ़ी के लिए स्मरण पत्र का काम करेंगे।

परिवार सर्वव्यापक है

समाजशास्त्री परिवार को एक सर्वव्यापक सामाजिक संस्था के रूप में देखते हैं। यह मानव समाज का अनिवार्य हिस्सा है। सामान्यतः परिवार को व्यक्ति तथा समाज के लिए एक अच्छी चीज़ माना जाता है। व्यक्ति के संदर्भ में उसकी उत्तरजीविता, वृद्धि और समाज में सार्थक रूप से जीवनयापन के लिए पारिवारिक जीवन जरूरी है। समाज की उत्तरजीविता और स्थायित्व परिवार में पैदा हुए और अच्छे नागरिक के रूप में पाले गए मानव पर निर्भर करती है। अतः परिवार के लिए विकल्प प्रस्तुत करने का कोई भी विचार वांछनीय नहीं होगा। हम 1960 के दशक में यूरोप और अमरीका में महिला स्वतंत्रता को लिए आरंभ हए आंदोलनों को देख चुके हैं। कुछ नारीवादी लेखक संस्था के रूप में परिवार की निन्दा करने की हद को लांघ गए। हालांकि ऐसे प्रयासों ने परिवार और उसके परंपरागत दृष्टिकोण की नींव को हिला दिया लेकिन इससे कोई सकारात्मक परिणाम सामने नहीं आया। वास्तविकता तो यह है कि समाज में अव्यवस्था लाने में ही, ऐसे प्रयासों का योगदान रहा जिससे तलाक दर में वृद्धि हुई, नैतिक मूल्यों में कमी आई, वृद्धों और बच्चों के अभाव हुआ, और समाज के "सर्वहित" पर स्वच्छंद संभोग और "व्यक्तिगत विचारों '' की वृद्धि हुई। इसका सार यही है कि परिवार के टूटने से समाज और मानव उत्तरजीविता की निरंतरता टूट (बिखर जाती है।

1.5 परिवार जीवन में संबंध और बंधन

संबंध और बंधन परिवार जीवन के केंद्र हैं। परिवार और घरेलू संघटना में परिवर्तन से लोगों की अपने संबंधों से उम्मीदों में बदलाव आया है। आज के संबंध सक्रिय हो गए हैं व्यक्ति को इसे कार्यान्वित करना होगा। यह दूसरे लोगों का विश्वास जीतने पर निर्भर करता है। वस्तुतः विकसित देशों में अधिकांश यौन संबंधों और विवाहों का स्थायित्व अपने साथी से उसे जो उम्मीद है उसमें हुए इस परिवर्तन पर निर्भर करता है। संबंध व्यक्तियों के बीच संचार और सहयोग पर निर्भर करते हैं। भावात्मक संचार यौन संबंध, पति–पत्नी के बीच प्यार, और माता–पिता व उनके बच्चों के बीच प्यार का एक अभिन्न अंग है। हालांकि विकसित देशों में इसमें अत्यधिक रूपांतरण हुआ है, लेकिन परंपरागत भारतीय समाज में ज्यादा बदलाव नहीं आया है। यहाँ ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्रों के परिवारों के बीच काफी स्नेह और अत्यधिक पुष्ट संबंध विद्यमान हैं। हालांकि भारतीय उप–महाद्वीप में पश्चिमी संस्कृति या जीवन शैली का प्रभाव को प्रबल होते देखा जा सकता है।

विवाह और परिवार जीवन की सफलता और चिर स्थायित्व के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है। स्वस्थ संबंध/रिश्तेदारी और बंधन को स्थायी रूप से बनाए रखने की योग्यता/बंधन की योग्यता विश्वसनीय प्यार के प्रारंभिक अनुभव पर निर्भर करती है। एक बच्चा जिसे अपने माता–पिता की एक दूसरे के प्रति और उसके प्रति वफादारी/प्रतिबद्धता पर कभी संदेह न हुआ हो उसमें सहज रूप से विश्वास व निष्पक्षता विकसित होगी।

विश्व के कई देशों (हिस्सों) में सेक्स को ऐसे रूप में प्रस्तुत करने के प्रयास हुए हैं जिसमें संबंधों के प्रति कोई सम्मान नहीं होता। ऐसे प्रयास मानव जाति की गरिमा को ठेस पहुँचाते हैं उसे अपमानित करते हैं। वस्तुतः यह वैवाहिक संबंध के हृदय से पैदा होता है। समय के साथ–साथ यह परिवार और अंततः समाज को दुर्बल बना देगा।

परिवारिक जीवन की शिक्षा का आशय है युवाओं को मानव के अर्थ का अन्वेषण करने, स्वयं को एक अद्वितीय देह के माध्यम से मूलभूत (तात्विक) रूप से पुरुषोचित और स्त्रियोचित रूप में अभिव्यक्त करने में मदद करना। अपनी शरीर के माध्यम से एक व्यक्ति प्यार करने की अभिव्यक्ति/भावना को पूर्ण रूप से व्यक्ति व उपभोग कर सकता है।

जैविक संगम–जिसके परिणामस्वरूप संतान पैदा होती है, के बिना परिवार का अस्तित्व नहीं हो केवल महिला ही पुरुष के सहयोग और हिस्सेदारी से ही गर्भधारण कर सकती है। एक बच्चे के बढ़ने के लिए एक पिता, एक माता और एक घर का होना जरूरी है। यह एक असलियत है और प्राचीन समय से चला आ रहा सभी समाजों का शाश्वत अनुभव है। यह अवधारणा विवाह के अंतर्गत यौन संगम को नया मानव सृजित करने की क्षमता (सामर्थ्य). रखने वाले के प्रति स्वयं को पूर्ण रूप से सौंपने के असाधारण कार्य के रूप में प्रस्तुत करती है। एक निष्ठावान संबंध सार्थक और फलदायक जीवन की ओर प्रेरित करता है।

मातृत्व, पितृत्व, मातृपितृत्व

हम जानते हैं कि कानून और दिव्य प्रकृति का मानना है कि मानव प्रकति निर्धारित है, इसमें दो लिंग (हिजड़े "किन्नर'' इसका अपवाद है), होते हैं, जहाँ मानव और सामाजिक जीवन में परिवार एक स्वाभाविक और स्थिर संस्था है। अतः मातृत्व और पितृत्व अचल है और परिवार को पुनः परिभाषित नहीं किया जा सकता। विधवापन (वैधन्य) या तलाक या संबंध विच्छेद के कारण एकल माता–पिता वाले परिवारों को छोड़कर यह सभी समाजों में एक मानक के रूप में विद्यमान है। वस्तुतः मातृत्व और पितृत्व मात्र जैविक विशेषताओं की अपेक्षा मानव सत्ता के आधपुरुषों के रूप यह ज्यादा विद्यमान है।

माँ क्या है इसकी कोई पहचान नहीं है जब तब कि व्यक्ति को "असली माँ'' का व्यक्तिगत अनुभव न हो। इसी तरह पितृत्व को भी परिवारिक व्यवस्था में केवल प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा जाना जा सकता है।

मातृपितृत्व मातृत्व और पितृत्व से भिन्न है। कई ऐसे हैं जो बहुत ही कम उम्र में ही माता और पिता बन जाते हैं। मानव केवल सजीव प्राणी है जिसमें व्यक्ति के व्यवहार के अधिकांश पहलुओं का मार्गदर्शन करने वाली अंतःनिर्मित क्रिया–विधि का अभाव होता है। प्रतिभाओं, कौशलों और विचारों को विकसित करने के लिए व्यक्ति को दूसरों के साथ संबंधों का प्रयोग करना पड़ता है। व्यक्तिगत परिपक्वता प्राप्त करने के लिए वृद्धि हेतु यह एक अनिवार्य शर्त है। परिवार ही वह प्रथम परिवेश है जो व्यक्ति को सहज स्नेह व सहयोग के साथ दूसरों के साथ संबंध बनाने में सहायक होता है। व्यक्ति के जीवन में विपरीत लिंग वाले नए व्यक्ति के प्रवेश से एक नए प्रकार का संबंध और अनुभव विकसित होता है जो विवाह के रूप में पूर्ण होता है। वे दोनों के साथ "मैं" और "तू'' को पीछे छोड़कर स्वयं को ''हम'' के रूप में परिवर्तित करते हैं। एक विश्वास और समझ बढ़ती है। अपनी–अपनी आंतरिक भावनाओं, अनुभूतियों मूल्यों और रुचियों को दर्शाते व आदान–प्रदान करते हुए उनमें संकोच की भावना नहीं रहती।

प्रत्येक व्यक्ति परिवार में पैदा होने के लिए बना है और नया परिवार बनाने के लिए आया है। एक व्यक्ति पारिवारिक जीवन एवं उसके दायित्वों को गंभीरतापूर्वक स्वीकार करके ही स्नेह, सम्मान और सेवा–भावना के साथ दूसरों तक पहुँच सकता है। बच्चे पैदा करने की योजना बनाने, गर्भधारण करने और उन्हें पालने की खुशी व चिन्ताएँ, और परिवार के सामाजिक दायित्व और कर्त्तव्य दंपत्ति को स्वयं को विस्मृत करने (भूलने) और दूसरों के ज्यादा और ज्यादा संबद्ध होने के लिए विवश करते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि उत्तरदायी मातृपितृत्व ही असली मातृपितृत्व हैं। व्यक्ति को अपने, परिवार, पति/पत्नी, बच्चों के समाज के प्रति उत्तरदायी बनना होगा।

जीवन की संस्कृति

परिवार जीवन को संवर्धित करने के लिए कार्यनीति और तर्काधार की ज़रूरत है क्योंकि नई प्रवृत्तियाँ ''व्यक्तिगत अधिकारों'' की माँग करती है। गोपनीयता, सुविधा के आधार पर व्यक्तिगत अधिकार को माँगा जा सकता है और कुछ तो मूल अधिकारों के अंतर्गत व्यक्तिगत अधिकार की माँग कर रहे हैं। "व्यक्तिगत अधिकारों" की माँग सामान्य हित की चिंता को धुंधला कर रही है।

मरणांतक रोगियों को जीवन के बदले मृत्यु का वरण करने के अधिकारों से वंचित करना अमानवीय नहीं है। भारतीय संविधान और कानून सुख मृत्यु (सहज मृत्यु – euthasia) की अनुमति नहीं देते। इसी तरह अजन्मे बच्चे के ''जीवन के अधिकार' की सुरक्षा करने को महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। माता–पिता और युवा का कर्तव्य और जिम्मेदारी है कि वे गर्भधारण से लेकर प्राकृतिक मृत्यु होने तक मानव जीवन की सुरक्षा करें। गर्भपात में एक कमज़ोर और निराश्रय बच्चे की उन लोगों द्वारा नृशंस हत्या कर दी जाती है जिन्हें बच्चे को सर्वाधिक स्नेह व देखभाल करनी चाहिए अर्थात् माता–पिता और स्वास्थ्य देखभाल व्यावसायिक।

कई युवा इस तथ्य से अनभिज्ञ हैं कि गर्भधारण करने पर नए जीवन की रचना होती है। गर्भधारण निषेचन के समय से प्रारंभ होता है अर्थात् जिस क्षण पिता का शक्राणु और माता की अंड कोशिका मिलती है। स्वार्थी लोग इसकी कई व्याख्याएँ कर सकते हैं। लेकिन वैज्ञानिक रूप से यह स्पष्ट है कि गर्भधारण से अभिप्राय निषेचन है न कि रोपण से। रोपण निषेचन के लगभग पाँच दिनों पश्चात् होता है। युग्मनज किसी भी सजीव की तरह बढ़ना प्रारंभ कर देता है। यह मानव है क्योंकि निषेचन के समय मिलने वाले गुणसूत्र मानव पिता और मानव माता के होते हैं न कि किसी अन्य सजीव जाति के। विश्व में कई ऐसी जीवन–विरोधी शक्तियाँ मानव अधिकारों के उल्लंघन के लिए औचित्य और सामान्य हित पर

व्यक्तिगत हितों के लिए अपने संघर्ष के लिए तर्काधार प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही है।

अतः यह उपयुक्त होगा कि गर्भपात कराने या सुखद मृत्यु का वरण करने की व्यक्तिगत आजादी संबंधी झूठे प्रचार के माध्यम से ऐसे जन विरोध होने के बावजूद युवाओं को जीवन की संस्कृति के बारे में सिखाएँ। स्वतंत्रता एक दिव्य भेंट है और हमारी पूरी तरह से यह जिम्मेदारी है कि हम इसकी माँगों के अनुरूप जीवन जीएँ। विकसित देशों के कुछ लोगों के बीच सहवास की प्रवृत्ति पाई जाती है। ऐसी प्रवृत्तियाँ कुछ हद तक विवाहों का स्थान ले रही हैं. है, इन प्रवृत्तियों को परिणामस्वरूप तलाक की दर बढ़ी है। गर्भपात और विवाह बंधन से पैदा होने वाले बच्चों की संख्या में वृद्धि हुई है। कुछ देशों ने समलिंगी विवाहों को कानूनी जामा पहना दिया है। ऐसे समाजों में समलैंगिक विवाहों और समलिंगी बंधनों में रहने वाले लोगों को परिवार का दर्जा दिलाने के लिए प्रमाणक समूह (गुट) है ताकि केवल स्वाभाविक और पारंपरिक परिवारों के लिए बनाए गए लाभों से समलिंगी दंपत्ति भी लाभान्वित हो सकें। अभी तक भारतीय दंड संहिता (आई पी सी) की धारा 377 के अंतर्गत समलिंगी कार्य एक आपराधिक कार्य है। हाल ही में इस धारा को रद्द करते हुए एक गैर सरकारी संगठन द्वारा दिल्ली उच्च न्यायालय में दायर की गई जनहित याचिका को खारिज कर दिया गया समलैंगिकता को अस्वीकृति दी है और समलिंगी कार्य को आपराधिक कृत्य के रूप में मानन की पुष्टि के लिए यही पर्याप्त है भले ही वयस्क इसे गुप्त रूप से करते हैं। न्यायालय की कार्यवाही के दौरान यह कहा गया कि ''जब सरकारी नागरिक समाज में नैतिकता का नियंत्रित नहीं कर सकी तो कानून को ही लोकनैतिकता और समाज को हानि पहुँचाने वाली चिन्ताओं को अभिव्यक्त व प्रतिबिंबित करना पड़ा। यदि इस ओर ध्यान नहीं दिया जाता तो कानून के लिए जो थोड़ा बहुत सम्मान बचा है वह भी समाप्त हो जाएगा क्योंकि तब कानून अपनी वैधता खो चुका होगा। यह तो सभी को ज्ञात है कि समलिंगी विवाह प्रकृति के विरुद्ध है। यह नए मानव जीवन के संबंध में यह बंधन है। यह नैतिकता के विरुद्ध है। एक अच्छे समाज

को बनाए रखने के लिए नैतिक पर्यावरण का होना जरूरी है। तथापि, यह एक सच्चाई है कि विभिन्न संस्कृतियों के लोगों भिन्न–भिन्न यौन अभिविन्यास हैं। हमारा उद्देश्य ऐसे व्यवहारों की निंदा करना नहीं लेकिन यह समझना है कि समाज इसे कैसे ग्रहण (स्वीकार) करता है। जो जीवनशैलियाँ तलाक समलिंगी संगमों, सुखद मृत्यु को बढ़ावा देती है और गर्भपात की दरों को बढ़ा रही है उससे परिवार की सुदृढ़ आधारशिला को हिलाया जा रहा है। परिवारों में बच्चों की संख्या कम है और वृद्धों की आबादी बढ़ रही है जिस युवाओं का समर्थन नहीं मिलेगा।

ऐसे प्रवृत्तियों का विरोध करने और मूल्य आधारित समाज को बचाए रखने के लिए "जीवन की संस्कृति" को बढ़ावा देने की आवश्यकता है न कि "मृत्यु की संस्कृति" को हमारी जीवन की संस्कृति ऐसी होनी चाहिए सद्‌गुणों को बढ़ावा मिले। बंधन की योग्यता को ऐसी संस्कृति की ज़रूरत है जिसमें युवक व युवती यौन अंतरंगता को बढ़ाने से पूर्व वैवाहिक बंधन में बंधने का इंतजार करें। जिस व्यक्ति के साथ बंधना है ऐसे सही व्यक्ति के लिए वचनबद्धता और प्रतिज्ञा स्थायी और खुशहाल यौन, वैवाहिक जीवन और सुदृढ़ परिवार बंधन का आधार है।

ऐसी नकारात्मक प्रवृत्तियों का विरोध करने और पारंपरिक भारतीय परिवार की समृद्ध विरासत और मूल्यों को सुरक्षित रखने के लिए "जीवन की संस्कृति" को संवर्धित करने की ज़रूरत है न कि "मृत्यु की संस्कृति'' को। हमारी जीवन संस्कृ ति ऐसी होनी चाहिए जिनमें सद्‌गुणों को बढ़ावा मिलता हो। बंधन की योग्यता के लिए ऐसी संस्कृति की ज़रूरत है जिसमें युवा पुरुष व युवतियाँ यौन संपर्क में आने से पहले विवाह होने का इंतजार करें। अनियत प्रयोग जिनकी ओर आज का युवा अग्रसर है, उनके द्वारा मिलते वाले घाव और भावात्मक दाग उन्हें काफी हद तक स्थायी बंधन की संभावना से वंचित रखते हैं। वचनबद्धता और जिसके प्रति वचनबद्ध होते हैं, ऐसे सही व्यक्ति मिलने की इंतजार करना स्थायी खुशहाल यौन जीवन, वैवाहिक जीवन और सुदृढ़ पारिवारिक बंधन का आधार है। अच्छे

पारिवारिक जीवन हेतु समुदाय के साथ अधिक से अधिक सहयोग करने की ज़रूरत है। समाज की ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए स्थायी पारिवारिक जीवन के संवर्धन हेतु सरकार और विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं को प्रोत्साहित करने के लिए एक मुक्त नीति का होना जरूरी है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणी: अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) भारतीय दंड संहिता की उस धारा का नाम बताइए जो समलैंगिकता से संबद्ध है।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.6 सारांश

इस इकाई में हमने विभिन्न दृष्टिकोणों से पारिवारिक जीवन की संकल्पना पर चर्चा की है। 1948 संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार घोषणा और 1989 के बाल अधिकार संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन दो अंतर्राष्ट्रीय दस्तावेज है जो परिवार की संकल्पना और महत्त्व के बारे में विश्व के समुदाय की विचारधारा को प्रतिबिंबित

करते हैं। संयुक्त राष्ट्र घोषणा में परिवार को समाज की एक सहज और मूल समूह इकाई के रूप में परिभाषित किया है जिसे समाज और राज्य द्वारा सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है। हमने विभिन्न प्रभाव समूहों द्वारा परिवार की संकल्पना को परिभाषित करने के कुछ प्रयासों की भी चर्चा की जो समाज के कुछ वर्गों को स्वाभाविक और परंपरागत परिवार को उपलब्ध लाभों को भी प्राप्त करना चाहते हैं। इस इकाई में चर्चा के महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में से एक क्षेत्र है परिवार की सामाजिक संस्थाओं, विवाह तथा परिवार, सगोत्र और विवाह के बीच अंतःसंबंध। भारतीय संदर्भ में पारिवारिक जीवन पर चर्चा का अन्य क्षेत्र था। परंपरागत भारतीय परिवार अभी भी संयुक्त परिवार है जहाँ बच्चे और बूढ़ों को सुरक्षा व देखभाल प्राप्त होती है जिसका कि कई देशों में पतन हो रहा है। परिवार मूल्यों और मूल्यों में परिवर्तनशील प्रवृत्तियों के बारे में चर्चा का प्रयास किया गया जिसके परिणामस्वरूप विश्व भर में सामाजिक परिदृश्य तेजी से बदल रहा है। विवाह और बंधन को सफल और चिरस्थायी विवाह तथा पारिवारिक जीवन की कुंजी बनाया गया है। चर्चा "जीवन–संस्कृति'' और ''मृत्यु–संस्कृति'' के बीच संतुलन का पता लगाने के साथ समाप्त हो जाती है।

1.7 शब्दावली

परिवार : घर के सदस्य, विशेष रूप से माता–पिता और उनके बच्चे।

सगोत्रता : वैवाहिक संबंध के माध्यम से रक्त संबंध या वंशावली के माध्यम से जो खून के रिश्तेदारों को जोड़ता है।

विवाह : समाज द्वारा मान्यता प्राप्त एक महिला पुरुष का विधि सम्मत संगम ताकि वे एक साथ रहे और बच्चे पैदा करें।

सुखद मृत्यु/सहज मृत्यु: लाइलाज और वेदनापूर्ण रोग होने पर जीवन रक्षक प्रणाली को हटाकर सरल व सुखद मृत्यु का वरण करना।

1.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ग्रूग्नी, एंथनी (1997) : एक्सरसाइज इन एजुकेशन इ लव, तेज प्रसारिनी, मुंबई।

हरलाबोस, एम एंड हेलड, आर एम (1997) : छठा संस्करण, सोशियोलोजी, थीम्स एंड परस्पेक्टिव्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली।

फ्लैचर, रॉनाल्ड (1988) : दि अबोलीशनिस्ट, दि फैमिली अंडर अटैक, रोटलैज, लंदन।

गिडिन्स, एंथोनी (2001) : सोशियोलोजी (चौथा संस्करण), पोलिटी प्रेस, कैम्ब्रिज।

फैमिलिया एट विटा, वाल्यूम VI, संस्करण–3, 2001, वाल्यूम VII, सुं 2–3, 2002, वाल्यू VIII, सं. 1–2, 2003 और वाल्यूम IV, सं 1–2, 2004

संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार घोषणा 1948

संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार कन्वेंशन 1989

कर्राकेर, मैग एलिक्स एंड ग्रोचॉवस्की, (2006), फैमिलीज विद फ्यूचर्स : ए सर्वे ऑफ फैमिली स्टडीज फॉर द 21st सेन्चुरी।

शंकर राव, सी. एन. (2001) : सोशियोलॉजी : प्राइमरी प्रिसीपल्स, एस. चान्द एंड कम्पनी लिमिटेड, न्यू डेल्टी।

1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) परिवार को एक प्राथमिक समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें दो विपरीत लिंगों के कम से कम दो वयस्क और उनके अपने या गोद लिए गए बच्चे होते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) मानव अधिकार व्यक्ति की मानव गरिमा पर आधारित होते हैं और जन्मजात व अहस्तांतरणीय होते हैं। वे स्वाभाविक और सभी मानवीय स्थितियों में लागू होते हैं। परिवार को समाज की मूल इकाई के रूप में देखा जाता।

बोध प्रश्न 3

1) भारतीय दंड संहिता की धारा 377

इकाई 2 परिवार जीवन शिक्षा – संकल्पना और अर्थ

*डॉ. शुभाकांत महापात्र

रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 परिवार जीवन शिक्षा की परिभाषा

2.3 परिवार जीवन शिक्षा की विषय–वस्तु

2.4 परिवार जीवन शिक्षा से संबंधित पारम्परिक भारतीय मान्यताएँ

2.5 परिवार जीवन शिक्षा में विभिन्न प्रकार की मान्यताओं का महत्त्व

2.6 परिवार जीवन शिक्षा के लाभ

2.7 सारांश

2.8 शब्दावली

2.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको परिवार जीवन शिक्षा की संकल्पना और उसके अर्थ से परिचित कराना है। इसमें यह बताया जायेगा कि किस प्रकार परिवार जीवन

* डॉ. शुभाकांत महापात्र, एनओएस, नई दिल्ली।

शिक्षा मूल्य गर्भित संकल्पना है। इस इकाई में आज के संदर्भ में इसके महत्त्व और विषय क्षेत्र को भी दर्शाया जायेगा।

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- परिवार जीवन शिक्षा की संकल्पना का वर्णन कर सकेंगे;
- परिवार जीवन शिक्षा के अर्थ की व्याख्या कर सकेंगे;
- विभिन्न प्रकार की मान्यताओं और परिवार जीवन शिक्षा के बीच के संबंध का विश्लेषण कर सकेंगे;
- परिवार जीवन शिक्षा से जुड़ी हुई पारम्परिक भारतीय मान्यताओं को समझ सकेंगे:
- परिवार जीवन शिक्षा की आवश्यकता को स्पष्ट कर सकेंगे; और
- परिवार जीवन शिक्षा के विषय क्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

भारत में काफी समय से घनिष्ठ संबंधों वाली पारिवारिक प्रणाली की परम्परा रही है किन्तु आजकल कुछ लोग तर्क देते हैं कि (आधुनिक) परिवार एक संस्था के रूप में आज संकट की स्थिति में है। इस संबंध में हमें आशावादी विचार रखने चाहिए। परिवार तेजी से आ रहे सामाजिक और प्रौद्योगिक परिवर्तनों से जुड़ी समस्याओं से अछूता नहीं है। फिर भी परिवार ने हमेशा ही कठिनाइयों को चुनौती के रूप में बदलने की क्षमता दिखाई है। तेजी से बदलती हुई दुनिया में निश्चय ही परिवार समाज में व्यक्ति को सहायता एवं सुरक्षा दे सकता है।

परिवार विभिन्न प्रकार और आकार के हो सकते हैं। हर परिवार की पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाली विशिष्ट पारिवारिक परम्परायें होती हैं, साझे अनुभव होते हैं। हमारा विश्वास है कि परिवार की यह आपसी संबंध और संपर्क बनाये रखने की विशेषता आज के इस युग में, जबकि बहुत से लोग मूलविहीन और अलग–थलग पड़ गये महसूस करते हैं, और भी महत्त्वपूर्ण बन गई है। प्रौद्योगिकी की प्रगति

अधिकतर विकास में सहायक होती है, किंतु कभी–कभी यह अवैयक्तिकरण की भावना भी उत्पन्न करती है जिससे व्यक्ति के सामने अपनी पहचान बनाने की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इसीलिये आज के संदर्भ में भी पारिवारिक जीवन शिक्षा बहुत ही आवश्यक एवं संगत है।

जैसा कि हम जानते हैं प्रत्येक समाज अपने नवयुवकों को वयस्क बनाने का कार्य अपने अपने तरीके से विकसित शैक्षिक प्रक्रिया द्वारा करता है। पारम्परिक रूप से पारिवारिक जीवन शिक्षा की अधिकतर बातें अनौपचारिक रूप से घर के ही अंदर, पूजा घरों में, कार्य स्थलों में तथा अन्य व्यक्तियों के साथ दिन प्रतिदिन के व्यवहार में सिखाई जाती है। बचपन में परिवार जीवन शिक्षा से संबंधित कई मान्यताओं की सीख कहानियों, लोक कथाओं, महाकाव्यों धर्म ग्रंथों आदि के माध्यम से दी जाती है। इन सबके पीछे निहित उद्देश्य बच्चों में पारिवारिक जीवन के लिये आवश्यक मूल्यों–गुणों को विकसित करना या उनके मन में इन मान्यताओं को बैठा देना हैं, जिससे कि वह उनके आने वाले जीवन में मार्गदर्शी सिद्धांत बन जायें।

कुछ जनजातियों में तो बाल्यावस्था से वयस्कता में प्रवेश करने के समय समारोह किये जाते हैं जोकि बाल्यावस्था समाप्त करके व्यस्कता में प्रवेश का प्रतीक होते हैं। इस समारोह के उपरांत वह उस ज्ञान और विशेषाधिकारों तक पहुँच सकता है जिनकी अनुमति केवल वयस्कों को होती है। इसी प्रकार दक्षिण भारत तथा भारत के कई अन्य भागों में जब एक लड़की वयःसंधि की आयु पर पहुँचती है तब एक समारोह का आयोजन किया जाता है और लड़की को पारिवारिक जीवन शिक्षा की बारीकियाँ सिखाई जाती हैं। इस प्रकार सामाजीकरण के माध्यम से, व्यक्तियों के व्यवहार को देखकर तथा अपने स्वयं के अनुभव से बालक एवं किशोर अपने समाज की मान्यताओं, रीतिरिवाजों तथा मूल्यों से परिचित होते हैं। यह अनुभव उनके अपने व्यवहार के लिये मार्गदर्शी सिद्धांत उपलब्ध कराते हैं।

आज के संदर्भ में, विश्व के अनेक भागों में परिवार बच्चों को वयस्क जीवन के लिये तैयार करने में बहुत कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। कई बार यह देखा जाता है कि सामने आ रही समस्याओं के संबंध में वयस्कों की जानकारी भी उतनी ही कम होती है जितनी कि बच्चों की। ऐसी स्थिति में स्कूलों तथा इस क्षेत्र में काम कर रही स्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है। स्कूल तथा स्वैच्छिक संस्थायें जिन्होंने किसी प्रकार से पारम्परिक शिक्षा तथा मार्ग दर्शन का स्थान लिया है वे परिवर्तन के साथ सामंजस्य स्थापित करने में भी लोगों की मदद कर सकते हैं। परिवार जीवन शिक्षा के लिये सुव्यवस्थित रूप से विकसित कार्यक्रमों का विकास ही यह दिखाता है कि वे परिवार के साथ ही स्वैच्छिक रूप से कार्य करने, नौजवानों को बाल्यावस्था से युवावस्था में प्रवेश के संक्रमण काल में उनकी सहायता करने की इच्छुक हैं।

कई बार यह देखा गया है कि परिवार जीवन शिक्षा को यौन शिक्षा का पर्याय माना गया है, किंतु वास्तव में परिवार जीवन शिक्षा यौन शिक्षा की तुलना में एक बहुत व्यापक संकल्पना है। यौन शिक्षा परिवार जीवन शिक्षा का मात्र एक भाग है। परिवार जीवन शिक्षा में अन्य बातों के अतिरिक्त आर्थिक कार्य, सामाजिक कार्य जैसे विवाह, उत्तरदायित्वपूर्ण मातृ एवं पितृत्व आदि भी सम्मिलित हैं। इन सब बातों पर हम विस्तार से चर्चा भाग 2.3 में करेंगे। यौन शिक्षा के समान ही परिवार जीवन अध्ययन भी परिवार जीवन शिक्षा से भिन्न है।

2.2 परिवार जीवन शिक्षा की परिभाषा

परिवार जीवन शिक्षा के क्षेत्र में कामकर रहे कई अंतर्राष्ट्रीय संगठनों तथा विशिष्ट व्यक्तियों ने विभिन्न तरीकों से इसको पारिभाषित करने का प्रयास किया है। इनमें से कुछ परिभाषाएँ नीचे दी जा रही हैं:

1) परिवार जीवन शिक्षा उन शैक्षिक संकल्पनाओं और सझावों के संबंध में बताता है जो पारिवारिक जीवन, व्यक्तिगत संबंध और यौन संबंधों के

विकास को प्रभावित करने वाले व्यवहारों के विषय में होते हैं। (शिक्षा विभाग, वर्जीनिया, संयुक्त राज्य अमरिका, 1978)

2) एक व्यापक एवं अच्छे लगने वाले तरीके से परिवार जीवन शिक्षा की कल्पना व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुये उसके व्यक्तिगत विकास में सहायक बनकर उसे परिवार और समाज के जिम्मेदार सदस्य के रूप में कार्य करने के लिये तैयार करने की शिक्षा के रूप में की जा सकती है। (मलेशियन फैडरेशन ऑफ फामला प्लानिंग एसोसिएशन द्वारा 1985 में तैयार किया गया पारिवारिक जीवन शिक्षा का एक पाठ्यक्रम)

3) परिवार जीवन शिक्षा में अपने विषय में जागरूकता, अन्य की समझ, लिंगभेद, विवाह, मातृत्व एवं पितृत्व आदि सम्मलित हैं। अर्जित ज्ञान और सीखे गए कौशल व्यक्ति के, सामाजिक परिवर्तन एवं नागरिक जीवन साथी, माता–पिता के रूप में समाज में आपसी संबंधों का निर्वाह करने की योग्यता विकसित करने में योगदान देते हैं।

(इंटरनेशनल प्लान्ड पैरेन्टहुड फैडरेशन के 1978 में लेसोथा में, "अध्यापकों एवं राष्ट्रीय विकास – विशेषतः पारिवारिक जीवन शिक्षा'' के संदर्भ में आयोजित सेमिनार के समय अपनाई गई (परिभाषा)।)

4) परिवार जीवन शिक्षा की परिभाषा मानव विकास के लिये एक ऐसी शिक्षा के रूप में की जा सकती जो कि यह सुनिश्चित करने का प्रयत्न करती है कि प्रत्येक मनुष्य जो कि युवावस्था की ओर बढ़ रहा है वह ऐसे कौशलों तथा व्यक्तिगत गुणों को अपने में विकसित करे जोकि उसे समाज में, उसके आने वाले जीवन में, समाज के मान्यता प्राप्त सिद्धांतों के अंतर्गत रह कर चुनौतियों का सामना करना तथा अनुभव के साथ उनमें सामंजस्य व तारतम्य स्थापित करने योग्य बनाएँ।

किंतु इनमें से कोई भी परिभाषा परिवारिक जीवन शिक्षा के सभी पहलुओं को समाहित नहीं कर पाई है। अंतर्राष्ट्रीय नियोजित मातृ–पितृत्व संघ द्वारा दी गई परिभाषा सामान्य रूप से हमारे द्वारा की गई परिवार जीवन शिक्षा की संकल्पना के सबसे निकट है। फिर भी इन सभी परिभाषाओं ने परिवार जीवन शिक्षा में सम्मिलित आर्थिक पहलू की अनदेखी की है।

अतः इस इकाई में हम परिवार जीवन शिक्षा को निम्नलिखित रूप में व्याख्या करेंगे:

- परिवार जीवन शिक्षा की संकल्पना उन कई प्रकार के औपचारिक एवं अनौपचारिक प्रयासों के संबंध में होती है जिनसे कि व्यक्ति पारिवारिक जीवन की भूमिका और उत्तरदायित्वों के लिये तैयार होता है।
- आज की दुनिया में तेजी से आ रहे प्रौद्योगिकीय एवं सामाजिक परिवर्तनों ने परिवारों, एवं समाजों के लिये परिवार के सभी सदस्यों के बीच पारस्परिक संबंधों और निर्णय लेने की योग्यताओं को, विशेष रूप से पति–पत्नी की योग्यताओं को बढ़ाने की, आपसी प्रतिबद्धताओं के साथ–साथ उनकी आर्थिक आत्मनिर्भरता एवं भावात्मक स्थिरता के लिये सहायता के अर्थ की पुनर्व्याख्या करने की आवश्यकता को बढ़ा दिया है।
- बढ़ते हुये दाम, टूटते दामपत्य, पारिवारिक दुर्व्यवहार तथा वैवाहिक संबंधों में संतुष्टि और परिवार के सदस्यों द्वारा आपस में साथ–साथ व्यतीत किये जाने वाले समय में आती गिरावट यह दिखाती है कि या तो लोग शादी और परिवार की चुनौतियों का सामना करने के लिये पूरी तरह से तैयार नहीं हैं या इसमें उन्हें परिवार की सहायता नहीं मिल रही है। फिर भी, व्यक्तिगत एवं सामाजिक दबावों के बीच तथा सीमित तैयारी एवं सहायता के साथ भी स्थिर, संतोषप्रद एवं बढ़ रहे विवाह, विशेष रूप से नाभिकीय परिवारों के मध्य यह दर्शाते हैं कि बहुत से लोग सुदृढ़ परिवार बनाने की कोशिश में लगे हैं। इसी प्रकार हाई स्कूल, कॉलेज तथा सामाजिक

स्थितियों में साथ साथ पढ़े–बड़े हुए लोगों के बीच और अच्छे संबंध बनाने की कोशिश शायद यह दिखाती है कि लोगों में संबंधों के बीच में आने वाले अविश्वास को जो कि संबंधों के मध्य उठाता रहता है, दूर रखने का प्रयास, दांपत्य जीवन को सफल बनाने के लिये किए गए उपाय हैं।

परिवार जीवन शिक्षा का अर्थ

परिवार जीवन शिक्षा एक विस्तृत एवं लचीला क्षेत्र है। कोई भी चीज़ जो परिवार के पूर्णरूपेण विकास एवं सुदृढ़ता में भौतिक, मानसिक, भावनात्मक, आर्थिक एवं आध्यात्मिक योगदान देती है उसे पारिवारिक जीवन शिक्षा में सम्मिलित किया जा सकता है। इसीलिये परिवार शिक्षा का स्रोत कई विषयों में जैसे समाजविज्ञान, सामाजिक कार्य, मनोविज्ञान, मानवविज्ञान, जीवविज्ञान, शिक्षा, इतिहास आदि में पाया जा सकता है। इसलिये प्रायः इससे संबंधित कार्यक्रमों के लक्ष्यों का आधार विस्तृत होता है। समग्र रूप में इसका मातृ–पितृत्व चुनने के क्षेत्र में स्वतंत्रता तथा मानव जीवन की सम्पन्नता विकसित करना है।

परिवार जीवन शिक्षा को एक मूल्य आधारित संकल्पना के रूप में लिया जाता है। परिवार जीवन शिक्षा से संबंधित अधिकतर मान्यताएँ व्यक्ति के सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश में अंदर तक पहुँची हुई पाई जाती है। यह मान्यताएँ नैतिक नीतिपरक, संस्कृति, धार्मिक, व्यक्तिगत आदि होती हैं।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) परिवार जीवन शिक्षा के अर्थ की व्याख्या कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2.3 परिवार जीवन शिक्षा की विषय–वस्तु

परिवार जीवन शिक्षा की विषय वस्तु उन लोगों की आवश्यकताओं से संबंधित जिनको यह शिक्षा दी जानी है। युवा पीढ़ी से, जबकि वह अपने आपको अपने वयस्क जीवन के लिये तैयार कर रहे होते हैं, इस संबंध में यह बहत महत्त्वपूर्ण है कि उनको किस प्रकार का शिक्षा, जानकारियाँ उपलब्ध कराई जाएँ जो उनके निर्णय लेने की क्षमता तथा कौशलों के विकास में सहायक हों।

आइए हम परिवार जीवन शिक्षा के उपखंडों का विश्लेषण करें :

परिवार : अर्थ, प्रकार एवं कार्य

परिवार समाज की मूल इकाई है। यद्यपि सामाजिक वैज्ञानिकों ने पारिवारिक संरचना एवं संगठन के विभिन्न स्वरूपों का बहुत अध्ययन किया है किंतु फिर भी वे एक ऐसा व्यापक, संस्कृति रहित सामान्यीकृत स्वरूप विकसित करने में कठिनाई का अनुभव करते हैं जोकि विभिन्न प्रकार के समाजों के परिवारों पर लागू हो। एक प्रमुख कठिनाई 'परिवार' की संकल्पना से जुड़ी परिभाषाओं के समय सामने आती है। परिवार किससे मिलकर बनता है इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न का ही उत्तर देना सरल नहीं है क्योंकि अपने आप में 'परिवार' शब्द काफी अस्पष्ट है। इसकी स्पष्ट रूप से व्याख्या करने के लिये परिवारों के प्रकारों को देखना

अत्यंत आवश्यक है। मूलरूप से दो प्रकार के परिवार होते हैं – नाभिकीय परिवार तथा विस्तारित परिवार।

विस्तारित परिवार में माता–पिता, दादा–दादी, परदादा–परदादी सब एक ही घर में या आस पास रहते हैं। परिवार के सदस्य आर्थिक एवं सामाजिक सांस्कृतिक रूप से एक दूसरे से जुड़े होते हैं। पारम्परिक विस्तारित परिवार के सदस्य सामान्यतः अधिक सुस्त होते हैं। जबकि नाभिकीय परिवार में अकेले माता–पिता और उनके बच्चे ही हैं। इस प्रकार के परिवार मुख्य रूप से शहरी तथा औद्योगिक समाजों में पाए जाते हैं। कुछ देशों में तो नाभिकीय परिवार जोड़ों को माता–पिता तथा बड़े परिवारजनों के बिना, सामाजिक वैज्ञानिकों द्वारा क्रमभंग का नाम दी गई परिस्थितियों, जैसे – प्रथम गर्भधारण, पहली सन्तति के जन्म आदि तथा संकट के समय अथवा किसी प्रकार की कठिनाई आने पर किसके पास जाएँ, किससे परामर्श लें आदि कुछ समझ में ही नहीं आता है।

जहाँ तक काम करने का प्रश्न है समाज की मजबूती एवं पारस्परिक निर्भरता बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करती है कि मूल इकाई के रूप में परिवार किस प्रकार अपने कार्य व्यापार को चलाता है। यह परिवार के सभी सदस्यों की जिम्मेदारी है कि वे परिवार के सभी कामों को पूरा करें यद्यपि सामान्य रूप से माता–पिता इन कार्यों में से अधिकांश का' उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लेते हैं। माता–पिता द्वारा इन उत्तरदायित्वों को परान कर पाने की स्थिति में आने वाली कई पीढ़ियों को सामाजिक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। कई बार बच्चों के बीच आने वाली सामाजिक समस्याओं का स्रोत, माता–पिता या परिवारों द्वारा अपने उत्तरदायित्व का ठीक प्रकार से निर्वाचन करने में पाया जा सकता है। वास्तव में एक खुश हाल परिवार बनाने के लिये सभी सदा की आवश्यकताओं की पूर्ति किया जाना आवश्यक है। मनोवैज्ञानिक अब्राहम मैसलोना से इसमें व्यक्ति की मूल आवश्यकताओं जो कि मनोवैज्ञानिक सुरक्षा, प्यार एवं परिवार भाग होना, आत्म–सम्मान एवं आत्म–वास्तविकीकरण के लिये प्रावधान किया सम्मिलित है।

परिवार में भूमिकाएँ, संबंध एवं उत्तरदायित्व

अन्य देशों के व्यक्ति कई बार भारतीय परिवारों में अपनाई गई भूमिकाओं और संबंधों से अचम्भे में पड़ जाते हैं। उनको इस बात पर आश्चर्य होता है कि कैसे भारतीय परिवारों में दस वर्ष से कम आयु के बच्चों से भी सामाजिक आर्थिक कार्यों में, जैसे गाय, भैंसों की देखभाल करने, गोबर इकट्ठा करने, पीने का पानी लाने, कपड़े धोने, अपने छोटे भाई बहनों की देखभाल करने आदि में, महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने की आशा की जाती है। उनके लिये यह भी समझ पाना मुश्किल होता है कि कैसे शादी–शुदा बच्चे भी कभी–कभी माता–पिता पर निर्भर रहते हैं और साथ ही वृद्ध माता–पिता किस प्रकार अपने बच्चों पर आश्रित रहते हैं।

भारत के परिप्रेक्ष्य में परिवार के पारम्परिक संबंध सामान्यतः बहुत व्यापाक होते हैं। साथ ही यहाँ अन्य प्रकार के पारिवारिक संबंध भी होते हैं जैसे धर्म पिता धर्म पुत्र का संबंध तथा परिवारों के मध्य होने वाले विवाहों के परिणामस्वरूप एक दूसरे के परिवारों से बनने वाले संबंध। उदाहरण के रूप में पारिवारिक संबंध बहुत जटिल होते हैं क्योंकि इनका आधार केवल रक्त संबंध ही न होकर पहले स्कूल में साथ पढ़ने के कारण बने संबंध, साथ–साथ काम करने के कारण बने संबंध आदि भी होते हैं। संक्षेप में पारिवारिक संबंध विभिन्न रीति–रिवाजों, परम्पराओं से संचालित होते हैं जो कि कानून के नियमों से भी ज्यादा प्रभावी होती हैं।

परिवार में भूमिकाओं की स्पष्ट जानकारी बहुत आवश्यक है। किसी बात को गलत रूप में लेने या आपसी समझ की कमी के कारण बहुत–सी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं और कभी–कभी तो अव्यवस्था ही फैल जाती है। किसी भी परिवार के लिए अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए, अपने सभी सदस्यों से कुछ कामों को करवाना आवश्यक होता है। परिवार में भूमिका, परिवार प्रणाली में अंतर आने अर्थात् विस्तारित परिवार से नाभिकीय दाम्पत्य परिवार आने से और भी जटिल हो गयी है। महिलाओं का घर से बाहर निकलकर आर्थिक कार्यों में भाग लेना,

पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, उच्च शिक्षा तक पहुँच आदि कुछ ऐसे तथ्य हैं जो इस प्रकार का परिवर्तन ला रहे हैं।

परिवार जीवन–चक्र

परिवार जीवन का अध्ययन परिवारों के विकास, उन्नति एवं उनकी संरचना के अध्ययन के लिये एक आधार उपलब्ध कराता है। चक्र के प्रत्येक स्तर पर अनुभव किए गए दबाव और तनाव की समझ परिवार के सदस्यों के बीच अच्छी समझ और सहयोग विकसित करती है। परिवार जीवन–चक्र में मुख्य रूप से आठ चरण होते हैं। इनमें निम्नलिखित सम्मिलित हैं :

चरण 1 : परिवारों को सहन करना

इस चरण में एक दम्पत्ति अपने विचार, आदतों आदि को एक दूसरे की आदतों से मिलाने का प्रयत्न करता है। विवाहित साथी पहली बार आपस में एक दूसरे के साथ रहना सीखते हैं। समय–समय पर आपसी मतभेद आते हैं किंतु यह बहुत जरूरी है कि वह उन्हें दूर करके एक सार्थक विवाह बंधन स्थापित करें।

चरण 2 : परिवार में शिशु का आगमन

दम्पत्ति इस चरण में पहले गर्भधारण के समय प्रवेश करता है। शिशु के आने से आर्थिक स्थिति, आराम के समय तथा एकान्तता में परिवर्तन आता है। इस समय शिशु की उपयुक्त देखभाल बहुत महत्त्वपूर्ण बन जाती है। पति–पत्नी का एक दूसरे पर दिया जाने वाला ध्यान अब अपने साथी एवं नवजात शिशु के बीच बँट जाता है।

चरण 3 : स्कूल जाने से पहले के शिशुओं वाले परिवार

इस चरण में माता–पिता को स्कूल जाने से पहले की अवस्था वाले शिशुओं की महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं और रुचियों की पूर्ति का ध्यान रखना होता है जिससे

उनकी उन्नति एवं विकास सामान्य रूप से हो सके। इस समय तक माता–पिता सोचने लगते हैं कि उनको और बच्चे पैदा करने चाहिये अथवा नहीं। घरों में स्फूर्ति की कमी, जहाँ कि घरों में काम करने वाले या विस्तारित परिवारों में संबंधियों की सहायता मिलना कठिन हो जाता है, एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है जहाँ कि सामंजस्य स्थापित करना होता है।

सामान्यतः महिलाएँ एक साथ ही घर चलाने, कमाने, माता की भूमिका निभाने तथा पत्नी होने की जिम्मेवारियों को पूरा करने को अपने ऊपर पड़े बहुत अधिक बोझ के रूप में अनुभव करने लगती हैं। अब केवल पति ही पैसा कमाने की पारम्परिक भूमिका को पूरा नहीं कर पाते हैं कुछ को घर के कामों में भी मदद करनी पड़ती है, कुछ इसमें कठिनाई अनुभव करते हैं। जब बच्चों पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है तो पति–पत्नी में आपस में गलतफहमियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

चरण 4 : स्कूल जाने वाले बच्चों के साथ परिवार

वे परिवार जहाँ स्कूल जाने वाले बच्चे होते हैं वहाँ बच्चों की शैक्षिक एवं विकासात्मक आवश्यकताओं पर भी ध्यान देने की ज़रूरत होती है। माता–पिता से बच्चों के विकास एवं शैक्षिक पहलुओं के संबंध में स्कूल की माँगों और अपेक्षाओं में सहायक होने की भी आशा की जाती है।

चरण 5 : किशोरावस्था वाले बच्चों के परिवार

किशोरावस्था की अपनी अलग समस्याएँ होती है जिनमें माता–पिता की आवश्यकता पड़ती है तथा यह अवस्था माता–पिता तथा उनके बच्चों के लिये अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हो सकती है। जैसे ही बच्चे किशोरावस्था से युवावस्था में प्रवेश करने वाले हों, माता–पिता को अपने बच्चों की स्वतंत्रता एवं उत्तरदायित्व में एक संतुलन स्थापित करने की चेष्टा करनी चाहिये उन्हें इस संबंध में बच्चों को योजनाएँ बनाकर उन पर अमल करने की शिक्षा देनी चाहिए। यह उनके आगे के

जीवन में उनके लिये बहुत लाभदायक होगा और जीवन की विभिन्न स्थितियों में उनकी सहायता करेगा।

चरण 6 : नई शुरुआत करने वाले केंद्रों के रूप में परिवार

जब नववयस्क काम करने या उच्च शिक्षा प्राप्त करना प्रारंभ कर देते हैं तो माता–पिता थोड़ा–थोड़ा अकेलेपन का अनुभव करना प्रारंभ करते हैं। कई बार इसे घोंसला खाली हो जाने के लक्षण के रूप में लिया जाता है। किंतु इसके साथ ही उनकों बच्चों के लिये सहायक घर का आधार बनाये रखने की भी आवश्यकता होती है। बच्चों को विभिन्न सांस्कृतिक, धार्मिक, व पारम्परिक परिवार आधारित कार्यकलापों जैसे विवाह, जन्मदिन समारोह तथा अन्य समारोहों में सहायता एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। इनमें वे माता–पिता एवं परिवार के संबंधियों के साथ सम्मिलित होते हैं।

चरण 7 : बीच के वर्षों में परिवार

किसी दम्पत्ति के लिये यह परीक्षा का समय होता है जिन्हें एक बार फिर से आपस में ही साथ–साथ रहने के जीवन से समझौता करना पड़ता है। इस समय यह आवश्यक होता है कि वह अपनी कुछ रुचियाँ विकसित करें जिसे कि काम न होने पर वे अपने आपको व्यस्त रख सकें। सेवा निवृत्ति से आय में कमी होने के कारण आवश्यक हो जाता है वह सादे जीवन–यापन को अपनायें।

चरण 8 : बाद के वर्षों में परिवार

इस समय परिवार के सदस्यों को शोकावस्था का सामना करके अकेले रहने के लिये तैयार होना सीखना पड़ता है। समाज की अपेक्षायें बच्चों को वृद्ध माता–पिता की चिन्ताओं से दर ले जाएँगी। कई बार माता–पिता को आवश्यक सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिये घर के लिये नर्स या अन्य सहायकों की सहायता लेनी पड़ जाती है।

पारिवारिक संसाधन

पारिवारिक आवश्यकतायें मनुष्य की मूल आवश्यकताओं से संबंधित है जैसा कि अब्राहम मास्लो ने अपनी आवश्यकताओं का सोपान सिद्धांत में वर्णन किया है। इस सिद्धांत के अनुसार सभी व्यक्तियों की पाँच मूलभूत आवश्यकतायें होती हैं। यह हैं

- शारीरिक आवश्यकतायें–खाना, पीना, यौन संबंध, स्वच्छ हवा तथा अच्छा स्वास्थ्य।
- सुरक्षात्मक आवश्यकतायें–सर के ऊपर छत होना, घर, कपड़े आदि।
- प्यार और परिवार का भाग होने की आवश्यकता – किसी से जुड़े होने के लिए परिवार या समुदाय होना, ज़रूरत के समय कोई सहारा होना, अपनी स्वीकृति होने पर, प्यार देने व लेने की आवश्यकता।
- सम्मान–आत्म सम्मान और दूसरों के लिए सम्मान देने की आवश्यकता।
- आत्म – वास्तवीकरण – आत्मसिद्धि तथा अपनी क्षमताओं को समझने की तथा जीवन में कुछ बन पाने की आवश्यकता।

यह आवश्यकताओं के सोपानों का सिद्धांत ग्राफ के रूप में एक पिरामिड की शक्ल में दिखाया जा सकता है। नीचे के स्तर की आवश्यकताओं का ऊपर के स्तर की आवश्यकताओं पर पहुंचने से पहले कुछ हद तक पूरा होना आवश्यक है।

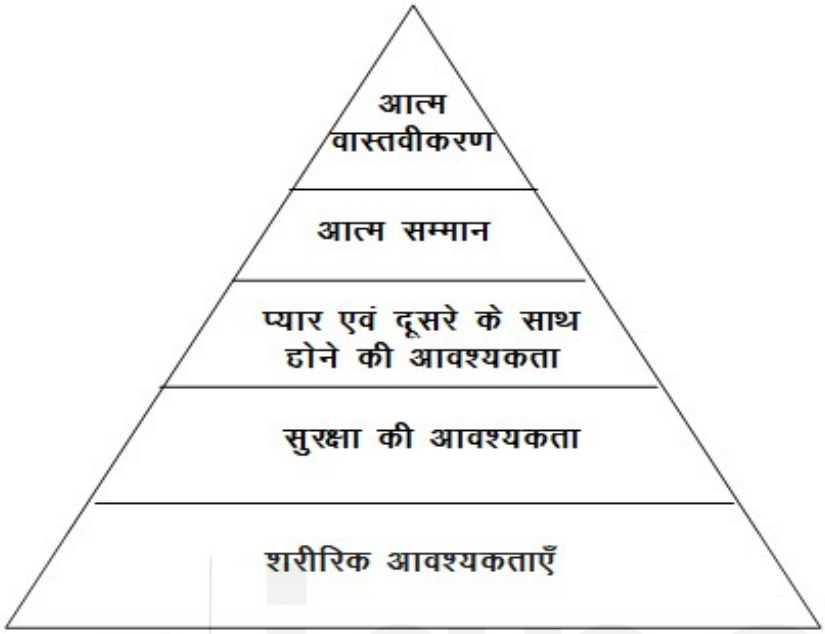

मासलों का आवश्यकता सोपान सिद्धांत

परिवार की आवश्यकताएँ असीमित होती हैं और उन आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन सीमित । परिवार या व्यक्ति अपनी असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मानवीय या गैर–मानवीय साधनों का प्रयोग करेगा। परिवार को अपने पास उपलब्ध साधनों का प्रयोग अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने के लिये व्यवस्थित करना होगा। पारिवारिक साधनों के संबंध में चर्चा परिवार जीवन चक्र के विभिन्न चरणों तथा परिवार के आकार के संबंध में चर्चा के समय की जा चुकी है। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि परिवार जीवन–चक्र की समस्त घटनाएँ पारिवारिक साधनों को कम करती हैं। पारिवारिक साधनों पर की जाने वाली माँगे बहुत अधिक होती हैं, विशेष रूप से तब जबकि एक चरण के समाप्त होने से पहले ही दूसरा प्रारंभ हो जाता है। विवाहित दम्पत्ति के लिये अपने विवाह के पहले कुछ सप्ताहों या महीनों में यह निश्चित कर लेना आवश्यक है कि वे पहला बच्चा कब करेंगे, कितने बच्चे करेंगे और उनके बीच में कितना अंतर रखेंगे। जैसा कि ऊपर बताया गया है कि परिवार का आकार परिवार के सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति व संतुष्टि को प्रभावित करता है। हर बच्चे को मानसिक, मनोवैज्ञानिक तथा

आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ संतुलित आहार, पर्याप्त कपड़ों, सुरक्षित शरण स्थल, उपयुक्त शिक्षा, माता–पिता का ध्यान एवं प्यार तथा चिकित्सा सुविधा प्राप्त करने का अधिकार है।

विवाह

विवाह से पूर्व एक दूसरे को जानने पहचानने का प्रयत्न तथा विवाह दो ऐसे प्रमुख मुद्दे हैं जिनमें अधिकतर किशोर व्यस्त रहते हैं। सामान्यतः किशोरावस्था के विवाह विभिन्न कारणों से काफी संख्या में अलग–थलग रहने तथा तलाक में परिणत होते हैं कुछ किशोरों को लड़की के गर्भवती हो जाने के कारण मजबूरन विवाह करना पड़ता है, अन्य परिवार की समस्याओं से बचने के लिये विवाह कर लेते हैं तो कुछ कोई अपनी देखभाल करने वाला और उनके लिये निर्णय लेने वाला लाने के लिये विवाह करते हैं तो कुछ अन्य स्कूल की पढ़ाई से बचने के लिये विवाह कर लेते हैं। कुछ लोग चल रही परम्पराओं के कारण भी विवाह कर लेते हैं। नवयुवकों को विवाह के लिये तैयार करने के लिये उपयुक्त शैक्षिक कार्यक्रमों की आवश्यकता है क्योंकि भारत में विवाह एक स्थाई संबंध माना जाता है।

विवाह के संबंध में चर्चा करते समय सामान्य रूप से निम्नलिखित प्रश्न उठाये जाते हैं व्यक्ति किसी कारण विवाह करते हैं? मुख्य रूप से कितने प्रकार के विवाह होते हैं? व्यक्ति किस प्रकार से अपने साथी से मिलता है? विवाह के लिये एक युवक व युवती की सबसे उपयुक्त आयु क्या है? क्या दहेज या दुल्हन के लिये भुगतान एक अच्छी बात है? विवाह की सामान्य रीतियाँ क्या हैं?

भारत में विवाह सामान्यतः निम्न प्रकार से वर्गीकृत किये जाते हैं– युवक युवती दोनों के स्वतंत्र चुनाव से या प्रेम विवाह, माता–पिता द्वारा साथी ढूँढ़ कर विवाह तथा जबरदस्ती अथवा व्यवस्था करके विवाह। इनको आगे और भी एक पत्नीक या बहुपत्नीक, सिविल, धार्मिक या प्रथानुसार विवाह में वर्गीकृत किया जा सकता है।

जिम्मेदार अभिभावकता

कई समाजों में विभिन्न सरकारों ने विवाह की कानूनी न्यूनतम आयु बढ़ाने के बाद भी जल्दी विवाह और जल्दी अभिभावकता एक संस्थापित पद्धति रही है और अभी भी है। भारत में विवाह के समय लकड़े व लड़की की न्यूनतम आयु क्रमशः 21 व 18 वर्ष होना आवश्यक है। किशोरों को इस बात की अधिक से अधिक जानकारी होना आवश्यक है कि विवाह करने एवं अपना परिवार बढ़ाने पर उनसे क्या अपेक्षा होगी। सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन अभिभावकता सहित पारिवारिक जीवन के अनेकों पहलुओं को प्रभावित कर रहे हैं परिणामस्वरूप आज के नवयुवक को उन सभी विषयों पर विचार करना होगा जिन पर पहले किसी को ध्यान देने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। कुछ प्रमुख मुद्दों पर विवाह से पहले ही ध्यान देने की आवश्यकता होगी। इनमें माता–पिता दोनों के द्वारा बच्चे पैदा करने की उपयुक्तता पर विचार करना भी सम्मिलित है। यदि बच्चे चाहिये तो क्या पिता उनकी देखभाल में सहायता करेंगे? क्या माता को घर से बाहर निकल कर काम करने की अनुमति होगी? पारिवारिक साधनों का कौन ध्यान रखेगा? माता–पिता बनने से काफी जिम्मेवारियाँ आ जाती हैं जो कि समय के साथ बढ़ती जाती हैं। चूंकि माता–पिता बनने को पारिवारिक जीवन का एक स्वाभाविक तरीका माना जाता है इसलिये कुछ दम्पत्ति तो अभिभावकता के मतलब को गंभीरता से समझने का प्रयास ही नहीं करते।

अभिभावकता के कुछ अभिप्रेत अर्थ निम्न प्रकार हैं :

1) भूख और वित्तीय असुरक्षा से बचने के लिये माता–पिता को बच्चों की संख्या के संबंध में योजना बनानी चाहिए। समझ आने तक सहायता कर पाने और पालने की क्षमता के आधार पर ही बच्चे पैदा करने चाहिए।

2) अपने बुढ़ापे में बच्चों से प्राप्त होने वाले लाभ के प्रति आश्वस्त रहने के लिये माता–पिता को बच्चों को मार्गदर्शन एवं दिशा–निर्देश देना चाहिए

जिससे कि बच्चों में बड़े होने पर ठीक मूल्य विकसित हों, उनका विकास ठीक हो। .

3) एक सुव्यवस्थित एवं अनुशासित समाज बनाने के लिये माता पिता को ऐसा परिवार बनाने के लिये प्रयत्न करना चाहिए जहाँ सभी सदस्यों को अपने अधिकार और कर्तव्य, दोनों का ज्ञान हो, जहाँ समाज के लाभों को समझा जाये और साथ ही उसे व्यवस्थित करने के लिये अपेक्षित अपने कर्तव्य निभाए जाएँ।

4) माता–पिता जो अपने साथी की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करने की ओर पूरा ध्यान देते हैं, वास्तव में, अपने संबंधों के बिगड़ने की संभावनाओं को कम (यदि दूर नहीं) करते हैं।

जिम्मेदार अभिभावकता पर विचार–विमर्श परिवार नियोजन के संबंध में चर्चा के बिना अध पूरा ही रह जायेगा। परिवार नियोजन बच्चों के जन्म एवं उनके बीच के अंतर को नियंत्रित करने के साथ–साथ परिवारों के जीवनयापन को उन्नत बनाने का साधन हैं इसके द्वारा बच्चों को जन्म दे सकने वाले आयु वर्ग के माता–पिता की सन्तान प्राप्ति में सहायता की जाती है तथा माता–पिता और भावी माता–पिताओं को परामर्श उपलब्ध कराया जाता है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) मास्लों के आवश्यकता सोपान सिद्धांत को चित्र के रूप दर्शाएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) जिम्मेदार अभिभावक के विभिन्न अभिप्रेत अर्थ क्या–क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2.4 परिवार जीवन शिक्षा से संबंधित पारम्परिक भारतीय मान्यताएँ

भारत में, कुछ अन्य एशियाई तथा प्रशांत देशों में सामाजिक–सांस्कृतिक मान्यताएँ जैसे बेटे की अधिक चाह, जल्दी विवाह तथा समाज में महिलाओं को थोड़ा नीचा स्थान दिया जाना आदि बिल्कुल स्पष्ट हैं। परिवार के क्रम में निरंतरता, सामाजिक सुरक्षा जो कि परिवार के साथ–साथ रहने से आती है, कुछ धार्मिक परम्पराओं (विशेष रूप से हिंदू धर्म की) के अनुसरण में माता–पिता की मृत्यु के बाद उनकी आत्मा की मुक्ति के लिए किये गए धार्मिक अनुष्ठान, माता–पिता के लिए उपलब्ध निशुल्क श्रमिक (सन्तान) तथा अधिक आय तथा दहेज के रूप में

माता–पिता को मिलने वाले आर्थिक लाभ आदि सभी चीज़ें हमारे देश में परिवार से संबंधित महत्त्वपूर्ण प्रेरक तत्व हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चे माता–पिता की फसल बोने व काटने में, खाना बनाने में, पानी लाने में तथा छोटे भाई बहनों का ध्यान रखने में मदद करते हैं। बाल मजदूरी (यद्यपि गैर–कानूनी हैं) की प्रथा जो कि असंगठित क्षेत्र में विद्यमान है, गरीबी के शिकार परिवार की आय बढ़ाने में मदद करती है। अभी भी ग्रामीण क्षेत्र में सामाजिक रीति–रिवाज के कारण विवाह के लिये न्यूनतम आयु निर्धारित होने के बावजूद भी लड़कियों को कम आयु में शादी करके कम आयु में ही बच्चे पैदा करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। यद्यपि कम आयु में बच्चे पैदा करना सामाजिक रूप से स्वीकृत है किंतु इसके कारण युवा पीढ़ी की शैक्षिक, सामाजिक तथा आर्थिक संभावनाएँ सीमित हो जाती हैं। इस प्रक्रिया में ग्रामीण क्षेत्रों में तथा गंदी बस्तियों के समुदायों में कम आयु में विवाह तथा बच्चों का अनियोजित जन्म माता तथा बच्चे, दोनों के खराब स्वास्थ्य के लिये जिम्मेदार पाए गए हैं। इस देश में बाल मृत्यु–दर का प्रतिशत, विभिन्न बीमारियों के कारण, बहुत अधिक है। इतिहास के अनुसार, भारत में परम्परागत तथा आदर्श परिवार संयुक्त परिवार है। एक संयुक्त परिवार में सामान्यतया तीन से चार जीवित पीढ़ियाँ जिनमें एक घर में एक साथ निवास करने वाले चाचा, चाची, भतीजी, भतीजे और दादा–दादी शामिल हैं। परिवार वृद्धों की सहायता करता है, विधवाओं, अविवाहित व्यस्कों और विकलांगों की देखभाल करता है, बेरोज़गारी के दौरान सहायता करता है और सुरक्षा तथा सहायता और सह–भावना प्रदान करता है। भारतीय संस्कृति में हमेशा से परिवार के संयुक्त रूप को वरीयता प्रदान की जाती रही है। पारम्परिक संयुक्त परिवार की प्रथा अपने अनेकों लाभों के होते हुए भी अब घटती जा रही है। शहरी तथा ग्रामीण दोनों समाजों में बालक का जन्म भगवान के आशीर्वाद के रूप में लिया जाता है। इस प्रकार की कुछ मान्यताएँ हमारी संस्कृति में इतने गहरे बैठी हुई हैं कि इनको तत्काल बदल पाना बहुत मुश्किल है।

विवाह सामाजिक सांस्कृतिक कर्त्तव्य में गहराई तक गया हुआ है। एक भारतीय परिवार की पारम्परिक मान्यता यह है कि एक लड़की–लड़के का विवाह लड़की–लड़के के परिवार के समान सामाजिक स्तर वाले परिवार के लड़के–लड़की से किया जाना चाहिये। इसमें लड़के–लड़की की आय, शिक्षा का स्तर तथा उनके मेल योग्य होने आदि पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है। अधिकतर लड़का लड़की से 2–7 वर्ष बड़ा हो तो विशेष रूप से परिवारों द्वारा निश्चित किये गये विवाहों में अच्छा माना जाता है।

शहरी इलाकों में आजकल लड़की की शादी में सबसे अधिक ध्यान देने वाली बात, लड़के की आय तथा लड़के के माता–पिता का आर्थिक स्तर बन गई है। परम्परानुसार यह माना जाता था कि विवाह माता–पिता की सहमति और परामर्श से किया जाना चाहिए। कई मध्यवर्गीय व उच्च मध्यवर्गीय रूढ़िवादी परिवारों में धार्मिक समारोह के माध्यम से शादी से पहले जन्मपत्री मिलाई जाती है। परम्परावादी भारतीय समाज में दहेज प्रथा का प्रचलन नहीं था किंतु उच्च मध्य वर्ग तथा उच्च वर्ग में दहेज प्रणाली बदलती हुई मान्यताओं के संदर्भ में बढ़ती जा रही है। यद्यपि कानूनी रूप से दहेज को समाप्त कर दिया गया है किंतु यह पूरे ज़ोर के साथ अभी भी विद्यमान है और लड़कियों के माता–पिताओं और लड़कियों के जीवन को दयनीय बना रहा है। कभी–कभी दहेज को लड़की द्वारा माता–पिता से उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हिस्से के अधिकार रूप में न्यायोचित ठहराने का प्रयत्न किया जाता है। वास्तव में कई बार दहेज माता–पिता द्वारा उधार लेकर दिया जाता है।

भारत एक पितृसत्तात्मक समाज है और लड़कों को हमेशा वरीयता प्रदान की जाती रही है। क्योंकि लड़कियों की तुलना में लड़कों की अधिक चाहना की जाती है, उन्हें अधिक सम्मान प्रदान किया जाता है और उन्हें विशेषाधिकार दिए जाते हैं। लड़कों को इस तरह पाला जाता है कि वे दृढ़, कम सहिष्णु, आत्मनिर्भर, आत्म–विश्वस्त, अपनी माँग रखने वाले और निरंकुश बने। इसके विरीत, लड़कियो

को छोटी आयु से ही आत्म–बलिदानी घरेलू, निवाह करने वाली, पालन–पोषण करने वाली, परोपकारी, अनुकूलनकारी, सहिष्णु और परिवार को सर्वोच्च महत्त्व देने वाली बनने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है।

लड़का उत्पन्न न कर पाने के लिए पत्नी को ही दोषी ठहराया जाता था महिलाओं के लिए घर एक आदर्श स्थान माना जाता था और उन्हें घर के बाहर काम करने अथवा नौकरी ढुँढ़ने के लिए हतोत्साहित किया जाता था। एक परम्परागत भारतीय परिवार में, अपना आदर्श रूप में पर निर्भर, आज्ञाकारी, संग्रह करने वाली, विनीत, विनम्र और हर प्रकार से पति को प्रसन्न करने वाली होती है। बच्चे पालना पत्नी की मुख्य जिम्मेदारी मानी जाती थी। घर की देखभाल करना और बूढ़े माता–पिता तथा रिश्तेदारों की सेवा करने का जिम्मेदारी भी उसके लिए सुनिश्चित की गई थी। परिवार के मुखिया को ही निर्णय लेने का विशेषाधिकार था। लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए हतोत्साहित किया जाता था। परन्तु शहरी समाज में, परिदृश्य तेजी से बदल रहा है। भारत में, यह माना जाता है कि यदि महिला घर के बाहर नौकरी करेगी, तो परिवार उपेक्षित हो जाएगा। गरीब परिवारों की महिलाएँ दूसरों के लिए सभी प्रकार के काम करती थी।

परम्परागत् भारतीय समाज में, अर्न्तजातीय विवाह को हतोत्साहित किया जाता था। धीरे–धीरे सामाजिक परिवर्तन आ रहे हैं परन्तु परम्परागत विवाह अभी भी प्रचलन में है।

जहाँ तक सेक्स की भूमिका/सेक्स सम्बन्ध और सेक्स सम्बन्धी जिम्मेदारियाँ के बारे में जानकारी देने की बात है, परम्परात् भारतीय समाज को एक बन्द समाज माना जाता था। सैक्स लगभग एक वर्जित विषय था। सेक्स और सेक्सुएलटी (यौनिकता) के मामलों में खुले रूप से विचार–विमर्श नहीं किया जाता था। सेक्स शिक्षा पठनीय रूप में उपलब्ध नहीं थी।

परम्परागत् भारतीय समाज में माता–पिता और बच्चों के मध्य संचार एकक पत्रीय होने की प्रवृत्ति है। बच्चों से यह उम्मीद की जाती है कि वे अपने माता–पिता की बात सुने, उनका सम्मान करें और उनकी आज्ञाओं का पालन करें। सामान्यतया किशोर अपनी व्यक्ति्गत् बातें अपने माता–पिता से नहीं बता पाते क्योंकि उन्हें लगता है कि उनके माता–पिता उनकी समस्याएँ नहीं सनेंगे और न ही उन्हें समझ पाएंगे।

समाज विभिन्न जातियों में विभक्त था तथा धार्मिक रीति–रिवाजों को पूरी कड़ाई से लागू किया जाता था। माता–पिता द्वारा बच्चों के विकास के लिये कड़ा अनुशासन लागू किया जाता था। यद्यपि शहरी क्षेत्रों में इन मान्यताओं के प्रभाव में परिवर्तन आया है किंतु ग्रामीण क्षेत्रों में परिवारों द्वारा लिए जाने वाले विभिन्न निर्णयों में यह अभी भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पारिवारिक जीवन की क्रियात्मकता से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर मान्यताओं को उन्नतिशील बनाने का काम बहुत लम्बा है तथा यह एक कठिन प्रक्रिया है किंत कई देशों के अनुभव ने दिखाया है कि इसे प्राप्त किया जा सकता है। सभी समाजों में पारम्परिक मान्यताओं को चुनौतियाँ दी जा रही हैं जिसके परिणामस्वरूप किशोर बालकों तथा माता–पिता के बीच टकराव आ रहे हैं।

2.5 परिवार जीवन शिक्षा में विभिन्न प्रकार की मान्यताओं का महत्त्व

अब तक आपको यह समझ में आ गया होगा कि पारिवारिक जीवन शिक्षा में मान्यताओं का कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है।

पारिवारिक जीवन शिक्षा में मान्यताओं को एक स्थाई विषय की तरह पहचाना गया है किंतु पारिवारिक जीवन शिक्षकों के लिये एक समस्या के रूप में पहचानी गई है। पारिवारिक जीवन शिक्षा में मान्यताओं की महत्ता व विभिन्न मान्यताओं मुद्दों तथा चिन्ताओं से संबंधित विषयों पर पारिवारिक जीवन शिक्षकों के उचित प्रत्युत्तर

पर प्रश्न उठाए गए हैं। पारिवारिक जीवन शिक्षा कार्यक्रमों में कौन–सी मान्यताओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए किनको नहीं? क्या शिक्षकों को अपनी व्यक्तिगत मान्यताओं की प्रशिक्षण के सहभागियों के साथ चर्चा करनी चाहिए अथवा नहीं? विवादास्पद मान्यताओं से संबंधित प्रश्नों को समझाने का सबसे अच्छा तरीका क्या है। पारिवारिक जीवन शिक्षा के विभिन्न भागीदारों – माता–पिता बच्चे. सम्प्रदाय, राज्य, पारिवारिक जीवन शिक्षक व क्षेत्र की सम्भावित विभिन्न मान्यताओं का पारिवारिक जीवन शिक्षक कैसे सामना करें?

मान्यताओं के प्रकार

मान्यताएँ विभिन्न प्रकार की होती हैं। यद्यपि यहाँ पर एक सम्पूर्ण सूची देना संभव नहीं है तथापि हम यहाँ कुछ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मान्यताओं का निरीक्षण करेंगे जिनमें नीति या सदाचार, संबंधी, धार्मिक, सौन्दर्य बोधात्मक, स्वास्थ्य आर्थिक, कानूनी, सांस्कृतिक, शैक्षिक, व्यक्तिगत तथा विषय संबंधी मान्यताएँ सम्मिलित हैं। इनमें से अधिकांश प्रकार की मान्यताएँ पारिवारिक जीवन शिक्षा के लक्ष्य तथा विषय–वस्तु से संबद्ध हैं।

पारिवारिक जीवन शिक्षा के पीछे एक आधारभूत सिद्धांत है – भिन्न–भिन्न प्रकार की व्यक्तिगत तथा पारिवारिक मान्यताओं का आदर करना। नैतिक तथा सदाचार संबंधी मान्यताओं को व इन मान्यताओं के सांस्कृतिक, धार्मिक तथा व्यक्तिगत मूल्यों के साथ संबंधों पर ध्यान देने की विशेष आवश्यकता है। यहाँ हम केवल चार प्रकार की मान्यताओं पर ही विचार करेंगे – नैतिक व सदाचार संबंधी मान्यताएँ, सांस्कृतिक मान्यतायें, धार्मिक मान्यतायें तथा व्यक्तिगत मान्यताएँ। हम यह भी पढ़ेंगे कि कैसे वे पारिवारिक जीवन शिक्षा में आधारभूत सिद्धांतों की तरह कार्य करती हैं।

नैतिक या सदाचार संबंधी मान्यताएँ

बहुत से पारिवारिक जीवन शिक्षक 'नैतिक' शब्द से परेशान हो जाते हैं क्योंकि यह एक आपेक्षिक शब्द लगता है। यह विभिन्न समाजों व सांस्कृतियों में भिन्न होता है। नैतिक व सदाचार शब्द का अर्थ एक ही है व उनका एक दूसरे के लिये प्रयोग किया जा सकता है। शाब्दिक तौर पर यह मानव व्यवहार व आचरण से संबंधित है और साधारणतया किसी भी कार्य के अच्छे या बुरे होने की नैतिक ईमानदारी से संबंध रखते हैं। नैतिक एवं सदाचार संबंधी मान्यताएँ सिद्धांतों या ठीक आचरण के नियमों के रूप में व्यक्त की जाती हैं। पारिवारिक जीवन शिक्षा में विभिन्न मान्यताओं जैसे व्यक्तिगत सत्यनिष्ठा, विभिन्नता व भिन्नता के प्रति उदारता, सामाजिक उत्तरदायित्व, व्यक्तियों के प्रति आदर, न्याय की अनुभूति इत्यादि के लिए महत्त्वपूर्ण स्थान है।

नैतिकता व सदाचार के लिये मूलभूत चीज़ है अपने व्यक्तिगत स्वार्थ से आगे जाकर किसी भी परिस्थिति से जुड़े लोगों के अधिकारों व हितों का बराबर व निरपेक्ष भाव से निरीक्षण करना। यहाँ पर आशय यह है कि अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर चीज़ों को दूसरे व्यक्तियों के दृष्टिकोण से देख पाने योग्य बनना। एक दूसरा किंतु उतना ही महत्त्वपूर्ण आश्य है यह अनुमान लगाना कि अन्य व्यक्तियों को होने वाले नुकसान को क्या कभी भी न्यायोचित ठहराया जा सकता है। पारिवारिक जीवन शिक्षा के अंतर्गत कई ऐसे अवसर आते हैं जब विवाह के अंदर हिंसा, असहनशीलता तथा जातिगत मनोग्रंथियों आदि पर विचार–विमर्श किया जा सकता है।

सांस्कृतिक मान्यताएँ

एक प्रकार से सभी मान्यताएँ सांस्कृतिक मान्यताएँ हैं क्योंकि मुख्य तरीका जिससे मनुष्य किसी मान्यता को ग्रहण करता है वह भाषा सीखने का है। भाषा एक सार्वजनिक सांस्कृतिक माध्यम है। अन्य चीज़ों के साथ–साथ मान्यता विशेष के प्रति प्रतिबद्धता प्रकट करने के लिये भाषा का प्रयोग किया जाता है। तथा किसी

ऐसी संस्कृति की कल्पना करना जिसमें, उदाहरण के लिये, कानूनी, आर्थिक, सौन्दर्य बोध संबंधी, नैतिक तथा बौद्धिक मान्यताएँ न हो कठिन होगा।

सांस्कृतिक मान्यताओं की दो महत्त्वपूर्ण बातें पारिवारिक जीवन शिक्षा के लिये भी महत्त्वपूर्ण हैं। यह हैं :

पहली बात है सभी संस्कृतियों की कुछ प्रमुख आदर्शों और कुछ आशंकाओं सम्भावित खतरों के प्रति प्रतिबद्धताएँ होती हैं। सामान्यतः किसी संस्कृति विशेष के नैतिक सिद्धांतों की प्रासंगिकता एवं उद्देश्य इन प्रमुख आदर्शों (जैसे समानता या पारिवारिक निरंतरता) को प्राप्त करना तथा संभावित आशंकाओं और खतरों से (जैसे शोषण या स्वायत्तता गंवाने से बचना) बचना होता है पारिवारिक जीवन शिक्षक जो कि विभिन्न सांस्कृतिक परिवेशों से आये समूहों के साथ काम करते हैं उनके लिये संस्कृति भिन्नताओं से अवगत और उनके प्रति संवेदनशील होने के साथ–साथ यह जानना भी आवश्यक है कि किस प्रकार ये भिन्नताएँ अपनी–अपनी संस्कृतियों के आदर्शों और भयों को प्राप्त एवं दूर करने में किस प्रकार प्रदर्शित होती हैं।

दूसरी बात यह है कि संस्कृति कभी भी स्थिर नहीं रहती है। संस्कृतियों के अपने अंदर ही व उसके प्रमुख आदर्शों और भयों को लेकर अंतर्विरोध हो सकता है। इनमें से कर अतविरोध पारिवारिक जीवन शिक्षा के प्रमुख विषयों से संबंधित हो सकते हैं। जैसे कौन–सा आदर्श अधिक महत्त्वपूर्ण है परिवार के प्रति निष्ठा या वैयक्तिक स्वायत्तता के प्रति निष्ठा)। चूँकि ये अंतः संस्कृति अंतर्विरोध संवेदनशील होते हैं और कई बार परिवारों के लिये समस्या उत्पन्न कर देते हैं लेकिन पारिवारिक जीवन शिक्षा कार्यक्रम कई बार व्यक्तियों को इन परिवर्तनशील आदर्शों का सामना करने के लिए तैयार नहीं करते हैं।

धार्मिक मान्यताएँ

यद्यपि धर्मों के बीच बहुत सारे अंतर हैं किंतु कई विशेषताएँ बहुत सारे धर्मों में समान होती हैं। जैसे (क) किसी एक या एक से अधिक सर्वोच्च सत्ता (ईश्वर) में विश्वास (ख) कुछ धारणाएँ (सामान्यतः बहुत जटिल धारणाएँ) जोकि सर्वोच्च सत्ता के साथ माने गए संबंधों के विषय में होती हैं (ग) मृत्यु कि उपरांत भी किसी न किसी प्रकार की विद्यमानता में विश्वास। इन बातों का पारिवारिक जीवन शिक्षा पर महत्त्वपूर्ण संबंध होता है।

सबसे पहले यह तो स्पष्ट ही है कि बहुत सी नैतिक धारणाएँ तथा धार्मिक धारणाएँ जैसे व्यक्तियों के प्रति आदर अनेकों संस्कृतियों में पाई जाएगी तथा कम से कम कुछ व्यक्तियों को यह विश्वास दिलाएगी कि नैतिक व आचार संबंधी मान्यताएँ तथा धार्मिक मान्यताएँ एक ही चीज़ है। इस प्रकार के विश्वास से संभावित गलतफहमियाँ उत्पन्न होती हैं क्योंकि कुछ धर्मों में नैतिक सिद्धांतों के संबंध में अलग मान्यताएँ होती हैं। इस प्रकार कुछ धर्म यह मानते हैं कि नैतिक सिद्धांतों का अपना महत्त्व है क्योंकि ये एक–सा एक से अधिक सर्वोच्च सत्ता के धर्मादेश हैं न कि इसलिये कि यह मानव संबंधों तथा मनुष्य के कार्यों को देखने, मूल्यांकित करने का सार्वभौमिक तरीका है।

स्पष्ट है कि पारिवारिक जीवन शिक्षकों को इन संभावित रूप में भिन्न विश्वासों के प्रति संवेदनशील होना होगा। लेकिन इसको एक गतिरोध के रूप में, जहाँ कि शिक्षक कुछ न कर पाए, नहीं लिया जाना चाहिए। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस संबंध में शिक्षक को खुले दिमाग एवं सकारात्मक रहते हुये पारिवारिक जीवन शिक्षा से संबंधित विषयों पर संतुलित रूप से विचार करने योग्य तथा अपना उदाहरण प्रस्तुत करने योग्य बनने का इच्छुक होना होगा।

दूसरे अधिकांश धर्मों में उपलब्ध नैतिक प्रणाली पारिवारिक जीवन शिक्षक को इनमें से कम से कम कुछ प्रणालियों की जानकारी प्राप्त करने का एक अवसर उपलब्ध करता है (उदाहरण स्वरूप – उनकी नैतिक धारणाओं एवं विश्वासों का पता लगाने तथा यह देखने कि किस प्रकार इन विश्वासों पर धार्मिक समुदायों के बीच

उनके द्वारा अपनाई गई धारणाओं के संबंध में स्पष्टकीकरण देने के लिये चर्चा की जा सकती है, इस प्रकार की छानबीन से सभी व्यक्तियों का, चाहे वह किसी भी धर्म से संबंधित हो, लाभ होगा।

व्यक्तिगत मान्यताएँ

पारिवारिक जीवन शिक्षा में मान्यताओं के संबंध में सबसे अधिक महत्त्व सामान्यतः व्यक्ति के, अपनी व्यक्तिगत मान्यताओं के अनुसार, अपने आपको समझने तथा दूसरे व्यक्तियों की व्यक्तिगत मान्यताओं का आदर करने पर दिया जाता है। हाम्म (1985) ने सार्वजनिक या सामाजिक नैतिकता तथा निजी या व्यक्तिगत नैतिकता में महत्त्वपूर्ण अंतर स्पष्ट किया है जो कि पारिवारिक जीवन शिक्षा के लिये भी महत्त्वपूर्ण है।

हाम्म के अनुसार सामाजिक नैतिक निर्णय अंतः व्यक्ति व्यवहारों के संबंध में होते हैं तथा मनुष्य की मूल आवश्यकताओं तथा भयों, ज़रूरतों और इच्छाओं जिनको या तो पूरा किया जाना होता है या उनसे बचना होता है, पर विचार करते हैं तथा ये विभिन्न स्तरों के जीवन यापन में से मनुष्य के एक प्रकार के जीवनयापन को चुनने की पूर्व–शर्त होते ही कुछ आधारभत सिद्धांतों, जो कि सामाजिक–नैतिकता के लिये आवश्यक हैं. में निम्नलिखित बात सम्मिलित होती हैं – (क) न्यायोचित रूप में न्याय (निपक्षता, भेदभाव न होना) (ख) विद्वेष न होना (दूसरों का नुकसान करने उनको चोट पहुँचाने से बचना) (ग) कम से कम परोपकारिता (अपनी मूलभूत आवश्यकताओं पूरा करने में नैतिक जोखिम) (घ) स्वतंत्रता (दूसरे के मामलों में दखल देने का कोई अधिकार नहीं) तथा (ङ) ईमानदारी (सच्चाई और धोखा न देना)। हाम्म के मतानुसार सामाजिक नैतिका उन बातों के संबंध में बताती है जा कि 'सबके लिये अच्छी' होती हैं तथा जिनका संक्षेप में उद्देश्य 'सबका सम्मान' होता है। हाम्म ने यह सुझाव दिया है कि यद्यपि व्यक्तिगत नैतिकता में सामाजिक नैतिकता की कुछ बातें सम्मिलिति होती हैं लेकिन व्यक्तिगत नैतिक निर्णय उन बातों के विषय में होते हैं जिनका संबंध "मेरे लिये अच्छे'' से होता है न कि

"सबके लिये अच्छे" से। संक्षेप में व्यक्तिगत नैतिकता का आधार "अपना ध्यान रखना'' होता है। इसलिये "अपने ध्यान" को सामाजिक नैतिकता के हित में छोड़ा जाना चाहिये। इसका पारिवारिक जीवन शिक्षकों के लिए, जो कि अपनी व्यक्तिगत मान्यताओं की पारिवारिक जीवन शिक्षा के क्षेत्र में भूमिकाओं से संबंधित है, बहुत अधिक महत्त्व है।

हाम्म ने दावा किया है कि यह अंतर एक महत्त्वपूर्ण अंतर है क्योंकि विषय वस्तु और सामाजिक तथा व्यक्तिगत नैतिकता की शिक्षा देने के लिए अपनाई जाने वाली नीतियाँ अलग–अलग है। सामान्य रूप से सामाजिक नैतिकता की शिक्षा के लिए सामाजिक नैतिकता के नियमों एवं सिद्धांतों पर गंभीरता एवं व्यवस्थित रूप से ध्यान देने की आवश्यकता होती है जबकि व्यक्तिगत नैतिकता की शिक्षा के लिये केवल मान्यताओं के संबंध में स्पष्टीकरण देने की ही आवश्यकता होती है।

परिवार और समाज कार्य मान्यताएँ

समाज–कार्य का मूल मानवतावाद है और यह कुछ निश्चित मान्यताओं पर आधारित है। समाज कार्य व्यक्ति के महत्त्व और गरिमा के विश्वास पर केन्द्रित हैं। परिणामतः परिवार के सभी सदस्यों के 'महत्त्व और गरिमा' को परिवार में सभी सदस्यों के द्वारा समझा जाना चाहिए और उसका सम्मान किया जाना चाहिए। एक निरंकुशहीन रूप में परिवार के सदस्यों को सम्मान किया जाना चाहिए, उन्हें स्वीकार किया जाना चाहिए उनकी देखभाल की जानी चाहिए तथा उनके लिए लगाव का प्रदर्शन किया जाना चाहिए। उनमें एक दूसरे के प्रति ईमानदारी होनी चाहिए।

जब परिवार के किसी सदस्य के साथ कोई अप्रिय घटना घटती है तो उसे प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और उसे जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रेरणा देनी चाहिए। परिवार के दूसरे सदस्यों को उसकी हिम्मत बँधानी चाहिए और उसे उसकी अर्न्तनिहित क्षमताओं की पहचान करानी चाहिए। परिवार जीवन शिक्षा में

उत्तरदायित्व, समर्पण, कठिन परिश्रम और एक–दूसरे के लिए सम्मान की भावना जैसी मान्यताओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

परिवार जीवन शिक्षा परिवार सम्बन्धी बहुत सारी सामाजिक समस्याओं का उन्मूलन करने अथवा उन्हें कम करने में सहायक होती है और पारिवारिक जीवन तथा सामाजिक कल्याण में वृद्धि करती है। यह पारिवारिक जीवन में आने वाली मुश्किल परिस्थितियों जैसे दुर्घटना, आत्महत्या, और मृत्यु का सामना करने में सहायता करती है और परिवार की आवश्यकताओं को पहचानने तथा उन्हें उपयुक्त रूप में सह–सम्बन्धित करने में सहायक होती है। अतः यह कहना उचित होगा कि समाज की मूल इकाई के रूप में परिवार की महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करने हेतु उन्हें सशक्त बनाने में परिवार जीवन शिक्षा अपना महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) पारिवारिक जीवन शिक्षा में नैतिक एवं सदाचार संबंधी मान्यताओं का महत्त्व बताइए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2.6 परिवार जीवन शिक्षा के लाभ

आइए अब कुछ उन आवश्यकताओं को देखते हैं जो कि परिवार जीवन शिक्षा को जन्म देती हैं :

1) परिवार जीवन शिक्षा शैक्षिक भूमिका उपलब्ध कराती है। परिवार हमेशा से मानव समाजों में मूल सामाजिक समूह के रूप में रह रहा है। उसकी संरचना उसके कार्यों में चाहे कितना भी अंतर हो किंतु यह मूल इकाई के रूप में विद्यमान रहता है किंतु इसका कोई सर्वसामान्य स्वरूप नहीं है। परिवार नाभिकीय हो सकते हैं या विस्तारित परिवार हो सकते हैं, एक पत्नीक या बहुपत्नीक हो सकते हैं लेकिन विश्व के अधिकांश भागों में परिवार का स्वरूप या कार्य परिवर्तन की स्थिति में है तथा इसकी शैक्षिक भूमिका गतिशील प्रकृति की है। इसलिये सभी को इसकी जानकारी होना आवश्यक है।

2) परिवार जीवन शिक्षा संकट के व्यवस्थापक के रूप में कार्य करती है। आज के किशोर ऐसे समय में बड़े हो रहे हैं जिसमें उन्हें अपने लिए अपनी पुरानी पीढ़ियों की तुलना में अधिक निर्णय लेने होंगे। वे अपने जीवन के साथ अधिक परीक्षण करते हैं, निर्णय लेते हैं, जोखिम उठाते हैं और अपने. ही अनुभवों से सबक लेते हैं न कि दूसरों के अनुभवों से। इसके कारण उन्हें परेशानी, विफलता, निराशा का सामना करना पड़ता और ऐसे जोखिम उठाने पड़ते हैं जो कि अंततः अपने आपको नष्ट करने वाले होते हैं। अतः परिवार जीवन शिक्षा की विभिन्न प्रकार की संकटपूर्ण परिस्थितियों से बचने में, व्यक्ति की सहायता के रूप में, महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

3) परिवार जीवन शिक्षा बचाव कार्य के लिए कौशल विकसित करती है तथा निर्णय लेने के लिए, विशेष रूप से किशोरों के लिए, जानकारी उपलब्ध

कराती है। बच्चों की हर नई पीढ़ी स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों का सामना करती है किंतु आज के स्कूल जाने वाले बच्चों के आयु वर्ग की चुनौतियाँ विशेष रूप से हतोत्साहित करने वाली है। बहुत कम आयु में ही बच्चों के सामने ऐसी स्थितियाँ आती हैं जिनमें उन्हें निर्णय लेने के लिये विषय विशेष की जानकारी होना तथा रक्षात्मक उपाय करने के लिए कौशला का आना जरूरी होता है। कई बार किशोर अपने आपको अपने साथियों के दबाव में आकर बहुत खतरनाक काम करने जैसे नशीली दवाओं का, मदिरा का सेवन करने, कभी–कभी यौन दुर्व्यवहार की स्थिति में पाता है जो कि उनके जीवन पर गंभीर प्रभाव डाल सकते हैं। इन विषयों पर युवा व किशोरों के साथ पारिवारिक जीवन शिक्षा के माध्यम से विचार किया जाना चाहिए।

4) परिवार जीवन शिक्षा व्यक्ति, बदलते हुये पारिवारिक ढाँचे एवं कार्यों के संबंध में, अपनी भूमिका समझ पाने में भी सहायकता करती है। अधिकतर समाजों में सामाजिक परिवर्तन की दर के अनुसार परिवार के वयस्क सदस्यों की भूमिकाओं को भी पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता होती है। जहाँ कभी परम्पराएँ पारिवारिक व्यवहारा के लिये मापदण्ड निर्धारित कर देती थीं वहाँ अब माता–पिता को उनकी अपनी भूमिकाओं की पुनः जाँच करने के लिये चुनौतियाँ मिलती हैं और उनसे बदलते हुए पारिवारिक ढाँचे और कार्यों के अनुरूप बनने की माँग की जाती है।

5) परिवार जीवन शिक्षा पारिवारिक जीवन चक्र की ठीक–ठीक जानकारी प्राप्त करने में सहायता करती है। परिवार जीवन शिक्षा कार्यक्रम में तेजी लाने का आधार पारिवारिक जीवन–चक्र का विस्तृत रूप से फैले होना है। चक्र का प्रत्येक नया चरण नई शिक्षा की आवश्यकता को जन्म देता। पहले समय में शिक्षा की आवश्यकता की अनौपचारिक कार्यों जैसे पढ़ने, साथियों से पूछने, व्यवसायियों से परामर्श लेने (डॉक्टर, धर्म, गुरूओं, पंडितों आदि)

तथा अपने व्यक्तिगत अनुभवों से पूरी हो जाती थीं। इनमें से कुछ चीज़ें अब परिवार जीवन शिक्षा कार्यक्रमों के रूप में औपचारिक रूप से उपलब्ध कराई जा रही हैं। उदाहरण के रूप में नियोजित मातृ–पितृत्व का कार्यक्रम बहुत से देशों में जनसंख्या में कमी लाने तथा जीवन स्तर में सुधार लाने के उद्देश्य से प्रारंभ किया गया है। इस विश्वास ने भी कि मातृ–पितृत्व, कौशल, ज्ञान एवं अभिरुचियों दूसरों को देख कर सीखने की अपेक्षा शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से सीखे जा सकते हैं, विश्व के अनेक देशों ने इस प्रकार के कई कार्यक्रमों को प्रारंभ कराया है।

परिवार जीवन शिक्षा की आवश्यकता

यह स्पष्ट है परिवार जीवन शिक्षा एक नया क्षेत्र है तथा एक ऐसा क्षेत्र है जो कि निरंतर व्यावसायिक कार्यक्रम बनने की ओर अग्रसर है। परिवार जीवन शिक्षा की कुछ आवश्यकताएं नीचे दी जा रही हैं:

1) परिवार जीवन शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति को परिवार जीवन शिक्षा के संबंध में जानने की ज़रूरत होती। सभी व्यक्ति आठ से दस घंटे का समय अपने जीवनयापन के लिये आय प्राप्त करने हेतु अपने काम में लगाते हैं। इसके लिये हम कई वर्षों तक विभिन्न कार्यक्रमों का अध्ययन करते हैं। लेकिन बाकी के चौदह से सोलह घंटों के लिये, जोकि हम घर पर अपने परिवार के साथ तीन करते हैं, उसके लिये कुछ भी नहीं है। इसके लिये प्रत्येक व्यक्ति को औपचारिकता एवं अनिवार्य दिशा निर्धारण की आवश्यकता है। इसलिए सभी व्यक्तियों को पारिवारिक जीवन शिक्षा एक जीवन समृद्धि कार्यक्रम के रूप में दिए जाने की आवश्यकता है।

   सारी दुनिया में परिवार के ढाँचे में तेजी से परिवर्तन आ रहा है। यह विस्तारित से नाभिकीय परिवारों की ओर बढ़ रहा है। किंतु इसमें मार्गदर्शन

देने के लिये कुछ भी उपलब्ध नहीं है इसलिये सामने आ रही आवश्यकताओं का सामना करने के लिए परिवार जीवन शिक्षा संबंधी कार्यक्रमों की तत्काल बहुत अधिक आवश्यकता है।

2) इस क्षेत्र में तथा इससे संबंधित क्षेत्रों में काम कर रहे व्यावसायियों को प्रशिक्षण की आवश्यकता है। ऐसे लोग जो गैर सरकारी संस्थाओं के साथ पारिवारिक जीवन शिक्षक के रूप में काम कर रहे हैं जैसे पैरा मेडिकल, व्यवसायी तथा अध्यापक आदि को पारिवारिक जीवन शिक्षा के क्षेत्र में दिशा–निर्देश या प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

3) कार्य एक पूर्णकालिक व्यवसाय बन जाता है जिससे आय प्राप्त होती है। इस समय विश्व में तथा भारत में बहुत सारे लोग पूरे समय के लिये इस क्षेत्र में पारिवारिक जीवन शिक्षक के रूप में विभिन्न परिवेशों में विशिष्ट अर्हताओं के साथ काम कर रहे हैं और अपनी सेवाओं के लिये भुगतान प्राप्त कर रहे हैं।

4) प्रशिक्षण स्कूल तथा पाठ्यक्रम निर्धारित किए गए हैं। बहुत से विभाग तथा स्कूल स्नातक व स्नातक पूर्व स्तर पर पारिवारिक जीवन शिक्षा तथा पारिवारिक अध्ययन के लिए स्थापित किए गए हैं। पारिवारिक जीवन शिक्षा तथा पारिवारिक अध्ययन के क्षेत्र में पहला पी एच डी कार्यक्रम न्यूयार्क के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में 1962 में स्थापित किया गया था। टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेस, मुम्बई में भी पारिवारिक अध्ययन के लिये एक इकाई स्थापित है।

5) जो लोग प्रशिक्षित हैं उन्होंने अपने व्यावसायिक संगठन बना लिये हैं। संस्थापित व्यावसायिक संगठन निरंतर पारिवारिक जीवन शिक्षा के क्षेत्र में कार्य व्यावसायिकों के लिये निरंतर संकल्पित ज्ञान के भंडार में तथा

संबंधित कौशलों के विकास में वृद्धि कर रहे हैं जो कि इसको परिभाषित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं।

बोध प्रश्न 4

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) पारिवारिक जीवन शिक्षा की किन्हीं तीन आवश्यकताओं के विषय में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2.7 सारांश

इस इकाई में हमने अपना विचार–विमर्श यह कह कर प्रारंभ किया था कि भारत में आपस में घनिष्ठता से जुड़े हुए परिवारों की काफी समय से चली आ रही प्रथा रही है। यद्यपि आज समाज एक परिवर्तन के दौर में है तथा कई परिवार अपने युवा सदस्यों के उनके वयस्क जीवन के लिये तैयार करने में कठिनाइयाँ अनुभव कर रहे हैं। अतः यहाँ पर पारिवारिक जीवन शिक्षा की आवश्यकता है। हमने पारिवारिक जीवन शिक्षा के लिए विभिन्न आवश्यकताओं को सूचीबद्ध किया है। इसको कई भूमिकाएँ निभानी होती हैं। जो भूमिका यह निभाती है वह शैक्षिक से लेकर संकट व्यवस्था तक में से किसी प्रकार की हो सकती है। यह विशेष रूप

से किशोर वर्ग की आवश्यकताओं का समाधान करने का प्रयास करती है। इसीलिये पारिवारिक जीवन शिक्षा एक व्यापक क्षेत्र है एवं अभी तक इसक विषय अस्पष्ट बने हुए हैं। कोई भी चीज़ जो परिवार के पूर्ण विकास एवं उसके स्वस्थ्य सुदृढ़ रहने में योगदान दे सकती है उसे पारिवारिक जीवन शिक्षा के अंतर्गत सम्मिलित किया जा सकता है। अतः पारिवारिक जीवन शिक्षा के विभिन्न उपविषय हैं जैसे परिवार, उसके प्रकार एवं कार्य, परिवारों की भूमिका, संबंध एवं उत्तरदायित्व, पारिवारिक जीवन चक्र, पारिवारिक संसाधन, विवाह एवं जिम्मेदार अभिभावकता आदि।

इकाई के बाद के भाग में पारम्परिक भारतीय मान्यताओं से संबंधित आश्रमों एवं पुरुषार्थों आदि पर चर्चा की गई है। चूंकि पारिवारिक जीवन रक्षा एक मान्यताओं से संबंधित धारणा है, अतः पारिवारिक जीवन प्रकार की मान्यताओं जैसे नैतिक या सदाचार संबंधी, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा व्यक्तिगत तथा उनके तात्पर्यों पर चर्चा की गई है। इकाई के अंत में पारिवारिक जीवन शिक्षा के विभिन्न लाभों के बारे में बताया गया है।

2.8 शब्दावली

नाभिकीय परिवार : वह परिवार जिसमें केवल माता–पिता और बच्चे ही साथ रहते हों।

विस्तृत : वह परिवार जिसमें माता–पिता बच्चे अन्य नजदीकी रिश्तेदार जैसे दादा–दादी, पोता–पोती, चाचा, मामा आदि साथ–साथ रहते हों।

2.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एरियस, एम.ई. श्वानेवेल्डश्र, जे.डी. मौस जे.जे. संस्करण (1993), हैंडबुक ऑफ फैमिली लाइफ एजुकेशन (फाउंडेशन ऑफ फैमिली लाइफ एजुकेशन), सागा पब्लिकेशन, भाग–1 और 2।

यूनेस्को (1998), फैमिली लाइफ एजूकेशन : पैकेज वन, पी आर ओ ए पी बैंकॉक।

शेषादरी, सी. और पांडे जे.एल. : पॉपुलेशन एजुकेशन ए नेशनल सोर्स बुक, एन सी ई आर टी, नई दिल्ली।

इंटरनेशनल प्लांड पेरेन्टहुड एसोसिएशन (1985), ग्रोइंग अप इन ए चेंजिंग वर्ल्ड, पार्ट वन (यूथ आर्गेनाइजेशन एण्ड फैमिली लाइफ एजुकेशन : एन इंट्रोशक्शन), लंदन, आई पी पी एफ।

थॉमस, ग्रेशियस (1995). एड्स एंड फैमिली एजुकेशन, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

2.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) परिवार : अर्थ, प्रकार एवं कार्य

परिवार समाज की मूल इकाई है। यद्यपि सामाजिक वैज्ञानिकों ने पारिवारिक संरचना एवं संगठन के विभिन्न स्वरूपों का बहुत अध्ययन किया है किंतु फिर भी वे एक ऐसा व्यापक, संस्कृति रहित सामान्यीकृत विकसित करने में कठिनाई का अनुभव करते हैं जोकि विभिन्न प्रकार के समाजों के परिवारों पर लागू हो। एक प्रमुख कठिनाई 'परिवार' की संकल्पना से जुड़ी

परिभाषाओं के समय सामने आती है। परिवार किससे मिलकर बनता है इस महत्वपूर्ण प्रश्न का ही उत्तर देना सरल नहीं है क्योंकि अपने आप में 'परिवार' शब्द काफी अस्पष्ट है। इसकी स्पष्ट रूप से व्याख्या करने के लिये परिवारों के प्रकारों को देखना अत्यंत आवश्यक है। मूलरूप में दो प्रकार के परिवार होते हैं – नाभिकीय परिवार तथा विस्तारित परिवार।

विस्तारित परिवार में माता–पिता, दादा–दादी, परदादा–परदादी सब एक ही घर में या आस–पास रहते हैं। परिवार के सदस्य आर्थिक एवं सामाजिक सांस्कृतिक रूप से एक दूसरे से जुड़े होते हैं। पारम्परिक विस्तारित परिवार के सदस्य सामान्यतः अधिक सुस्त होते हैं। जबकि नाभिकीय परिवार में अकेले माता–पिता और उनके बच्चे ही हैं। इस प्रकार के परिवार मुख्य रूप से शहरी तथा औद्योगिक समाजों में पाए जाते हैं। कुछ देशों में तो नाभिकीय परिवार में नौजवान जोड़ों को माता–पिता तथा बड़े परिवारजनों के बिना, सामाजिक वैज्ञानिकों द्वारा क्रमभंग का नाम दी गई परिस्थितियों, जैसे – प्रथम गर्भधारण, पहली सन्तति के जन्म आदि तथा संकट के समय अथवा किसी प्रकार की कठिनाई आने पर किसके पास जाएँ, किससे परामर्श लें आदि कुछ समझ में ही नहीं आता है।

जहाँ तक काम करने का प्रश्न है समाज की मजबूती एवं पारस्परिक निर्भरता बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करती है कि मूल इकाई के रूप में परिवार किस प्रकार अपने कार्य व्यापार को चलाता है। यह परिवार के सभी सदस्यों की जिम्मेदारी है कि वे परिवार के सभी कामों को पूरा करें यद्यपि सामान्य रूप से माता–पिता इन कार्यों में से अधिकांश का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लेते हैं। माता–पिता द्वारा इन उत्तरदायित्वों को पूरा न कर पाने की स्थिति में आने वाली कई पीढ़ियों को सामाजिक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। कई बार बच्चों के बीच आने

वाली सामाजिक समस्याओं का स्त्रोत, माता–पिता या परिवारों द्वारा अपने उत्तरदायित्व का ठीक प्रकार से निर्वाह न करने में पाया जा सकता है। वास्तव में एक खुश हाल परिवार बनाने के लिये सभी सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति किया जाना आवश्यक है। मनोवैज्ञानिक अब्राहम मैसलो के मत से इसमें व्यक्ति की मूल आवश्यकताओं जो कि मनोवैज्ञानिक सुरक्षा, प्यार एवं परिवार का भाग होना, आत्म–सम्मान एवं आत्म–वास्तविकीकरण के लिये प्रावधान किया जाना सम्मिलित है।

बोध प्रश्न 2

1) यह आवश्यकताओं के सोपानों का सिद्धांत ग्राफीय के रूप में एक पिरामिड की शक्ल में दिखाया जा सकता है। नीचे के स्तर की आवश्यकताओं का ऊपर के स्तर की आवश्यकताओं पर पहुंचने से पहले कुछ हद तक पूरा होना आवश्यक है।

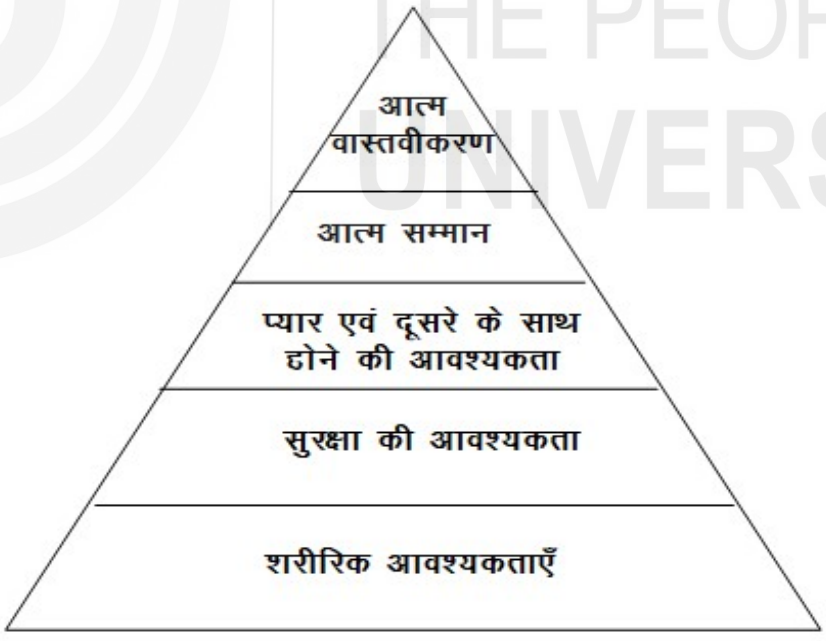

मासलों का आवश्यकता सोपान सिद्धांत

परिवार की आवश्यकताएँ असीमित होती हैं और उन आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन सीमित। परिवार या व्यक्ति अपनी असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मानवीय या गैर–मानवीय साधनों का प्रयोग करेगा। परिवार को अपने पास उपलब्ध साधनों का प्रयोग अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने के लिये व्यवस्थित करना होगा। पारिवारिक साधनों के संबंध में चर्चा परिवार जीवन चक्र के विभिन्न चरणों तथा परिवार के आकार के संबंध चर्चा के समय की जा चुकी है। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि परिवार जीवन चक्र की समस्त घटनाएँ पारिवारिक साधनों को कम करती हैं। पारिवारिक साधनों पर की जाने वाली माँगे बहुत अधिक होती हैं, विशेष रूप से तब जबकि एक चरण के समाप्त होने से पहले ही दूसरा प्रारंभ हो जाता है। विवाहित दम्पत्ति के लिये अपने विवाह के पहले कुछ सप्ताहों या महीनों में यह निश्चित कर लेना आवश्यक है कि वे पहला बच्चा कब करेंगे, कितने बच्चे करेंगे और उनके बीच में कितना अंतर रखेंगे। जैसा कि ऊपर बताया गया है कि परिवार का आकार परिवार के सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति व संतुष्टि को प्रभावित करता है। हर बच्चे को मानसिक, मनोवैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ संतुलित आहार, पर्याप्त कपड़ों, सुरक्षित शरण स्थल, उपयुक्त शिक्षा, माता–पिता का ध्यान एवं प्यार तथा चिकित्सा सुविधा प्राप्त करने का अधिकार है।

2) मातृ–पितृत्व के कुछ अभिप्रेत अर्थ निम्न प्रकार हैं :

a) भूख और वित्तीय असुरक्षा से बचने के लिये माता–पिता को बच्चों की संख्या के संबंध में योजना बनानी चाहिए। समझ आने तक सहायता कर पाने और पालने की क्षमता के आधार पर ही बच्चे पैदा करने चाहिए।

b) अपने बुढ़ापे में बच्चों से प्राप्त होने वाले लाभ के प्रति आश्वस्त रहने के लिये माता–पिता को बच्चो को मार्गदर्शन एवं दिशा–निर्देश देना

चाहिए जिससे कि बच्चों में बड़े होने पर ठीक मूल्य विकसित हों, उनका विकास ठीक हो।

c) एक सुव्यवस्थित एवं अनुशासित समाज बनाने के लिये माता–पिता को ऐसा परिवार बनाने के लिये प्रयत्न करना चाहिए जहाँ सभी सदस्यों को अपने अधिकार और कर्त्तव्य, दोनों का ज्ञान हो, जहाँ समाज के लाभों को समझा जाये और साथ ही उसे व्यवस्थित करने के लिये अपेक्षित अपने कर्तव्य निभाए जाएँ।

d) माता–पिता जो अपने साथी की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करने की ओर पूरा ध्यान देते हैं, वास्तव में, अपने संबंधों के बिगड़ने की संभावनाओं को कम (यदि दूर नहीं) करते हैं।

उत्तरादायित्व पूर्ण मातृ–पितृत्व पर विचार–विमर्श परिवार नियोजन के संबंध में चर्चा के बिना अधूरा ही रह जायेगा। परिवार नियोजन बच्चों के जन्म एवं उनके बीच के अंतर को नियंत्रित करने के साथ–साथ परिवारों के जीवनयापन को उन्नत बनाने का साधन है। इसके द्वारा बच्चों को जन्म दे सकने वाले आयु वर्ग के माता–पिता की सन्तान प्राप्ति में सहायता की जाती है तथा माता–पिता और भावी माता–पिताओं को परामर्श उपलब्ध कराया जाता है।

बोध प्रश्न 3

1) **नैतिक या सदाचार संबंधी मान्यताएँ**

बहुत से पारिवारिक जीवन शिक्षक 'नैतिक' शब्द से परेशान हो जाते हैं क्योंकि यह एक आपेक्षिक शब्द लगता है। यह विभिन्न समाजों व

सांस्कृतियों में भिन्न होता है। नैतिक व सदाचार शब्द का अर्थ एक ही है व उनका एक दूसरे के लिये प्रयोग किया जा सकता है। शाब्दिक तौर पर यह मानव व्यवहार व आचरण से संबंधित है और साधारणतया किसी भी कार्य के अच्छे या बुरे होने की नैतिक ईमानदारी से संबंध रखते हैं। नैतिक एवं सदाचार संबंधी मान्यताएँ सिद्धांतों या ठीक आचरण के नियमों के रूप में व्यक्त की जाती हैं। पारिवारिक जीवन शिक्षा में विभिन्न मान्यताओं जैसे व्यक्तिगत सत्यनिष्ठा, विभिन्नता व भिन्नता के प्रति उदारता, सामाजिक उत्तरदायित्व, व्यक्तियों के प्रति आदर, न्याय की अनुभूति इत्यादि के लिए महत्वपूर्ण स्थान है।

नैतिकता व सदाचार के लिये मूलभूत चीज है अपने व्यक्तिगत स्वार्थ से आगे आकर किसी भी परिस्थिति से जुड़े लोगों के अधिकारों व हितों का बराबर व निरपेक्ष भाव से निरीक्षण करना। यहाँ पर आशय यह है कि अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर चीजों को दूसरे व्यक्तियों के दृष्टिकोण से देख पाने योग्य बनना। एक दूसरा किंतु उतना ही महत्वपूर्ण आशय है यह अनुमान लगाना कि अन्य व्यक्तियों को होने वाले नुकसान को क्या कभी–कभी न्यायोचित ठहराया जा सकता है। पारिवारिक जीवन शिक्षा के अंतर्गत कई ऐसे अवसर आते हैं जब विवाह के अंदर हिंसा, असहनशीलता तथा जातिगत मनोग्रंथियों आदि पर विचार–विमर्श किया जा सकता है।

बोध प्रश्न 4

1) परिवार जीवन शिक्षा संकट के व्यवस्थापक के रूप में कार्य करती है। आज के किशोर ऐसे समय में बड़े हो रहे हैं जिसमें उन्हें अपने लिए अपनी पुरानी पीढ़ियों की तुलना में अधिक निर्णय लेने होंगे। वे अपने जीवन के

साथ अधिक परीक्षण करते हैं, निर्णय लेते हैं, जोखिम उठाते हैं और अपने ही अनुभवों से सबक लेते हैं न कि दूसरों के अनुभवों से। इसके कारण उन्हें परेशानी, विफलता, निराशा का सामना करना पड़ता और ऐसे जोखिम उठाने पड़ते हैं जो अंततः अपने आपको नष्ट करने वाले होते हैं। अतः परिवार जीवन शिक्षा की विभिन्न प्रकार की संकटपूर्ण परिस्थितियों से बचने में व्यक्ति की सहायता के रूप में, महत्वपूर्ण भूमिका है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 3 परिवार जीवन शिक्षा का महत्त्व

*डॉ. शुभाकांत महापात्र

रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 परिवार जीवन शिक्षा का लक्ष्य

3.3 परिवार जीवन शिक्षा का महत्त्व

3.4 परिवार जीवन शिक्षा में व्यक्ति, परिवार और समुदाय की भूमिका

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको पारिवारिक जीवन शिक्षा के व्यापाक एवं विशेष उद्देश्यों से परिचित कराना है। यह इकाई पारिवारिक जीवन शिक्षा के महत्त्व पर व्यक्ति, परिवार तथा समुदाय के दृष्टिकोण से प्रकाश डालती है। यह इकाई पारिवारिक जीवन शिक्षा प्रदान करने की प्रक्रिया में व्यक्ति, परिवार तथा समुदाय

* डॉ. शुभाकांत महापात्र, एनओएस, नई दिल्ली।

के बीच समन्वय की आवश्यकता पर भी बल देती है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- पारिवारिक जीवन शिक्षा के मुख्य उद्देश्यों का वर्णन कर सकेंगे;
- पारिवारिक जीवन शिक्षा में व्यक्ति, परिवार एवं समुदाय की भूमिका से अवगत हो सकेंगे;
- पारिवारिक जीवन शिक्षा से संबंधित पारंपरिक भारतीय मूल्यों की सराहना कर सकेंगे;
- व्यक्ति, परिवार एवं समुदाय के बीच जटिल संबंधों का विश्लेषण कर सकेंगे; और
- इन तीनों संस्थाओं को मजबूत बनाने की आवश्यकता का वर्णन कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने पारिवारिक जीवन शिक्षा की संकल्पना, अर्थ तथा आवश्यकता की चर्चा की है। इकाई के निष्कर्ष वाले भाग में हमने पारिवारिक जीवन शिक्षा के लाभों की भी चर्चा की है। ये सभी पक्ष स्पष्ट रूप से पारिवारिक जीवन शिक्षा के महत्त्व को दर्शाते हैं। लेकिन प्रश्न उठता है कि यह पारिवारिक जीवन शिक्षा क्या है और किसके लिए है? आरंभ में पारिवारिक जीवन शिक्षा लोगों की अनुभूत आवश्यकता की प्रतिक्रिया के रूप में अनौपचारिक रूप से आरंभ की गई थी लेकिन यह समाज में सामाजिक जीवन के भाग के रूप में विद्यमान थी। यह अजीब है कि पारिवारिक जीवन शिक्षा जनता की माँग के बाद आरंभ हुई थी तो भी शिक्षा क्षेत्र के रूप में लोगों की स्वीकृति प्राप्त करने के लिए इसे अभी भी संघर्ष करना पड़ रहा है। अभी भी कुछ लोगों का विचार है कि परिवार एक निजी संस्था है और इसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जबकि अन्य लोग कहते हैं कि यह एक स्वतंत्र इकाई है और उन्हें अच्छे अभिभावक, साथी या पारिवारिक सदस्य होने के लिए सीखने की आवश्यकता नहीं है। उनका दावा है कि यह उन्हें

नैसर्गिक रूप से पता है। लेकिन विशेष रूप से, 1970 के दशक के उत्तरार्ध से संपूर्ण विश्व में व्यावहारिक रूप से इस दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन आया है। समाज के विभिन्न वर्गों में आए तीव्र सामाजिक परिवर्तनों के कारण लोग अब इसे आवश्यक मानने लगे हैं। इसलिए इसे अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए परिवार और समाज दोनों की बराबर भागीदारी होना आवश्यक है। अब पारिवारिक जीवन शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा करने से पूर्व हमें इसके प्रक्रिया सिद्धान्तों को जान लेना चाहिए।

परिवार जीवन शिक्षा के प्रक्रियात्मक सिद्धान्त

परिवार जीवन शिक्षा के कुछ प्रक्रियात्मक सिद्धान्त हैं, जो इस प्रकार हैः

1) पारिवारिक जीवन शिक्षा व्यक्ति तथा परिवार दोनों के रूप में जीवन भर परिवार में व्यक्ति से संबंधित रहती है।

2) यह परिवारों में व्यक्तियों की आवश्यकता पर आधारित होनी चाहिए।

3) पारिवारिक जीवन शिक्षा अध्ययन और अभ्यास के क्षेत्र में बहु आयामी है।

4) इसका दृष्टिकोण उपचारात्मक की अपेक्षा शैक्षिक है।

5) इसे भिन्न–भिन्न पारिवारिक मूल्यों को प्रस्तुत करना चाहिए तथा सम्मान देना चाहिए।

3.2 परिवार जीवन शिक्षा के उद्देश्य

पारिवारिक जीवन शिक्षा का उद्देश्य ऐसे संभावित व्यक्तियों की सहायता करना है जो परिवार में रहने की प्रक्रिया के बारे में सीख रहे हैं, अगली पीढ़ी तक निरंतर पारिवारिक जीवन और सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और पारंपरिक रीति रिवाजों को बनाए रखना चाहते हैं। पारिवारिक जीवन शिक्षा के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं:

1) **परिवार की संकल्पना, उसकी भूमिका तथा कार्यों के बारे में जानकारी बढ़ानाः** प्रत्येक छोटे बड़े व्यक्ति को परिवार तथा उसकी भूमिकाओं और कार्यों की संकल्पना के बारे में समुचित ज्ञान और समझ होनी चाहिए। यह ज्ञान परिवार के कल्याण तथा देखभाल के लिए किए जाने वाले विभिन्न कार्यों की आवश्यकता को समझने में व्यक्ति की सहायता करेगा।

2) **परिवार जीवन शिक्षा का उद्देश्य पारिवारिक संबंधों तथा दायित्वों से निपटने की योग्यता विकसित करना हैः** पारिवारिक जीवन शिक्षा पारिवारिक सदस्यों, मित्रों तथा पारिवारिक जीवन में आने वाले अन्य लोगों के साथ अच्छे रिश्ते बनाने और बनाए रखने में सहायता प्रदान करती है।

3) **परिवार जीवन शिक्षा का उद्देश्य विभिन्न परिस्थितियों में सामंजस्य बनाने की जीवन कलाओं का विकास करना हैः** यह शिक्षा ऐसे ज्ञान, मूल्यों तथा कौशलों का विकास करती है जो प्रौढ़ जीवन, विवाह, अभिभावक तथा समदाय में सामाजिक जीवन की भागीदारी के लिए आवश्यक है। यह अन्य लोगों के साथ प्रभावी संप्रेषण करने तथा पारिवारिक जीवन, व्यक्तिगत संबंध तथा समुदाय के अन्य सदस्यों से संबंधित सभी मामलों में सही निर्णय लेने में भी सहायता करती है।

4) **परिवार जीवन शिक्षा का उद्देश्य अपने जीवन तथा समाज में होने वाली परिवर्तनों को समझने तथा उनके अनुकूलन बनने में सहायता करना हैः** यह व्यक्ति की किशोरावस्था के परिवर्तनों को समझने तथा अपने समाज में सामंजस्य बैठाने में सहायता करती है जैसे पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं का विघटन पुरूषों और महिलाओं की बदलती भूमिका तथा वैवाहिक परंपराएँ आदि।

5) **इस शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के अपने शरीर के बारे में शारीरिक प्रक्रियाओं के बारे में ज्ञान बढ़ाना हैः** यह मानव संकल्पना तक जन्म की शारीरिक

प्रक्रियाओं से संबंधित ज्ञान बढ़ाती है। यह शिक्षा किशोरावस्था में गर्भ धारण करने एवं अभिभावक बनने के परिणामों और गर्भावस्था और गर्भनिरोधों के विकल्पों के बारे में जानकारी देती है।

6) **यह परिवार जीवन शिक्षा जिम्मेदार और श्रेष्ठ युवा नागरिक तैयार करती है:** इसका एकमात्र उद्देश्य उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जिम्मेदार और उत्पादक युवा नागरिक तैयार करने में उनकी सहायता करना है।

परिवार जीवन शिक्षा की आवश्यकता

परिवार जीवन शिक्षा प्रदान किए जाने की अत्यंत महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। जब एक व्यक्ति किशोर वय से व्यस्कता की ओर अग्रसर होता है, उसे उस प्रामाणिक ज्ञान की आवश्यकता होती है जो उसे बड़ा होने की प्रक्रिया को समझने में सहायक हो। यह व्यक्ति के जीवन के संक्रमण कालीन दौर के समय आने वाली समस्याओं का सामना करने में सहायता करती है। यह उस समय और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है जब विद्यालयी पाठ्यक्रम में प्रजनन स्वास्थ्य शिक्षा के जरूरी घटक शामिल नहीं किए जाते जो कि किशोरवय के दौरान पढ़ाए जाने चाहिए।

- सेक्स को एक वर्जित विषय मानने के कारण, किशोरों के लिए प्रामाणिक स्रोतों की उपलब्धता की कमी है जिससे वे उचित ज्ञान प्राप्त कर सके। ऐसी स्थिति किशोरों में बड़ा होने की प्रक्रिया के विभिन्न पक्षों के बारे में अनेक चिंताएँ तथा भ्रम उत्पन्न कर सकती है। इससे आगे चलकर विभिन्न मिथ और गलत अवधारणाएँ उत्पन्न हो सकती है जो उनके संपूर्ण जीवन में उनकी मनोवृत्ति तथा व्यवहार पर बुरा असर डाल सकती है। उचित शिक्षा उनमें सेक्स के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने तथा जिम्मेदारी भरा व्यवहार करने की दिशा प्रदान करती है।

- प्रजनन तथा यौन स्वास्थ्य शिक्षा अत्यंत चिन्तन का विषय है क्योंकि किशोरों को इन विषयों के बारे में पर्याप्त जागरूकता और ज्ञान नहीं होता। कतिपय अध्ययन दर्शाते हैं कि किशोरों में एस.टी.आई. कम उम्र में गर्भधारण और असुरक्षित गर्भपात की संभावनाएँ अपेक्षाकृत अधिक होती है। भारत में, यद्यपि परम्परागत मान्यताएँ विवाह पूर्व सेक्स का निषेध/विरोध करती हैं, कतिपय अध्ययन किशोरों में विवाह पूर्व सेक्स सम्बन्धी क्रियाओं में संलग्नता की प्रवृत्ति को दर्शाते हैं (नायर, एम के सी. 200411 इसलिए सेक्स सम्बन्धी स्वास्थ्य शिक्षा देने की महती आवश्यकता है ताकि किशोर सेक्स और यौनिकता के संबंध में स्वस्थ मनोवृत्ति विकसित कर सके।
- महिलाओं का अपमान करने, यत्रंणा देने, शोषण तथा उत्पीड़न करने का इतिहास इतना ही पुराना है जितना परिवार का। प्रतिदिन रक्त अपराधों की बढ़ती घटनाएँ अखबारों की सुर्खियाँ बनती है जोकि गहन चिन्ता का विषय है। ऐसी परिस्थितियाँ शिक्षणीय हस्तक्षेप/संलग्नता की माँग करती है। परिवार जीवन शिक्षा के द्वारा छोटे बच्चों को उनमें हो रहे यौनिक विकास के बारे में जागरूक किया जा सकता है। उन्हें सिखाया जा सकता है कि वे कैसे अपनी इन अमानवीय घटनाओं से रक्षा करें।
- परिवार व्यक्तिगत स्नेह का केन्द्र है जो मानव जीवन को सुयोग्य तथा समृद्ध बनाता है। यह सुरक्षित वातावरण में बच्चे की देखभाल तथा शिक्षा को सुनिश्चित करता है। बच्चे अपने परिवार में मुख्यतया नैतिक मूल्य सीखते हैं। यद्यपि शहरीकरण के कारण, परम्परागत पारिवारिक मूल्य ध्वस्त हो रहे हैं। आधुनिक युग में बच्चे अपने बड़ों, नियम–कानून तथा नागरिकता के प्रति निरंतर कम होते जा रहे सम्मान की भावना के साथ बड़े हो रहे हैं। प्रायः बच्चे अपने माता–पिता से मूल्य सीखते हैं। अतः बच्चों के सफल पालन–पोषण के लिए परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करना बहुत आवश्यक है।

- परिवार जीवन शिक्षा के द्वारा युवाओं की प्रजनन स्वास्थ्य और एच.आई.वी. /एड्स/एस.टी.डी. इत्यादि सम्बन्धी ज्ञान, मनोवृत्ति तथा दक्षता बढ़ायी जा सकती है। इससे एच.आई.वी. नियंत्रण के सन्दर्भ में अनेक सेक्सुअल व्यवहार को सकारात्मक रूप से परिवर्तितत करने में सहायता मिल सकती है। क्योंकि एच.आई.वी./एड्स के लिए कोई टीका अथवा ईलाज उपलब्ध नहीं है, व्यवहारगत् परिवर्तनों को प्रोत्साहित करने हेत नियंत्रणकारी शिक्षा एकमात्र माध्यम है जो एच.आई.वी. संक्रमण को नियंत्रित कर सकता है।
- किशोरावस्था एक संक्रमणकारी दौर है जिसमें किशोर व्यवहार के नए प्रकारों का प्रयोग करने की क्षमताएँ विकसित करते हैं। यदि वे तम्बाकू और शराब के सेवन जैसे खतरनाक व्यवहार में संलग्न हो जाते हैं तो यह उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर डाल सकता है। कुछ समय से यह महसूस किया जाता रहा है कि परिवार, जोकि समाज की मूल इकाई है, संकट में है। तेजी से हो रहे औद्योगिकरण और नगरीकरण, भौगोलिक तथा सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन, तेजी से बढ़ रहा प्रवास, और गरीबी, परिवार संस्था को कमज़ोर कर रहे हैं। सामाजिक अधिगम के अभिकर्त्ता के रूप में कभी–कभी परिवार अपनी शिक्षणीय क्रियाओं को पूरा नहीं कर पाते। इसलिए परिवार जीवन शिक्षा की आवश्यकता है जिससे पारिवारिक सदस्यसें को पारिवारिक जीवन की विभिन्न अवस्थाओं की बदलती माँगों का सामना करने योग्य बनाया जा सके और पारिवारिक सदस्यों में संपूर्ण आत्मीय सम्बन्धों को सुनिश्चित किया जा सके।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) पारिवारिक जीवन शिक्षा के प्रक्रियात्मक सिद्धान्त क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3.3 परिवार जीवन शिक्षा का महत्त्व

आज के विश्व में पारिवारिक जीवन शिक्षा का महत्त्व निम्नलिखित कारणों से बताया जा सकता है:

1) **विवाह से उम्मीदें तथा पारिवारिक जीवन में परिवर्तन हो रहा है:** एक समय था जब विवाह आर्थिक सुरक्षा के लिए होते थे और पति आराम करते थे। उस समय नियम बडे सरल एवं सीधे थे। विवाह से अपेक्षाओं की उम्मीदें बहुत कम होती थी क्योंकि पुरुष के पास वैवाहिक जीवन से बाहर भी विकल्प मौजूद थे। आज प्रेम मिलता और समानता इतनी महत्त्वपूर्ण हो गई है कि प्रसन्नता के लिए संप्रेषण एवं समस्या समाधान करने की निपुणताएँ कहीं अधिक मूल्यवान हो गई है।

2) **विवाह और परिवार की शर्ते बदल रही हैं:** शताब्दी के आरंभ में जीवन काल कम था, अधिकांश विवाह माता–पिता की भूमिका निभाने तक ही सीमित होते थे तथा दंपत्ति सहायता के लिए परिवार और मित्रों के पास जाते थे। आज हमारे देश में धर्मनिरपेक्ष युग के परिवारों की संख्या में वृद्धि होने से दंपत्तियों से अपनी ज़रूरतें अल्पतम और पारिवारिक सहायता के बिना पूरी करने की उम्मीद की जाती हैं। वे प्रौढ़ावस्था की संवृद्धि में

समन्वय का काम करते हैं तथा 50–60 वर्ष तक अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं।

3) **जीवन में अधिकांश व्यक्ति नई पारिवारिक भूमिकाओं के लिए तैयार नहीं होते:** दंपत्तियों को अधिक माँग और कम सहायता का सामना करना पड़ता है, लेकिन कम व्यक्ति ही परिवार में परिपक्व और समान साथी बनना सीख पाते हैं। मतभेद और समस्या समाधान निपुणताएँ अनेक कार्य प्रशिक्षण और स्वैच्छिक समूहों का एक भाग है। लेकिन दंपत्ति संप्रेषण पूरी तरह उपेक्षित है। पारंपरिक शिक्षा व्यक्तियों को 8 घंटे कार्य अवधि जीवन के लिए तैयार करती है। एक दिन में 24 घंटे होते हैं और व्यक्ति सामाजिक सदस्य के रूप में पूरे 24 घंटे एक विशेष भूमिका में कार्य करता रहता है। इस अत्यंत कठिन और महत्त्वपूर्ण भूमिका के लिए व्यक्ति क्या तैयारी करता है?

4) **सुखी पारिवारिक जीवन एवं समायोजन के लाभ :** अनुसंधानों से पता चला है कि सुखी परिवारों में बीमारी तथा निराशा कम होती है तथा विवाह एवं विवाह से परे कम मतभेद पाए जाते हैं। परस्पर अच्छी तालमेल वाले जीवन साथी आसानी से अभिभावक बन जाते हैं तथा अधिक सहायक अभिभावक होते हैं। अधिकांश लोगों के लिए वैवाहिक खुशी पारिवारिक खुशी स्वस्थ जीवन की निशानी होती है।

5) **विवाह विघटन के परिणाम :** चाहे तलाक हो या एक ही छत के नीचे पूरी तरह भावात्मक रूप से पृथक रहने वाले साथी, उनके बच्चों तथा संबंधी भावात्मक एवं आर्थिक तनाव महसूस करते हैं जिसके दीर्घकालीन प्रभाव हो सकते हैं। विशेष संदर्भ में कहा जाए तो गरीबी, निरंतर जीवन साथियों में संघर्ष, तथा पुराने मित्रों एवं परिवार से दूरी के कारण दंपत्तियों का जीवन तनावपूर्ण और अपने बच्चों में ही सिमट जाता है। अधिकांश व्यक्ति, सद्भावना या शांति न होने वाले परिवारों से बचते हैं या फिर इस स्थिति का फायदा उठाते हैं।

6) **पारिवारिक जीवन शिक्षा का लाभ :** अनुसंधानकर्त्ताओं ने सफलतापूर्वक दंपत्तियों की बढ़ती हुई निपुणताएँ, दीर्घकालीन संतुष्टि, कम वैवाहिक संघर्ष तथ घटती पारिवारिक हिंसा के संदर्भ में प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लाभों को दर्शाया है।

7) **शीघ्र आरंभ से विघटन में बचाव :** पारिवारिक परिवर्तनशीलता, समस्या समाधान पद्धतियों तथा सहयोग एवं निपुणता स्रोतों के जानकार दंपत्ति अधिक जागरूक एवं पारिवारिक जीवन की चुनौतियों का मुकाबला करने में अधिक सक्षम होते हैं। सक्रिय दंपत्ति संबंधों में समस्याओं से बच जाते हैं तथा मिल–जुलकर जीवन का आनन्द लेते हैं।

8) **एच.आई.वी./एड्स महामारी :** एच.आई.वी./एड्स की महामारी का एक अच्छा परिणाम यह हुआ कि इसने एक बार फिर प्रेम, वैवाहिक निष्ठा आदि मूल्यों की तरफ ध्यान देने में सहायता की है जो परिवारिक संस्था के आधार स्तंभ होते हैं। यद्यपि एड्स केवल यौन संबंधों के कारण ही नहीं फैलता, तो भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि अधिकांश मामलों में संक्रमण का मुख्य स्रोत यौन संबंध ही है। इस प्रकार संक्रमण से बचाव का मुख्य साधन वैवाहिक निष्ठा से बढ़ जाता है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि एच.आई.वी./एड्स महामारी से ही वैवाहिक निष्ठा का मूल्य नहीं है। इसका मूल्य पारिवारिक संस्था का आधार है। अब एच.आई.वी./एड्स के संदर्भ में हमें एक बार फिर इस महत्त्वपूर्ण मूल्य पर विचार करने की प्रेरणा मिलती है।

एक साथ रहने वाले लोगों के समूह का नाम समाज है। समाज की संरचना अनेक प्रकार के संगठनों तथा संस्थाओं से होती है और परिवार उनमें से एक है। वास्तव में परिवार प्रथम इकाई है जिससे समाज बनता है। परिवार, समुदाय तथा समाज को विशेष सक्रिय संस्थाएँ माना जाता है जो परस्पर अन्योन्य क्रिया करते रहते हैं। समाज में परिवार की गुणवत्ता तथा प्रकार का निर्णय होता है। यह

परिवार के स्वस्थ स्वरूप पर निर्भर करता है जिससे मजबूत व प्रगतिशील देश और समाज का निर्माण होता है। फिर परिवार में व्यक्ति रहते हैं। इसलिए परिवार को मजबूत एवं प्रगतिशील बनाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति में स्वस्थ और उपयुक्त समझ का विकास करना आवश्यक है। इस प्रकार व्यक्ति परिवार की मूल सत्ता है। परिवार, समुदाय और समाज इस अर्थ में गतिशील हैं कि बाहरी विश्व अर्थव्यवस्था तथा इतिहास में परिवर्तनों से इन संस्थाओं को निरंतर पुनः परिभाषित किया जाता है तथा इसकी सीमाएँ निरंतर पुनः सामंजस्य स्थापित कर लेती हैं। एक स्वस्थ समाज या समुदाय एक बड़ा संबद्ध परिवार है। परिवार समाज या समुदाय का सूक्ष्म आधार है जिसमें संपूर्ण, सांस्कृतिक एवं सभ्यता निहित होती है।

इसे नीचे दिए गए संकेन्द्रिक चित्र से अच्छी तरह परिभाषित किया जा सकता है। इस मॉडल से पता लगता है कि व्यक्ति विश्व समुदाय का आधार है। इस प्रकार व्यक्ति परिवार, पास–पड़ोस, समुदाय, समाज, राष्ट्र और विश्व समुदाय का अनिवार्य

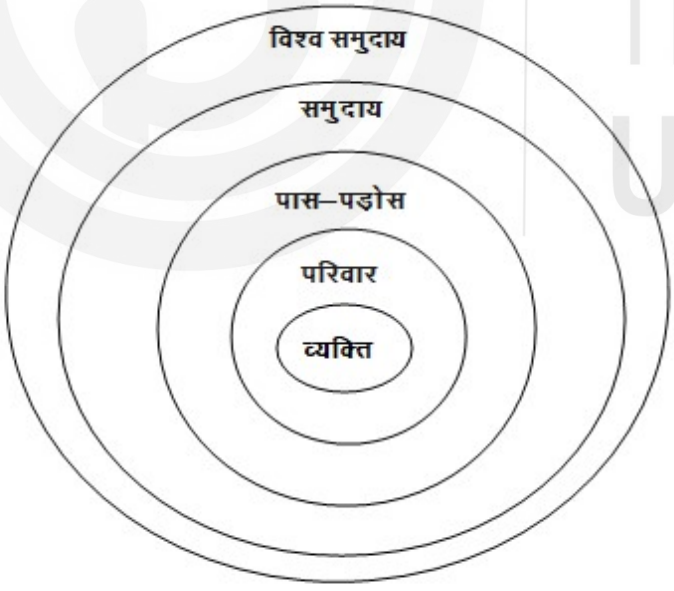

संरचनात्मक तत्व है। इसलिए व्यक्ति के दृष्टिकोण और व्यवहार में होने वाले किसी परिवर्तन का व्यक्ति पर भी प्रभाव पड़ेगा। इसलिए इन सभी संस्थाओं की भूमिका पारिवारिक जीवन शिक्षा के संबंध में संगत है। इसलिए प्रत्येक संस्था को स्वयं अपने में तथा विश्व समुदाय में सामंजस्य बनाए रखने के लिए विशिष्ट भूमिकाएं निभानी पड़ती हैं।

3.4 परिवार जीवन शिक्षा में व्यक्ति, परिवार और समुदाय की भूमिका

आइए, अब हम पारिवारिक जीवन शिक्षा के दृष्टिकोण से व्यक्ति, परिवार और समुदाय के महत्त्व को समझें।

परिवार जीवन शिक्षा में व्यक्ति की भूमिका

पारिवारिक जीवन शिक्षा इस बात पर ध्यान केन्द्रित करती है कि परिवार का संरचनात्मक घटक एवं परिणाम होने के कारण व्यक्ति कैसे शारीरिक रूप से स्वस्थ, भावात्मक रूप से परिपक्व, अनुशासित, उत्तरदायी और सहनशील मानव बनता है। इसका लक्ष्य व्यक्तियों को अपने परिवारों में प्रभावी संबंध बनाना सीखाकर, अर्न्तव्यैक्तिक निपुणताओं और अधिक घनिष्ठ मानवीय संबंध विकसित करने में व्यक्तियों की सहायता करना है। कुल मिलाकर यह मानव विकास की संपूर्ण अवस्थाओं में उनके जीवन को सुधाने का कार्य करती है।

मानव विभिन्न भूमिकाएं निभाते हैं (जैसे, पति, पत्नी, अभिभावक बच्चे संबंध आदि) तथा अनेक प्रकार के कार्य करते हैं (जैसे बच्चों की देखभाल एवं पोषण, पारिवारिक संसाधनों का प्रबंध तथा परिवार नियोजन आदि)। इसीलिए एक ही व्यक्ति से इन सभी पक्षों, उनकी संभावनाओं तथा परिणामों के बारे में जानने की आशा की जाती है। इन सभी आवश्यकताओं को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। एक व्यक्ति की विभिन्न आवश्यकताएँ हो सकती हैं। कुछ आवश्यकताएँ हो सकती हैं जो जीवन की ठोस स्थिति में आवश्यक लगें, जैसे

कोई व्यक्ति अनुभव कर सकता है कि मुझे अपने संबंधों में आग्रही होने की आवश्यकता है। दूसरी प्रकार की आवश्यकताएँ ''विकासात्मक'' होती हैं। ये आवश्यकताएँ प्रायः सभी व्यक्तियों के लिए उनके विकास काल में आवश्यक होती हैं (जैसे किशोर अवस्था के दौरान काम वासना को बदली आवश्यकताएँ, सेवा निवृत्ति के लिए तैयार होना)। इन आवश्यकताओं की पहचान, प्रायः के आनुभाविक अध्ययनों और मानव जाति के सामूहिक ज्ञान तथा अनुभव से की जाती है।

कई मामलों में ये दो प्रकार की आवश्यकताएँ परस्परव्यापी होती हैं। उदाहरण के लिए, नए अभिभावकों की शिक्षा संबंधी आवश्यकताएँ, अनुभव की गई आवश्यकताएँ तथा उनकी भूमिका एवं दायित्वों के संदर्भ में विकासात्मक आवश्यकताएँ दोनों ही हो सकती हैं।

एक अन्य प्रकार की आवश्यकता श्रेणी भी है, जो विशेष ध्यान देने योग्य है इसे सामाजिक आवश्यकता कहा जाता है। यह वह आवश्यकता है, जो वर्तमान तथा संभावित सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों के कारण पैदा होती है जिनका सभी व्यक्तियों के जीवन पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

उदाहरण के लिए, अधिकांश समाजों में सामाजिक परिवर्तन में अंतर परिवार के बड़े सदस्यों की भूमिका को पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता का संकेत करते हैं। जहाँ पर परंपरागत पारिवारिक व्यवहार के नियम स्थापित कर देती है, वहाँ अभिभावकों को बदलती पारिवारिक संरचना तथा कार्यों के अनुसार अपनी भूमिका की समीक्षा करने तथा माँगों के .. साथ सामंजस्य स्थापित करने की चुनौती दी जाने लगी। राज्य ने भी आर्थिक और . सामाजिक आवश्यकताओं के कारणों के आधार पारिवारिक जीवन में हस्तक्षेप करना आरंभ कर दिया है। उदाहरण के लिए, अनेक देशों में जनसंख्या वृद्धि को रोकने तथा जीवन के स्तर को सुधारने के लिए राष्ट्रीय नियोजित अभिभावक कार्यक्रम आरंभ किए हैं। नई एक पीढ़ी द्वारा पुरानी पीढ़ी से ज्ञान अर्जित करने के विपरीत, यह विश्वास व्यक्त किया गया कि अभिभावकता, निपुणता, ज्ञान और दृष्टिकोण को शैक्षणिक कार्यक्रमों से सीखा जा

सकता है और इसी कारण विश्व में सभी जगह इन कार्यक्रमों की स्थापना में वृद्धि हो रही है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) एच.आई.वी./एड्स के संदर्भ में पारिवारिक जीवन शिक्षा के महत्त्व का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

परिवार की भूमिका

परिवार की भूमिका के बिना कोई भी पारिवारिक जीवन शिक्षा के बारे में नहीं सोच सकता। प्रायः व्यक्तियों को परिवार के संदर्भ में अनेक कार्य करने होते हैं जो परिवार से बाहर संभव नहीं है। दूसरे शब्दों में परिवार व्यक्तियों में कुछ' कार्यों को बढ़ावा देते हैं।

पारिवारिक जीवन शिक्षा में उनकी भूमिका के संबंध में इन कार्यों की चर्चा की गई हैं।

1) जैविक कार्य

पति पत्नी को परस्पर प्यार करने या अभिव्यक्ति के लिए यौन क्रिया का अधिकार है। यह दंपत्ति को न केवल यौन संतुष्टि प्रदान करता है अपितु उनके अर्न्तव्यैक्तिक संबंध, प्यार और संबंध भी मजबूत होते हैं जो पति–पत्नी को बाँधे रखने वाली यौन गतिविधियों सहित शक्तिशाली और प्रायः बंधनवाली भावनाओं का परिणाम होती हैं। यौन क्रियाएँ समाज को स्थिर करने में सहायता प्रदान करती हैं। परिवार ऐसे अवसर प्रदान करता है जिनमें यौन क्रियाओं को अभिव्यक्ति मिलती है तथा उन पर नियंत्रण भी रहता है। माता–पिता के कार्य दीर्घकालिक होते हैं, क्योंकि बच्चा असहाय होता है और अनेक वर्षों तक भोजन व आश्रय के लिए अपने माता–पिता पर निर्भर रहता है।

2) सांस्कृतिक कार्य

परिवार बच्चे को समाज के मूल्य, विश्वास, रीतियाँ और परंपराएँ जानने में सहायता करता है। परिवार में ही बच्चा बुनियादी दृष्टिकोण सीखता है। यदि परिवार सुबह पूजा करता है तो बच्चा भी इसे सीख लेता है तथा पूजा और धार्मिकता के मूल्य ग्रहण करता है। बच्चे को सही और गलत का बोध परिवार के व्यावहारिक विश्वास से होता है। बाद में हो सकता है, बच्चे अपने जीवन में परिवार के इन मूल्यों एवं अपेक्षाओं पर प्रश्न करने लगें। इस प्रकार प्रश्न पूछकर बच्चा जीवन में अपनी मूल्य व्यवस्था विकसित करने लगता है।

3) आर्थिक कार्य

आमदनी और श्रम का अधिकतम उपयोग करने का दृष्टिकोण हमारे बीच मौजूद होता है। परिवार अपने संसाधनों को इस प्रकार व्यवस्थित करता है कि कुशलतापूर्वक बजट बनाकर अधिकतम तुष्टि प्राप्त करे। परिवार का

यह आर्थिक सहयोग कुल मिलाकर समाज में आर्थिक कार्यों को पूरा करने के लिए काफी दूर तक प्रभाव ही नहीं डालता है अपितु मिलकर कार्य करने वाले दंपत्ति को पुरस्कार प्रदान करने वाला अनुभव भी प्रदान करता है। इससे बच्चों को अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य और आराम देने जैसे उनके पारिवारिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मिलकर कार्य करने की भावना और मजबूत होती है। कभी–कभी समाज में अपनी सामाजिक हैसियत बनाए रखने के लिए परिवार अनेक तरीकों जैसे – पत्नी का रोज़गार, व्यापार आदि पर लगाकर विभिन्न प्रकार से परिवार की आमदनी बढ़ाने का निर्णय करते हैं।

4) भावनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक कार्य

इंसान भावनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक रूप से संवेदनशील होता है तथा विश्व में अपने संघर्ष के लिए स्वयं को ऊर्जावान बनाने के लिए उन्हें परिवार की आवश्यकता होती है। विशेषतः मुसीबत के समय परिवार आघार अवशोषक का कार्य करता है तथा सदस्यों को भावनात्मक रूप से स्थिरता और सहारा प्रदान करता है। परिवार समोवेष्टक (समाविष्ट करने वाला) और देखभाल करने वाले की भूमिका निभाता है। हो सकता है कि व्यक्ति की नौकरी छूट जाए, स्कूल से निकाल दिया जाए, किसी दूसरे शहर या गाँव में स्थानांतरण हो जाए लेकिन सहारा देने के लिए परिवार हमेशा तैयार रहता है। युवा, बच्चे तथा बेरोज़गार युवाओं को हमेशा परिवार द्वारा सहारा दिया जाता है ताकि वे निराश और पथभ्रष्ट न हों जाएँ) परिवार पंथभ्रष्टों के लिए क्षतिपूर्ति एजेंसी के रूप में कार्य करता है जो कारखाने या कार्यालयों में काम करने वाले नियंत्रणहीन संपूर्ण संतुष्टि हीन व्यक्तियों को आराम और सम्मान प्रदान करता है। कई बार परिवार के मूल्य, नियम और स्वरूप बदलने के कारण सदस्यों को हो सकता है परिवार से संपूर्ण सहारा ने मिले। परन्तु इसके बावजूद जो व्यक्ति अपने परिवार को 'समस्या वाला

परिवार' मानते हैं उन्हें भी परिवार में समस्या को समझना चाहिए तथा परस्पर अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त कर इसका समाधान करने के लिए कार्रवाई करनी चाहिए।

5) शैक्षिक कार्य

श्रृंगार या शौचालय प्रशिक्षण से आरंभ होकर भाषा निपुणता या सामाजिक रूप से स्वीकार्य व्यवहार सिखाने तक परिवार बच्चों की शिक्षा तथा उन्हें सभ्य बनाने जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य भी करता है। कई बार परिवार में विभिन्न प्रकार की व्यावसायिक कलाएँ भी सिखाई जाती हैं। बुनियादी शिक्षा भी परिवार द्वारा ही प्रदान की जाती है। यह प्रशिक्षण बच्चे को स्कूल में तेजी से सीखने के लिए तथा अपनी कक्षा में साथियों के साथ व्यवहार को अनुकूल बनाने की योग्यता प्रदान करता है। परिवार में बच्चे बड़ों का सम्मान करना तथा उनकी आज्ञा का पालन करने के बारे में भी सीखता है। वह सत्ता के साथ समझौता करना भी परिवार में भी सीखता है।

6) सार्वभौमिक कार्य

व्यक्ति इस विशाल अवैयक्तिक ब्रह्मांड में स्वयं को भटकता हुआ महसूस करता है। वह औद्योगिक एवं शहरी सभ्यता में अपने को अलग–थलग सा महसूस करता है (क्योंकि शहरी और औद्योगिक समाज में व्यक्ति इतना व्यस्त रहता है कि दूसरों से उसका वास्ता न के बराबर होता है)। परिवार में रहने से उसे ब्रह्मांड रूपी संसार में एक स्थान प्राप्त करने में सहायता मिलती है। इससे उसे दूसरों के साथ जुड़ने का तथा धरती पर टिके रहने का अनुभव होता है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) परिवार द्वारा अपने सदस्यों को प्रदान किए जाने वाले भावनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक कार्य क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

समुदाय की भूमिका

मैकआइवर के अनुसार, "समुदाय सामाजिक जीवन का एक क्षेत्र है, जिसमें कुछ हद तक सामाजिक सम्बद्धता होती है।'' हम जानते हैं कि व्यक्ति अकेला नहीं रहता। वह अनेक प्रकार से अपने साथियों से जुड़ा होता है जो एक समूह का निर्माण करते हैं। वह केवल प्रदेश के एक निश्चित भाग में अपने नजदीक रहने वाले लोगों के साथ ही संबंध बना सकता है। यह एक तथ्य है कि एक लम्बी अवधि तक लोग एक स्थान पर रहने वाले लोगों को सामाजिक सादृश्यता, एक जैसे सामाजिक जीवन तथा एक जैसे विशिष्ट क्षेत्र समुदाय को जन्म देता है। समुदाय के ये उपर्युक्त पहल पारिवारिक जीवन शिक्षा प्रदान करने तथा उनको बनाए रखने में मदद करते हैं।

आइए, अब हम समुदाय द्वारा की जाने वाली तीन विशेष भूमिकाओं की जाँच करें जो पारिवारिक जीवन शिक्षा के दृष्टिकोण से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

1) **समुदाय पारिवारिक शिक्षा से संबंधित मूल्यों को संरक्षित रखने का कार्य करता है।**

प्रत्येक पुरानी पीढ़ी पारिवारिक जीवन से संबंधित मूल्यों को आने वाली पीढ़ी में संप्रेषित करती है, जिन्हें उसने अपने से पहले वाली पीढ़ी से ग्रहण किया था। इस प्रकार समुदायों में एक निश्चित स्वरूप या परंपरा बन जाती है। इस तरीके से प्राचीन काल की परंपराएँ एवं मूल्य अभी भी समुदायों और समाजों में विद्यमान हैं। कभी–कभी हम देखतें है कि समाजों में होने वाले परिवर्तनों के अनुसार इन मूल्यों में भी कुछ संशोधन हो जाता है। यह माता–पिता या दादा–दादी से क्रमशः अपने बच्चों या नाती पोतों के संदर्भ में या फिर धार्मिक आचार्यों अथवा गुरुओं आदि द्वारा प्रवचन के रूप में आगे बढ़ाए गए हैं।

2) **समुदाय प्रतिरोधक का कार्य करता है**

समुदाय न केवल पारिवारिक जीवन के मूल्यों को संरक्षित रखता है, अपितु जब इन मूल्यों या नियमों का उल्लंघन होता है तो यह प्रतिरोध भी करता है। यह उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कुछ प्रतिबंध लगाता है या कार्रवाई करता है। इसके अतिरिक्त समुदाय मूल्यों और मानदंडों का उल्लंघन करने वाले व्यक्ति और समूह के खिलाफ असहयोग तथा बहिष्कार जैसे कठोर उपाय भी कर सकता है।

3) **समुदाय नैतिक निगरानी रखता है**

समुदाय एक अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य यह करता है कि यह अपने सदस्यों को क्या करना है और क्या नहीं करना इसका मार्गदर्शन प्रदान करता है। यह समुदाय में तथा समुदाय से बाहर प्रत्येक सदस्य के कार्यों पर नजर रखता है। इस तरीके से यह समुदाय में नियंत्रण तथा संतुलन बनाए रखता है।

जहाँ तक समुदाय का संबंध है, वर्तमान में तीन ऐसी प्रमुख व्यवस्थाएँ हैं जो वयस्कों को पारिवारिक जीवन शिक्षा प्रदान करती हैं। ये हैंः धार्मिक, सामाजिक और व्यावसायिक संगठन, जनसंचार और विद्यालय तथा विश्वविद्यालय।

i) धार्मिक, सामाजिक और व्यावसायिक संगठनों की भूमिका

पारिवारिक जीवन के लिए शिक्षा के संबंध में सर्वाधिक व्यापक कार्यक्रम धार्मिक एवं धर्मनिरपेक्ष संगठनों द्वारा बनाया एवं लागू किया जाता है। विभिन्न प्रकार के सैकड़ों संगठन एवं एजेंसियाँ, विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम, कार्यशालाएँ तथा सेवाएं प्रदान करती हैं। इन पाठ्यक्रमों एवं सेवाओं में शिक्षा वैवाहिक तैयारियाँ, वैवाहिक समृद्धि, बाल विकास आदि क्षेत्र शामिल हैं। पारंपरिक रूप से विवाह और परिवार में स्थापित विश्वास के कारण पश्चिमी समाज में चर्च एक ऐसी संस्था है, जो संपूर्ण परिवार से संबंधित है तथा उसके सदस्य जन्म से मृत्यु तक आजीवन उसके सदस्य रहते हैं। अनेक धार्मिक समूह परिवारों की खुशहाली से संबंधित शिक्षा प्रदान करने में शामिल रहते हैं। धार्मिक संप्रदायों के अलावा सामुदायिक संगठन जैसे – यंग मैंस और यंग वूमेंस क्रिसयियन एसोसिएशन (वाई. डब्ल्यू. सी.ए. एवं वाई. एम. सी. ए.) तथा फैमिली सर्विस एसोसिएशन ऑफ अमेरिका एवं अनेक स्वैच्छिक संगठन भी पारिवारिक शिक्षा पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। ये संस्थाएँ पाठ्यक्रमों तथा कार्यशालाओं के रूप में व्यक्तियों को वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन से संबंधी विषयों पर शिक्षा प्रदान करती हैं।

अनेक देशों में ऐसे विकसित संगठन होते हैं, जो विशेष रूप से पारिवारिक जीवन शिक्षा से संबंधित विषयों पर काम करते हैं। ये संगठन प्रायः व्यावसायिक संघों से अलग विकसित होते हैं। इनकी परिवार या शैक्षिक, सामाजिक और परिवार के स्वास्थ्य विषयों का मार्ग दर्शन करने वाली

सरकारी एजेंसियों में विशेष रुचि होती है। कुछ उदाहरण हैंः यूनियन ऑफ फैमिली आर्गेनाइजेशन (फ्रांस), द नेशनल काउंसिल ऑफ फैमिली रिलेशेन्स (यू.एस.ए.) द स्टडी कमीशन ऑन फैमिली (यू.के.) तथा वेनियर इंस्टीच्यूट ऑफ द फैमिली (कनाडा)। इन संगठनों के अलावा अनेक अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियाँ भी ऐसे कार्य करती हैं। ये संगठन हैंः यूनेस्को, अंतर्राष्ट्रीय रेड क्रास, आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (ओ.ई.सी.डी.) तथा को–ऑपरेटिव फॉर अमेरिकन रिलीफ एवरीव्हेर (सी.ए.आर. ई.)।

ii) सामुदायिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देने में सार्वजनिक मीडिया की भूमिका

वैवाहिक और पारिवारिक जीवन के बारे में मूल्य, विचार दृष्टिकोण तथा विश्वास बनाने में दूरदर्शन, रेडियों, समाचार–पत्र और पत्रिकाओं द्वारा व्यापक प्रभाव डालने का निरंतर प्रयास किया जाता है। कई बार उनके आगतों की गुणवत्ता तरीकों पर प्रश्न उठाए जाते हैं, फिर भी वे पारिवारिक विषयों में वैकल्पिक संरचनाएँ अभिनय मॉडल, सूचनाएँ । तथा परामर्श देती हैं।

iii) सामुदायिक शिक्षा के रूप में पारिवारिक जीवन शिक्षा प्रदान करने में विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की भूमिका

कुछ समय से विद्यालय छात्रों के लिए विवाद और परिवार विषयों पर अधिक से अधिक शिक्षा के अवसर प्रदान कर रहे हैं। कई विश्वविद्यालय तथा कॉलेज वयस्कों के लिए विवाह और विवाह से संबंधित क्रेडिट और गैर क्रेडिट निरंतर शिक्षा कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे हैं।

परिवार और समुदाय के मध्य संबद्धता या समुचित प्रयास की आवश्यकता है। यदि परिवार में प्रचलित परंपराओं तथा सामुदायिक परंपराओं में अंतर है तो व्यक्ति में मानसिक या जीवन शैली में तनाव रहेगा। इन सबसे बचने के लिए सामुदायिक नेताओं के लिए अभिविन्यास की आवश्यकता है। ये

नेता पंचायत स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर के राजनीतिक नेता, सभी धर्मों के धार्मिक नेता तथा सामाजिक नेता हो सकते हैं। ये व्यक्ति ऐसी योजनाएं बनाने व लागू करने वाले होते हैं जो पारिवारिक जीवन शिक्षा से संबंधित होती हैं।

बोध प्रश्न 4

टिप्पणी : अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) वयस्कों को पारिवारिक जीवन शिक्षा प्रदान करने वाली तीन मुख्य संस्थाएँ कौन सी हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3.5 सारांश

इस इकाई में हमने पारिवारिक जीवन शिक्षा के विभिन्न सामान्य तथा विशिष्ट उद्देश्यों की चर्चा की है। मुख्य उद्देश्य हैं परिवार की भूमिकाओं और कार्यों के बारे में जानकारी लेना, ज्ञान का विकास करना, वयस्क जीवन विवाह तथा अभिभावकता आदि के लिए आवश्यक मूल्य और निपुणताएँ आदि। पारिवारिक

जीवन शिक्षा का मूल उद्देश्य उपर्युक्त निपुणता में वृद्धि कर जिम्मेदार व उपयोगी नागरिक तैयार करना है। इन सभी जानकारियों, मूल्यों निपुणताओं का विकास करने में विभिन्न संस्थाएँ जैसे परिवार और समुदाय तथा व्यक्ति को विभिन्न भूमिकाएँ और दायित्व निभाने होते हैं। व्यक्ति को विभिन्न कार्य एवं भूमिकाएँ निभानी पड़ती हैं तथा साथ ही विभिन्न आवश्यकताएँ भी पूरी करनी पड़ती हैं। व्यक्ति की तरह परिवार भी विभिन्न प्रकार के कार्य करता है जैसे जैविक कार्य, सांस्कृतिक कार्य, . आर्थिक कार्य, भावनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक कार्य, शैक्षिक तथा ब्रह्माण्डीय कार्य । समुदाय पारिवारिक जीवन शिक्षा के संरक्षक एवं प्रदानकर्त्ता के रूप में कार्य करता है तथा मूल्यों और नियमों का उल्लंघन करने वाले का प्रतिरोध करता है। यह नैतिक प्रहरी का भी कार्य करता है। समुदाय से संबंधित तीन मुख्य संस्थाएँ उचित पारिवारिक जीवन शिक्षा प्रदान करती हैं। ये हैंः धार्मिक, सामाजिक, व्यावसायिक संगठनय जनसंचार, विद्यालय और विश्वविद्यालय।

3.6 शब्दावली

वंचित होना : विशेष अर्थ में, ऐसी स्थिति जिसमें व्यक्ति समाज के कुछ या किसी भी लाभ को प्राप्त नहीं कर सकता।

बहिष्कार : किसी को समूह या समाज से बाहर करना।

3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एरेस, एम. ई. स्कवैनवेल्ट, जे. डी. मोस जे.जे. (संस्करण) (1993) हैंड बुक ऑफ फैमिली लाइफ एज्यूकेशन (फाउंडेशन ऑफ फैमिली लाइफ एज्यूकेशन), सागा पब्लिकेशंस, वा.1, वा.2।

यूनेस्को, (1998), फैमिली लाइफ एज्यूकेशन : पैकेज वन, पी . आर. ओ. ए. पी. बैंकाक।

शेषाद्रि, सी. एंड पांडे, जे. एल., पापुलेशन एज्यूकेशन – ए नेशनल सोर्स बुक, एन. सी.ई.आर. टी., नई दिल्ली।

इंटरनेशनल प्लांड पेरेंटहुड एसोसिएशन (1985) : ग्रोइंग अप इन ए चंजिंग वर्ड, पार्ट वनः (यूथ आर्गेनाइजेशन एंड फैमिली लाइफ एज्यूकेशन), इन इंटरोडक्शन, लंदन, आई पी. पी. एफ.।

थॉमस, ग्रेसियस (1995) एड्स एण्ड फैमिली एज्यूकेशन, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) परिवार जीवन शिक्षा के कुछ प्रक्रियात्मक सिद्धान्त होते हैं, जो इस प्रकार हैः

   a) परिवार जीवन शिक्षा व्यक्ति तथा परिवार दोनों के रूप में जीवन भर परिवार में व्यक्ति से संबंधित रहती है।

   b) यह परिवारों में व्यक्तियों की आवश्यकता पर आधारित होनी चाहिए।

   c) पारिवारिक जीवन शिक्षा अध्ययन और अभ्यास के क्षेत्र में बहु आयामी है।

   d) इसका दृष्टिकोण उपचारात्मक की अपेक्षा शैक्षिक है।

   e) इसे भिन्न–भिन्न पारिवारिक मूल्यों को प्रस्तुत करना चाहिए तथा सम्मान देना चाहिए।

बोध प्रश्न 2

1) एच.आई.वी./एड्स महामारी

एच.आई.वी./एड्स की महामारी का एक अच्छा परिणाम यह हुआ कि इसने एक बार फिर प्रेम, वैवाहिक निष्ठा आदि मूल्यों की तरफ ध्यान देने में सहायता की है जो परिवारिक संस्था के आधार स्तंभ होते हैं। यद्यपि एड्स केवल यौन संबंधों के कारण ही नहीं फैलता, तो भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि अधिकांश मामलों में संक्रमण का मुख्य स्त्रोत यौन संबंध ही है। इस प्रकार संक्रमण से बचाव का मुख्य साधन वैवाहिक निष्ठा से बढ़ जाता है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि एच.आई.वी./एड्स महामारी से ही वैवाहिक निष्ठा का मूल्य नहीं है। इसका मूल्य पारिवारिक संस्था का आधार है। अब एच.आई.वी./एड्स के संदर्भ में हमें एक बार फिर इस महत्वपूर्ण मूल्य पर विचार करने की प्रेरणा मिलती है।

बोध प्रश्न 3

1) भावनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक कार्य

इंसान भावनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक रूप से संवेदीनशील होता है तथा विश्व में अपने संघर्ष के लिए स्वयं को ऊर्जावान बनाने के लिए उन्हें परिवार की आवश्यकता होती है। विशेषतः मुसीबत के समय परिवार आघात अवशोषक का कार्य करता है तथा सदस्यों को भावनात्मक रूप से स्थिरता और सहारा प्रदान करता है। परिवार समोवेष्टक (समाविष्ट करने वाला) और देखभाल करने वाले की भूमिका निभाता है। हो सकता है कि व्यक्ति की नौकरी छूट जाए, स्कूल से निकाल दिया जाए, किसी दूर शहर या गाँव में स्थानांतरण हो जाए लेकिन सहारा देने के लिए परिवार हमेशा तैयार रहता है। युवा, बच्चे तथा बेरोजगार युवाओं को हमेशा परिवार द्वारा

सहारा दिया जाता है ताकि वे निराश और पथभ्रष्ट न हो जाए। परिवार पथभ्रष्टों के लिए क्षतिपूर्ति एजेंसी के रूप में कार्य करता है। जो कारखाने या कार्यालयों में काम करने वाले नियंत्रणहीन संतुष्टि हीन व्यक्तियों को आराम और सम्मान प्रदान करता है। कई बार परिवार के मूल्य, नियम और स्वरूप बदलने के कारण सदस्यों को हो सकता है परिवार से संपूर्ण सहारा न मिले। परन्तु इसके बावजूद जो व्यक्ति अपने परिवार को 'समस्या वाला परिवार' मानते हैं उन्हें भी परिवार में समस्या को समझना चाहिए तथा परस्पर अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त कर इसका समाधान करने के लिए कार्रवाई करनी चाहिए।

बोध प्रश्न 4

1) **i) धार्मिक, सामाजिक और व्यावसायिक संगठनों की भूमिका**

पारिवारिक जीवन के लिए शिक्षा के संबंध में सर्वाधिक व्यापक कार्यक्रम धार्मिक एवं धर्मनिरपेक्ष संगठनों द्वारा बनाया एवं लागू किया जाता है। विभिन्न प्रकार के सैकड़ों संगठन एवं एजेंसियाँ, विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम, कार्यशालाएँ तथा सेवाएँ प्रदान करती हैं। इन पाठ्यक्रमों एवं सेवाओं में शिक्षा वैवाहिक तैयारियाँ, वैवाहिक समृद्धि, बाल विकास आदि क्षेत्र शामिल हैं। पारंपरिक रूप से विवाह और परिवार में स्थापित विश्वास के कारण पश्चिमी समाज में चर्च एक ऐसी संस्था है, जो संपूर्ण परिवार से संबंधित है तथा उसके सदस्य जन्म से मृत्यु तक आजीवन उसके सदस्य रहते हैं। अनेक धार्मिक समूह परिवारों की खुशहाली से संबंधित शिक्षा प्रदान करने में शामिल रहते हैं। धार्मिक संप्रदायों के अलावा सामुदायिक संगठन जैसे – यंग मैंस और यंग वूमेंस क्रिसयियन एसोसिएशन (वाई. डब्ल्यू. सी.ए. एवं वाई. एम. सी. ए.) तथा फैमिली सर्विस एसोसिएशन ऑफ अमेरिका एवं अनेक स्वैच्छिक संगठन भी पारिवारिक शिक्षा पर ध्यान

केन्द्रित करते हैं। ये संस्थाएँ पाठ्यक्रमों तथा कार्यशालाओं के रूप में व्यक्तियों को वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन से संबंधी विषयों पर शिक्षा प्रदान करती हैं।

अनेक देशों में ऐसे विकसित संगठन होते हैं, जो विशेष रूप से पारिवारिक जीवन शिक्षा से संबंधित विषयों पर काम करते हैं। ये संगठन प्रायः व्यावसायिक संघों से अलग विकसित होते हैं। इनकी परिवार या शैक्षिक, सामाजिक और परिवार के स्वास्थ्य विषयों का मार्ग दर्शन करने वाली सरकारी एजेंसियाँ में विशेष रुचि होती है। कुछ उदाहरण हैंः यूनियन ऑफ फैमिली आर्गेनाइजेशन (फ्रांस), द नेशनल काउंसिल ऑफ फैमिली रिलेशेन्स (यू.एस.ए.) द स्टडी कमीशन ऑन फैमिली (यू.के.) तथा वेनियर इंस्टीच्यूट ऑफ द फैमिली (कनाडा)। इन संगठनों के अलावा अनेक अंतर्राष्ट्रय एजेंसियाँ भी ऐसे कार्य करती हैं। ये संगठन हैंः यूनेस्को, अंतर्राष्ट्रीय रेड क्रास, आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (ओ.ई.सी.डी.) तथा को–ऑपरेटिव फॉर अमेरिकन रिलीफ एवरीव्हेर (सी.ए.आर. ई.)।

ii) सामुदायिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देने में सार्वजनिक मीडिया की भूमिका

वैवाहिक और पारिवारिक जीवन के बारे में मूल्य, विचार दृष्टिकोण तथा विश्वास बनाने में दूरदर्शन, रेडियों, समाचार–पत्र और पत्रिकाओं द्वारा व्यापक प्रभाव डालने का निरंतर प्रयास किया जाता है। कई बार उनके आगतों की गुणवत्ता तरीकों पर प्रश्न उठाए जाते हैं, फिर भी वे पारिवारिक विषयों में वैकल्पिक संरचनाएँ अभिनय मॉडल, सूचनाएँ तथा परामर्श देती हैं।

iii) सामुदायिक शिक्षा के रूप में पारिवारिक जीवन शिक्षा प्रदान करने में विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की भूमिका

कुछ समय से विद्यालय छात्रों के लिए विवाद और परिवार विषयों पर अधिक से अधिक शिक्षा के अवसर प्रदान कर रहे हैं। कई विश्वविद्यालय तथा कॉलेज वयस्कों के लिए विवाह और विवाह से संबंधित क्रेडिट और गैर क्रेडिट निरंतर शिक्षा कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे हैं।

परिवार और समुदाय के मध्य संबद्धता या समुचित प्रयास की आवश्यकता है। यदि परिवार में प्रचलित परंपराओं तथा सामुदायिक परंपराओं में अंतर है तो व्यक्ति में मानसिक या जीवन शैली में तनाव रहेगा। इन सबसे बचने के लिए सामुदायिक नेताओं के लिए अभिविन्यास की आवश्यकता है। ये नेता पंचायत स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर के राजनीतिक नेता, सभी धर्मों के धार्मिक नेता तथा सामाजिक नेता हो सकते हैं। ये व्यक्ति ऐसी योजनाएँ बनाने व लागू करने वाले होते हैं जो पारिवारिक जीवन शिक्षा से संबंधित होती हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 4 परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में घर, विद्यालय और धर्म की भूमिका

*प्रो. तरेसा चाको

रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में घर की भूमिका

4.3 परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में स्कूल की भूमिका

4.4 परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में धर्म की भूमिका

4.5 जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में परिवार जीवन शिक्षा की पद्धतियाँ

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको पारिवारिक जीवन शिक्षा के बारे में घर, स्कूल और धर्म की भूमिका के बारे में जानकारी देना है। इसमें शिक्षा देने की विभिन्न

* प्रो. तरेसा चाको, कल्लूर हाऊस, कोचीन

पद्धतियों की भी चर्चा की गई है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपः

- पारिवारिक जीवन शिक्षा में विभिन्न एजेन्सियों की भूमिका की पहचान कर सकेंगे;
- पारिवारिक जीवन शिक्षा में अपनाई जाने वाली पद्धतियों को स्पष्ट कर सकेंगे;
- विभिन्न एजेन्सियों की भूमिका के बारे में वर्णन कर सकेंगे; और .
- विभिन्न एजेन्सियों को उनकी भूमिका के लिए उपयोगी सुझावों के बारे में जान सकेंगे, अपने सुझाव दे सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

आप पहले ही पारिवारिक जीवन शिक्षा के महत्त्व और उद्देश्यों का अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में पारिवारिक जीवन शिक्षा में घर, स्कूल, और धर्म की भूमिका का अध्ययन करेंगे। साथ ही पारिवारिक जीवन शिक्षा के लिए अलग–अलग स्तरों पर अपनाई जाने वाली पद्धतियों के बारे में भी जानेंगे।

जब हम पारिवारिक जीवन शिक्षा की पद्धतियों के बारे में सोचते हैं तो प्रायः यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि ये जिम्मेदारी किसकी हों? क्या पढ़ाया जाए? कब पढ़ाया जाए? किस प्रकार पढ़ाया जाए? कितना पढ़ाया जाए? ये वे सामान्य प्रश्न हैं जो प्रायः अभिभावक, शिक्षक एवं इससे जुड़े अन्य लोगों के मन में उठते हैं, इन्हीं का उत्तर देने की यहाँ कोशिश की जा रही है।

समाज कार्यकर्त्ता जो पारिवारिक पृष्ठभूमि से जुड़े हैं वे इस बात का उत्तर दे सकते हैं कि पारिवारिक जीवन में प्रशिक्षण किसको दिया जाए? इस संबंध में अभिभावकों के दृष्टिकोण का वर्णन करते हैं। उनका कहना है कि प्रायः पिता यह विचार व्यक्त करते हैं कि बच्चों को शिक्षित करना माताओं का काम है। माताएँ अनुभव करती है कि यह काम शिक्षकों का है। शिक्षक यह महसूस करते हैं कि यह अन्य बाहरी विशेषज्ञों मसलन् धर्म गुरुओं या उपदेशकों का काम है। दूसरे

शब्दों में प्रत्येक पक्ष अपनी जिम्मेदारी दूसरों पर डालना चाहता है। परन्तु तथ्य यह है कि यह परिवार, स्कूल और धर्मस्थल सभी की सामूहिक जिम्मेदारी है।

4.2 पारिवारिक जीवन शिक्षा प्रदान करने में घर की भूमिका

पारिवारिक जीवन के बारे में समझने और शिक्षित करने में घर एक आदर्श स्थान है क्योंकि माता–पिता और बच्चों के बीच वर्षों तक लगातार सम्बन्ध रहता है। यह सम्बन्ध दृष्टिकोण को विकसित करने और जानकारी बढ़ाने में अति महत्त्वपूर्ण है। बड़े होने पर कोई व्यक्ति कैसे कार्य करता है यह बहुत कुछ इस बात से प्रभावित होता है कि उनकी बचपन की शिक्षा एवं अनुभव कैसे रहे हैं।

जो बुनियादी दृष्टिकोण प्रारंभिक वर्षों में घर पर विकसित होता है वही बाद के जीवन पर भी व्यापक असर बनाए रखता है। इसलिए परिवार को, बच्चे के भौतिक, भावनात्मक, बौद्धिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए आवश्यक शिक्षा देने की भूमिका की जिम्मेदारी लेना अति आवश्यक है। यह पारिवारिक जीवन की बुनियादी सफलता का आधार भी है।

शिक्षक के रूप में माता पिता

बच्चों के लिए घर स्कूलों का भी स्कूल है और माता–पिता ही उनके सर्वश्रेष्ठ शिक्षक होते हैं। माता–पिता के प्रति बच्चे का लगाव प्रारम्भिक वर्षों में बच्चे के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। साथ ही यहाँ कहा जा सकता है कि किसी वयस्क व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके घर के बचपन के अनुभवों से अवश्य प्रभावित रहता है।

जॉन लॉक के शब्दों में बच्चे का दिमाग 'तबला रासा' (लेटिन भाषा में इसका अर्थ साफ स्लेट होता है) का तरह है। माता–पिता इस साफ स्लेट पर कुछ भी लिख सकते हैं। परिवार के बारे में संपूर्ण ज्ञान बच्चे की शुरुआती दिनों के अनुभवों से मिलता है। एक बच्चे को जिस प्रशिक्षण की ज़रूरत होती है, उसे वे सब घर से

मिलते हैं तथा उसे वे जीवन के सभी उतार चढाव सीखने को मिल जाते हैं। अतः घर ही सबसे प्रथम सामाजिक निकाय है।

परिवार में प्रचलित मानदण्ड और नैतिक मूल्य बाद के जीवन के लिए मार्गदर्शक का कार्य करते हैं। अभिभावकों के वे उदाहरण, जैसे सामाजिक न्यायप्रियता का गुण, सभी वर्गों और जाति के प्रति उदार रवैया, त्याग और दूसरों की सहायता करना आदि गुण बच्चे को अपना स्वयं का पारिवारिक जीवन बनाने में सहायता करते हैं। घर पर ही भावनात्मक, वैयक्तिक एवं सामाजिक व्यवहार की अभिव्यक्ति के अवसर भी मिलते हैं।

बिना माता–पिता के साथ वाले बच्चों में मादक–द्रव्य और अल्कोहल के सेवन में लिप्तता की संभावना बहुत अधिक रहती है। माता–पिता के साथ रहने वाले किशोरों की तुलना में, ऐसे बच्चों में व्यस्क होने पर मनोवैज्ञानिक असंतुलन के कारण आत्महत्या की प्रवृत्ति विकसित होने की संभावना अधिक होती है। जहाँ तक संभव हो सके, बच्चों को माता–पिता द्वारा सहयोग तथा संबल प्रदान किया जाना चाहिए।

समाज कार्य मूल्यों की प्रासंगिकता

भारत में समाज कार्यकर्त्ताओं के लिए आचार संहिता (थॉमस 2015) ने सामाजिक कार्यों के बारह मूल मूल्यों पर प्रकाश डाला है, मानवता की सेवा, सामाजिक न्याय, सम्मान और व्यक्ति के लिए सम्मान, मानवीय रिश्तों का महत्त्व, योग्यता, अखंडता, कड़ी मेहनत अध्यापन, पेशे के प्रति निष्ठा, सांस्कृतिक संवेदनशीलता, देशभक्ति, और जिम्मेदारी और प्रतिबद्धता। ये समाज कार्य मूल्य लगातार एक व्यक्ति के व्यक्तित्व को बेहतर बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

मानवता की सेवाः समाज कार्यकर्त्ता आत्म–बलिदान के तत्व के साथ मनुष्य के भाईचारे के आदर्श पर अपनी सेवा प्रदान करते हैं। लोगों को स्वीकार करना

चाहिए कि दूसरों की सेवा करना स्वार्थ से अधिक महत्त्वपूर्ण है और इसलिए दूसरों की ज़रूरतों को अपने निजी हितों के आगे रखें।

सामाजिक न्यायः समाज कार्यकर्त्ताओं की तरह सभी को समाज में विशेष रूप से कमज़ोर, वंचितों, शोषितों और गरीब से गरीब व्यक्ति के प्रति अन्याय को चुनौती देनी चाहिए।

गरिमा और व्यक्ति के मूल्य का सम्मानः सभी मनुष्यों में समान मूल्य और प्रतिष्ठा है। वे अपने स्वयं के मूल्य और गरिमा के संबंध में सोचने, महसूस करने, योजना बनाने, निर्णय लेने और कार्य करने में सक्षम हैं। प्रत्येक को देखभाल और सम्मान के साथ व्यवहार किया जाना चाहिए।

मानवीय संबंधों का महत्त्वः मानवीय संबंधों के मूल्य का महत्त्व यह बताता है कि समाज कार्यकर्त्ता सेवा उपयोगकर्त्ता की चिंताओं को समझते हैं और जानते हैं कि वे कैसा महसूस करते हैं जिसके परिणामस्वरूप गर्म और स्वस्थ संबंध होंगे।

सक्षमताः लोगों को अपने पेशे और ग्राहकों की जिम्मेदारी और प्रतिबद्धता के साथ क्षमता के क्षेत्रों में अभ्यास करना चाहिए। उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रदान की जाने वाली सेवाएँ उच्चतम गुणवत्ता वाली हों, प्रभावी हों और ग्राहक के सर्वोत्तम हित में हों।

वफादारीः मूल्यों का एक महत्त्वपूर्ण उप–समूह नैतिक या सामाजिक आयाम वाले लोगों में होता है, जैसे ईमानदारी, अखंडता, करुणा, निष्पक्षता, दान और सामाजिक जिम्मेदारी। लोगों को ईमानदारी, विश्वास पात्रता, सम्मानजनक होने और न्याय और निष्पक्षता की भावना के साथ व्यवहार के उच्च कोड को बनाए रखकर पेशे के नैतिक सिद्धांतों का पालन करना चाहिए।

कड़ी मेहनतः कड़ी मेहनत को सफलता के लिए कदम कहा जाता है। कड़ी मेहनत का कोई विकल्प नहीं है। कड़ी मेहनत से आत्म–विकास के मार्ग प्रशस्त

होते हैं जो किसी के जीवन की महत्त्वाकांक्षाओं को पूरा करते हैं। स्व–अनुशासित होना वह गुण है जो किसी को आत्म–प्रेरित बनाता है। यह एक व्यक्ति को वह करने में सक्षम बनाता है जो आवश्यक और समझदार है।

शिक्षकः समाज कार्यकर्त्ता व्यक्तिगत विकास और ग्राहकों की खोज को बढ़ावा देते हैं जैसे कि एक शिक्षक स्कूल प्रशासन द्वारा सौंपे गए प्रत्येक छात्र के विकास में शामिल होता है। समाज कार्यकर्त्ताओं से अपेक्षा की जाती है कि वे ग्राहकों और सेवा चाहने वालों को चुनौतियों, बाधाओं और समस्याओं का सामना करने के लिए उत्साहित और प्रेरित करें।

व्यवसाय के प्रति वफादारीः किसी एक संगठन के प्रति निष्ठा और लगाव विकसित करने के लिए इसकी बहुत आवश्यकता है। किसी को अस्वस्थ व्यवहार से बचना चाहिए जो पेशे के मूल्यों को प्रभावित करता है। पेशे से वफादारी कार्यकर्त्ता से अपेक्षा करता है कि वह अपने व्यावसायिक कर्तव्यों को अधिक से अधिक जिम्मेदारी और प्रतिबद्धता के साथ अस्वास्थ्यकर व्यवहार से दूर ले जाए।

सांस्कृतिक संवेदनशीलताः सभी को सांस्कृतिक रूप से जागरूक होना चाहिए और अपनी सांस्कृतिक विरासत, मूल्यों और सांस्कृतिक मतभेदों का सम्मान करना चाहिए। सांस्कृतिक संवेदनशीलता के मूल्य को ध्यान में रखते हुए किसी को भी अपने विचारों, विश्वासों, रीति–रिवाजों और जीवन शैली को ग्राहकों पर नहीं थोपना चाहिए।

देशभक्तिः लोगों को अपने देश की आकांक्षाओं के संवर्धन और संवर्धन के प्रति निष्ठावान और समर्पित होना पड़ता है और इसके मूल्यों और संस्कृति के विकास, समृद्धि और दृढ़ता की दिशा में काम करना पड़ता है। किसी एक राष्ट्र के बारे में गर्व होना चाहिए और सामाजिक कार्य के अभ्यास के दौरान इसे स्पष्ट करना चाहिए।

जिम्मेदारी और प्रतिबद्धताः लोगों में एक परिवार, संगठन और समाज के प्रति जिम्मेदारी और प्रतिबद्धता की भावना होनी चाहिए। उन्हें सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध होना चाहिए, सामाजिक व्यवस्था और संरचनाओं में बदलाव लाना चाहिए जो समानता, मानवाधिकारों और प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण में बाधाएं हैं।

सामाजिक कार्य मूल्यों को कम करना और विकसित करना नैतिक रूप से ईमानदार व्यक्ति होने की सुविधा प्रदान करेगा।

चरित्र निर्माण में घर की भूमिका

चरित्र पारिवारिक जीवन को किस प्रकार प्रभावित करता है? किसी भी परिवार की सफलता दम्पत्ति के चरित्र पर निर्भर करती है। घर के सदस्यों के चरित्र निर्माण में घर की भूमिका अति महत्त्वपूर्ण है। सफलता या असफलता, अच्छा या खराब, सामंजस्य और खशी अथवा शोक यह सब बुद्धिमता की अपेक्षा चरित्र से ज्यादा प्रभावित और निर्भर होते हैं।

चरित्र मनुष्य को कुछ निश्चित सिद्धान्तों पर चलने को प्रेरित करता है। चरित्रवान मनुष्य पर भरोसा और विश्वास किया जा सकता है। अतः घर पर ही चरित्र का प्रशिक्षण एवं शिक्षा परे परिवार के लिए अनिवार्य है। आधुनिक युग में जिन्दगी के प्रत्येक हिस्से में अच्छे नेतृत्व का अभाव महसूस किया जाता है। इसका मुख्य कारण घर की ही गलती है। यह चरित्र निर्माण के दौरान अच्छे घरेलू वातावरण की अपर्याप्ता का प्रतिफल होता है।

माता पिता की यह जिम्मेदारी होती हैं, वे बच्चों को सर्वत्र स्वीकार्य लडके–लडकी बनने, या सक्षम किशोर तैयार करने, अथवा आपसी सहभागिता एवं समन्वयकारी पति–पत्नी अथवा अच्छे माता पिता बनाने के लिए प्रशिक्षण प्रदान करें। अच्छे घरों से ही अच्छे लोगों की रचना होती है। यदि माता–पिता अच्छा व्यवस्थित जीवन जी रहे हैं तो बच्चे भी वैसा ही वैवाहिक जीवन, घर और परिवार बना सकते हैं।

बच्चा जो प्यार, सुरक्षा एवं लगाव पाता है और खशहाल परिवार में अच्छी देखभाल प्राप्त करता है, उसकी एक सचेत एवं खुशहाल पारिवारिक जीवन की ओर अच्छी शुरुआत होती है।

घर पर वैवाहिक जीवन के बारे में शिक्षा

बच्चों को विवाह के लिए शिक्षा देने का कार्य किसको आरंभ करना चाहिए? जैसा कि आप देखते हो सभी तरह की शिक्षा के लिए घर ही एक प्रारम्भिक बिन्दु है। एक बच्चे की एक लड़का अथवा लड़की, एक पति अथवा पत्नी, एक माता अथवा पिता के रूप में जो छवि बनेगी उसका आकार घर के सामाजिक एवं भावनात्मक वातावरण के अनुरूप बनेगी।

एक बच्चा विवाह एवं परिवार के बारे में अपने माता–पिता से क्या सीखता है? उत्तर है, कि एक बच्चा पारिवारिक जीवन की अच्छाइयाँ अथवा कमियाँ अपने माता–पिता से जान लेता है। वे प्यार करने और उसे प्यार पाने की कला, स्नेह करने और पाने की कला एवं सामंजस्य और त्याग की कला परिवार से सीखते हैं। मानव व्यवहार एवं समन्वय की कला का पहला पाठ परिवार से सीखा जाता है। लड़कियाँ जहाँ घर में ही घर सवारने की कला सीखती हैं वहीं लड़के मर्दाना दक्षता के कार्य सीखते हैं। माता–पिता का नैतिक दायित्व है बच्चों को वैवाहिक जीवन के लिए तैयार करें। पारिवारिक जीवन के बारे में आवश्यक शिक्षा बच्चों को यह जानने के लिए प्रेरित करती है कि घर की प्रकृति एवं उसका मतलब क्या है जिसका कि स्वयं वे भी एक हिस्सा हैं। इससे उनको अपने स्वयं के पारिवारिक जीवन के लिए तैयार होने में मदद मिलती है।

घर एवं व्यक्तित्व निर्माण

हमारे व्यक्तित्व के निर्माण में घर की क्या भूमिका है? एक बच्चा क्या जानता है इससे ज्यादा आवश्यक यह है कि एक बच्चा क्या बनता है। एक अच्छा व्यक्तित्व एक सर्वोत्तम मूल्यवान उपहार है जो माता–पिता अपने बच्चों को दे सकते हैं।

व्यक्तित्व के सामान्य विकास के लिए बच्चे को संतोषप्रद पारिवारिक जीवन उपलब्ध होना चाहिए। ऐसे घर जिनमें माता–पिता एवं बच्चे सुखःदुख में साथ–साथ शरीक होते हैं, जब दोस्तों एवं रिश्तेदारों के मध्य मनोरंजक क्रियाओं में, बच्चे भी माता–पिता के साथ ही हिस्सा लेते हैं, जहाँ हमेशा शान्ति एवं खुशी का वातावरण रहता है उनके बच्चे व्यक्तिगत रूप से व्यवस्थित एवं सामाजिक रूप से आत्मविश्वासी व्यक्ति बनते हैं। ऐसे बच्चे दूसरों के साथ सम्बन्ध बनाते समय व्यक्तिगत क्षमता एवं जिम्मेदारी का अच्छा निर्वाह कर लेते हैं।

पारिवारिक जीवन में कुछ बुनियादी मानवीय आवश्यकताएँ उपलब्ध होती हैं वे अन्य किसी जगह की अपेक्षा ज्यादा प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त होती है। माता–पिता जो वास्तव में एक दस को समर्पित हैं वे अपने बच्चों को सुरक्षा की भावना देते हैं। ये माता–पिता मानवी सम्बधों का अवचेतन मॉडल भी स्थापित करते हैं। बच्चे समझ सकते हैं कि आपसी मतभेदों और विवाद के बावजूद भी परिवार की वफादारी पर कभी आँच नहीं आती। आगे चलकर ये ही बच्चे मजबूत पारिवारिक सम्बन्ध स्थापित कर पाते हैं। ऐसा अनुभव किताबों से अथवा स्कूली कक्षाओं में नहीं मिल सकता। यह अनुभव केवल दिन–प्रतिदिन की पारिवारिक जिन्दगी में ही मिल सकता है।

आप अपनी वंशागत आदतें एवं व्यवहार कहाँ से प्राप्त करते हैं? निश्चित रूप से आपकी अधिकांश अच्छी या बुरी प्रवृत्तियाँ अपने माता–पिता से उत्तराधिकार में प्राप्त होती हैं। ये प्रवृत्तियाँ ही आपकी आदतें या व्यवहार का रूप लेती हैं। यह उस वातावरण का प्रतिफल है जिसमें आप पलते और बड़े होते हैं। व्यक्तित्व विकास में महत्त्वपूर्ण तत्व है उत्तराधिकार, वातावरण और शिक्षा । ये सभी तत्व घर पर ही उपलब्ध होते हैं। वृक्ष शाखा जिधर झुकती है, पेड़ भी उधर ही झुकता है। हजारों मील की दौड़ भी पहले कदम से ही शुरू होती है।

सेक्स शिक्षा में घर की भूमिका

क्या आप सोचते हैं कि सेक्स शिक्षा एवं पारिवारिक जीवन की शिक्षा एक समान है यद्यपि वे आपस में सम्बन्धित हैं लेकिन सेक्स शिक्षा पारिवारिक जीवन की शिक्षा के समान नहीं है। निःसंदेह, सेक्स भी पारिवारिक जीवन में अहम भूमिका रखता है। आजकल, अनुसंधानों से पता लगा है कि लगाव, प्यार और एक दूसरे का साथ, ये सारी बातें दम्पत्ति के लिए अति आवश्यक हैं। इन आवश्यकताओं की पूर्ति अधिकांशतः सेक्स सम्बन्धों के द्वारा होती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सेक्स, वैवाहिक जीवन में विशेष महत्त्व रखता है। बहुत लोगों का विचार है कि वैवाहिक जीवन की सफलता या असफलता संतोषजनक सेक्स सम्बन्धों पर निर्भर करती है। यह बात सफल पारिवारिक जीवन में सेक्स शिक्षा के महत्त्व को रेखांकित करती है।

दुर्भाग्य से बच्चों के लिए बहुत जल्दी ही बहुत कुछ' पाने की ललक से अनावृत है जबकि नैतिक शिक्षा एवं मार्गदर्शक न्यून है। अतः बच्चों को सेक्स के प्रति दिशा एवं मार्गदर्शन देने की अहम भूमिका घर की होती है। सेक्स शिक्षा के लिए अलग से एक खण्ड में अध्ययन किया जाएगा, अतः इस इकाई में यह विषय विस्तार में नहीं लिया गया है।

घर पर होने वाली शिक्षा के मार्ग में कठिनाइयाँ

क्या सभी घरों में पारिवारिक जीवन के बारे में शिक्षा प्रदान करने की सुविधा होती हैं। दुर्भाग्य से ऐसा नहीं है। तो इस रास्ते में आने वाली रुकावटें क्या है?

क) माता–पिता की असफलता

आजकल अधिकांश परिवारों में एक या दो बच्चे ही होते हैं। अतः माता–पिता अपने बच्चों को किसी तरह की बड़ी या छोटी जोखिम उठाने की इजाजत नहीं देते। अत्यधिक सुरक्षा एवं अति महत्त्वाकांक्षी की भावना व्याप्त रहती है। अत्यधिक सुरक्षित वातावरण में पले बच्चे बाद की जिन्दगी

में आने वाले सामान्य खतरों का सामना भी ठीक से नहीं कर पाते। वे एक संरक्षित जीवन जीने की लालसा रखते हैं।

ख) माता–पिता का अति आशावादी होना

माता–पिता बच्चों से बहुत बड़ी उम्मीदों रखते हैं। शिक्षा प्रणाली भी अत्यधिक प्रति स्पर्धात्मक हो गई है। जो बच्चे माता–पिता की उम्मीदों पर खरा नहीं उतरते, वे कई लावहारजन्य समस्याओं का सामना करते हैं। आजकल अधिकाधिक छात्र व्यवसायिक श्रेष्ठता पाने की खोज में असफल होकर अपने दुख से मुक्ति पाने हेतु आत्महत्या के प्रयास जैसा अतिवादी कदम उठा रहे हैं। यह युवाओं की स्वयं से तथा परिवार की अति आशावादिता होने तथा ऐसी आशावादिता को पूरा न कर पाने के कारण से उपती असफलता के कारण होता है। जब एक छात्र स्वयं को इन आशाओं को पूरा कर पाने में असमर्थ पाता है तो वह अवसादग्रस्त हो जाता है जिससे वह यह अतिवादी कदम उठाने की ओर प्रेरित हो सकता है।

ऐसी परिस्थितियाँ समाज कार्य हस्तक्षेप की आवश्यकता की माँग करती है। समाज कार्यकर्त्ता परिवार को अपने बच्चे को वास्तविक रूप से समझने हेतु प्रेरित तथा शिक्षित कर सकता है और उन पर असंगत दबाव न लादने की समझ दे सकता है जो अवसाद का कारण बन सकता है। माता–पिता को समझाया जा सकता है कि वे अपने बच्चों से संवाद बनाये रखें ताकि बच्चे उनसे अपनी भावनाएँ और समस्याएँ स्वतंत्र रूप से बाँट सके।

ग) तिरस्कृत बच्चे

माता पिता द्वारा तिरस्कृत बच्चे भी एक समस्या है। जो माता–पिता बच्चे की अनदेखी करते हैं वे एक तरह से उसको तिरस्कृत करते हैं। अब जबकि औरतों की एक बड़ी संख्या कार्यरत है बच्चों के दो पिता हो जाते हैं, दो आश्रयदाता बन जाते हैं पर माता घर पर नहीं रहती। कामकाजी माँ

बच्चे की देखभाल के स्थान पर आफिस कार्य को वरीयता देती है, वह एक अस्वीकार्य अभिभावक की गिनती में आती है। वे माता–पिता जो अपने बच्चों को स्नेह, समय, साथ, नहीं देते या देखरेख और अनुशासन में कोताही रखते हैं वे बच्चों को एक सुखी और संरक्षित जीवन से वंचित करते हैं। इस उपेक्षा का फल यह निकलता है कि बच्चे अभिभावकों का ध्यान खींचने वाला व्यवहार, अन्य सदस्यों के प्रति ईर्ष्या, कुण्ठा, चिन्ता या अत्यधिक दूसरे पर निर्भरता आदि से ग्रस्त होते हैं। ऐसे बच्चे भविष्य में अपने पारिवारिक जीवन में अच्छे माता–पिता या जीवन साथी नहीं बन पाते।

घ) पूर्णतावादी माता–पिता

कुछ माता–पिता घर का आवास्तविक प्रतिरूप, दाग रहित, निशानरहित, सेना जैसा कठोर अनुशासन युक्त नक्शा अपने दिलो दिमाग में बिठाये रखते हैं। उनके बच्चे अत्यधिक औपचारिक, कठोर एवं असहज बन जाने की संभावना रहती है। उनके अन्दर विकृत मानसिकता पैदा होती है जो बाद में वैवाहिक जीवन में टूट का कारण बनती है।

च) आसक्त एवं तानाशाह माता–पिता

कुछ ज्यादा आसक्ति रखने वाले माता पिता बच्चों को ज्यादा सुख सुविधाएँ देते हैं इससे बच्चे में आत्मविश्वास की कमी रहती है जो आगे मद्यपान नशा और गैर जिम्मेदाराना तरीके से रहने की तरफ ले जाती है। तानाशाही माता–पिता बच्चों के लिए सारे फैसले खुद करते हैं। वे बच्चों को कभी भी जिम्मेवार होने नहीं देते। ऐसे बच्चे जीवन भर डरपोक एवं अधिकार विहीन रहते हैं। अति आसक्त एवं तानाशाह . दोनों तरह के माता–पिताओं के बच्चों में विकृत मानसिकता पैदा होती है और विवाह एवं परिवार के बारे में उनके विचार भी विकृत हो जाते हैं।

सफलता के लिए माता–पिता के लक्षण

बच्चे को पालन माता–पिता के लिए एक चुनौती है। कभी–कभी यह माता–पिता के लिए जिम्मेदारी से भरा और संतुष्टिपूर्ण कार्य नहीं होता। यह एक पूर्णकालीन समर्पण है। बच्चे पालन एक उत्तरदायित्व है, एक बलिदान नहीं। माता–पिता को बच्चे को प्यार, खुशी तथा प्रेरणा देनी चाहिए जिससे वे लक्ष्य प्राप्ति का विश्वास अर्जित कर सके, इसके साथ उन्हें उनकी सीमाओं से भी अवगत कराना चाहिए।

बच्चे के पालन–पोषण में माता–पिता के लिए सहायक विशेषताएँ

- माता–पिता को बच्चे की विभिन्न आयु–वर्ग, और विकास के चरणों की आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए। उन्हें बच्चे को भावात्मक सुरक्षा देनी चाहिए और उनमें आत्म–पहचान तथा आत्मविश्वास जाग्रत करना चाहिए। प्रत्येक बच्चे में कुछ जन्मजात संभावनाएँ होती है। माता–पिता को इन खूबियों के विकास हेतु पर्याप्त समय एवं स्थान उपलब्ध कराना चाहिए। अत्यधिक चौकसी भी अच्छी नहीं होती। अच्छा अनुशासन रहना चाहिए लेकिन वह कठोर नहीं होना चाहिए।
- बच्चे के लिए माता–पिता सर्वाधिक प्रभावी आदर्श प्रतिरूप होते हैं। माता–पिता को अपने बच्चे से सम्मान, ईमानदारी, दयालुता, मित्रता और सौजन्यता प्रदर्शित करनी चाहिए। इससे उन्हें आगे चलकर एक सकारात्मक रूप में व्यवहार करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा। माता–पिता को बच्चों से तर्कसंगत आशावादिता रखनी चाहिए और समय–समय पर उन्हें अपनी आशावादिता से अवगत कराते रहना चाहिए।
- बच्चे को उसके स्वयं के दृष्टिकोण से समझना चाहिए। उन्हें छोटे–छोटे किए जा सकने योग्य कार्य देकर उनमें जिम्मेदारी की भावना का विकास करना चाहिए। उनमें जिम्मेदारी की भावना का विकास करना चाहिए। माता–पिता और बच्चों के बीच उत्पन्न होने वाली अधिकांश समस्याएँ आपसी बातचीत और तालमेल से फौरन सुलझ जाती है। बच्चे को

समझकर, माता–पिता उस कड़वाहट, गुस्से तथा भ्रम को दूर कर सकते हैं जो बच्चों में उत्पन्न हो सकता है।

- बच्चे को पालते समय अनुशासन अत्यंत आवश्यक है। अनुशासन से बच्चा सीखता है कि किस प्रकार का व्यवहार स्वीकृत है और किस प्रकार का नहीं। माता–पिता को बच्चों के लिए कतिपय सीमाएं निर्धारित करनी चाहिए जो बच्चे को दूसरों से व्यवहार करने तथा उनकी भावनाओं का आदर करना सीखने में सहायता करें।
- पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने में माता–पिता की भूमिका अति महत्त्वपूर्ण होती है। ''एक नदी कभी भी अपने उद्‌गम से ऊपर नहीं जा सकती। इसी तरह जो मूल्यों की शिक्षा देते हैं वे तब तक ऐसा नहीं कर सके जब तक स्वयं उन मूल्यों को धारण नहीं कर लेते।
- माता–पिता को अपने बच्चों के प्रश्नों का उत्तर देना चाहिए। यदि माता–पिता स्वयं को व्यस्त दिखाते हैं और उन्हें उत्तर नहीं देते, बच्चे अपना क्षोभ अभिव्यक्त कर सकते हैं और अपने विचारों तथा भावनाओं को बाँटना बन्द कर सकते हैं।

  माता–पिता को यह समझना चाहिए कि बच्चे पर असंगत दबाव उन्हें अवसाद की ओर धकेल सकता है। कुछ माता–पिता बच्चों पर बोर्ड परीक्षाओं में उन्हें प्रदर्शन हेतु टी.वी. कनेक्शन काटकर, सेलफोन का उपयोग निम्नतम करके और खेलने का समय कम करके, उन पर दबाव बनाते हैं। ऐसे दबाव बच्चे पर नकारात्मक असर डालते हैं। अवसाद का मुख्य लक्षण है जब एक बच्चे के रोज़मर्रा के व्यवहार में उल्लेखनीय परिवर्तन नजर आने लगे। इसलिए यह आवश्यक है परिवार में बच्चे से स्वस्थ संबंध विकसित किए जाने चाहिए।
- माता–पिता को न केवल बच्चे के भविष्य को लेकर सतर्क होना चाहिए वरन् उसकी मानसिक दशा की भी चिंता करनी चाहिए। बहुत से माता–पिता अपने बच्चे पर सारा समय पढ़ने के लिए दबाव बनाते हैं और

अपने निर्देशों पर अमल न करने पर चिल्लाते हैं। कभी–कभी बच्चे इस प्रकार के सुधारात्मक व्यवहार को पसन्द नहीं करते।

- माता–पिता को बच्चों से रेस के घोड़े जैसा व्यवहार नहीं करना चाहिए। उन्हें बच्चों की बुद्धिमत्ता का विकास करने में सहायता करनी चाहिए और अचानक उनकी क्रियाओं पर रोक नहीं लगानी चाहिए। माता–पिता को दूसरों के सामने बच्चों पर चिल्लाना और उन्हें धमकाना नहीं चाहिए और छोटी–छोटी बातों में उनकी तुलना दूसरे बच्चों से नहीं करनी चाहिए।

आज, घर की संरचना तथा कार्य काफी हद तक बदल चुके हैं। घर के बहुत सारे कार्य बाहरी ऐजेन्सियां द्वारा किए जा रहे हैं। यहां परिवार जीवन शिक्षा में स्कूल, मित्र समूह और धर्म की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी: अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) जीवन के प्रशिक्षण के लिए घर ही आदर्श स्थल क्यों हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4.3 परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में स्कूल की भूमिका

क्या पारिवारिक जीवन शिक्षा में स्कूल की भी कोई भूमिका है? कई लोग इस बात को कम करके आँकते हैं। यद्यपि पारिवारिक जीवन की शिक्षा के लिए घर ही सबसे घटक है तो भी स्कूल की भी अहम भूमिका है। स्कूल को घर का ही विस्तार कह सकते हैं। क्योंकि स्कूल का बच्चों से नियमित एवं निरंतर सम्पर्क होता है अतः यह भी पारिवारिक शिक्षा व प्रशिक्षण देने में पूरक तत्व है।

स्कूल की आयु वह अवधि है जब बच्चे का व्यापक दायरा बढ़ता है। वह अन्य साथियों, शिक्षकों एवं अन्य प्रौढ़ व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है जो समाज का ही हिस्सा हैं। अतः स्कूल में भी पारिवारिक जीवन की शिक्षा को समझने के पर्याप्त अवसर होते हैं।

स्कूल को हस्तक्षेप क्यों करना चाहिए? बहुत से माता–पिता के पास तकनीकी ज्ञान नहीं होता, बच्चों के उन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए जो वे सेक्स एवं परिवार के बारे में पूछते हैं। जब बच्चे बढ़ रहे होते हैं तो उनको स्वस्थ मानसिकता एवं सही फैसले करने एवं चुनाव करने में बच्चों की सहायता करने की योग्यता कुछ माता–पिता में नहीं होती। माता–पिता द्वारा दी गई अनौपचारिक शिक्षा प्रायः पारिवारिक जीवन की शिक्षा के वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करने में असफल सिद्ध होती है।

अधिकतर भारतीय घरों में, माता–पिता अशिक्षित होते हैं और बच्चों को पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने में सक्षम नहीं होते। बहुत से पुराने मूल्य और धारणाएँ बदल गई हैं। ऐसे हालात में, स्कूल ही, घर की अपेक्षा, पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने में ज्यादा विश्वसनीय है। स्कूल माता–पिता के मुकाबले ज्यादा विस्तृत एवं योजनाबद्ध तरीके से शिक्षा दे सकता है।

क्या स्कूलों में पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने पर कोई प्रतिबंध है? आमतौर पर पारिवारिक जीवन की शिक्षा को सेक्स शिक्षा के समान देखा जाता है। बहुत से

माता–पिता इस क्षेत्र के लिए समूह शिक्षा को शंका या भय की दृष्टि से देखते हैं। निःसंदेह इन पाठ्यक्रमों में सेक्स शिक्षा को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है लेकिन पारिवारिक शिक्षा के प्रति इन पाठ्यक्रमों में ऐसी कोई बात नहीं है। माता–पिता को इस बाबत आश्वस्त रहना चाहिए।

इस शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य जिन्दगी में उपयुक्त चुनाव की रूपरेखा बताना है। पारिवारिक जिन्दगी में बुद्धिमतापूर्ण निर्णय लेने हेतु बच्चों को सेक्स और पारिवारिक जिन्दगी के बारे में सही सच्ची जानकारी मिलनी चाहिए। इस शिक्षा हेतु माता पिता एवं शिक्षकों द्वारा एक सांझा प्रयत्न किया जाना चाहिए। स्कूलों में ऐसी जानकारी बिना किसी उत्तेजना अथवा दबाव के ज्यादा निष्पक्ष और प्रभावी तरीके से दी जा सकती है।

परिवार जीवन शिक्षा देने में शिक्षक की भूमिका

स्कूल में बच्चों को पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने के लिए शिक्षक ही मुख्य व्यक्ति होता है। शिक्षक स्वयं सक्षम, मेधावी और विवेकपूर्ण होना चाहिए। स्कूल का कोई भी शिक्षक पारिवारिक शिक्षा दे सकता है। स्कूल में पढ़ाए जाने वाले प्रत्येक विषय और वहाँ के कार्यकलाप जीवन को बेहतर तरीके से समझने में योगदान दे सकते हैं। स्कूल में प्राप्त किए अनुभव आदर्शों और मूल्यों के निर्माण में सहयोग देते हैं। बदले में इससे बच्चे के चरित्र निर्माण में मदद मिलती है। यह शिक्षा वैयक्तिक स्तर एवं सामाजिक स्तर पर समन्वय बैठाने में भी योगदान देती है।

जैसे कि पहले कहा गया है कि सेक्स शिक्षा भी पारिवारिक जीवन शिक्षा का एक अहम पहलू है। शिक्षक ये शिक्षा बिना किसी झिझक के दे सकता है। शिक्षक इस गूढ़तम व्यक्तिगत रहस्य को भी प्रभावशाली तरीके से वर्णन कर सकता है। ज्यादा से ज्यादा छात्र शिक्षक के पास अपनी निजी एवं सामान्य समस्याएँ लेकर आते हैं इसके लिए वे माता–पिता की अपेक्षा शिक्षक को वरीयता देते हैं। उनका विश्वास है कि शिक्षक ज्यादा जानकार और ज्यादा व्यवस्थित होते हैं।

स्वयं के बारे में ज्यादा बेहतर जानने के लिए शिक्षक बच्चों की मदद करते हैं ताकि भविष्य में वे ज्यादा व्यवस्थित हो सकें। शिक्षक का कार्य होता है जानकारी देना, संदेहों को दूर करना और मार्ग दर्शन करना – संक्षेप में एक परामर्शदाता। अज्ञानता की अपेक्षा जानकारी से परिपूर्ण युवा पीढ़ी आगे बढ़ने में आने वाली चुनौतियों का सामना सेक्स एवं वैवाहिक जीवन की बातों को बेहतर समझ के द्वारा अधिक प्रभावी ढंग से कर सकेगी।

संगी साथियों की भूमिका

पारिवारिक जीवन की शिक्षा में संगी साथियों की क्या भूमिका है? जब वे स्कूल जाने लगते हैं बच्चे अपना अधिकांश समय घर से बाहर अपने संगी साथियों में व्यतीत करते हैं। अतः संग साथियों का बच्चे के दृष्टिकोण, व्यवहार एवं हित आदि पर परिवार से भी ज्यादा प्रभाव पड़ता है। संगी साथी युवक को सामाजिक ढाँचा एवं मान्यताओं के अनुरूप उसको सामाजिक बनाने में मदद करते हैं युवक भी अपने समूह में अधिक खुलापन और स्वतंत्रता महसूस करता है। साथ ही साथी समूह एक प्रयोगशाला के रूप में कार्य करते हैं भौतिक और सामाजिक दक्षता एवं सामाजिक भूमिका को विकसित करने के लिए। इस प्रक्रिया में उनकी भूमिका एक शिक्षक की तरह की होती है। इन सबसे किशोर को सुरक्षा एवं सहारा मिलता है। यह वह स्थिति है जब वह स्वतंत्र होना चाहता है।

संगी साथियों का प्रभाव जहाँ बेहतर व्यवस्थित होने में सहायक होता है वहीं इनमें प्राप्त जानकारी एवं अनुभव के साथ कुछ खतरे भी जुड़े रहते हैं यह खासकर सेक्स और वैवाहिक जीवन के संदर्भ में हो सकते हैं। प्राप्त जानकारी गलत एवं खतरनाक भी हो सकती है। संगी साथी बुरी नीयत वाले अथवा अनुभव शून्य भी हो सकते हैं। ऐसी कोई गलत, अपर्याप्त अथवा विकृत जानकारी सेक्स या वैवाहिक जीवन के संदर्भ में, जीवन में अलाभकारी एवं गलत दृष्टिकोण पैदा कर सकती है। यह बाद में गंभीर मानसिक तनाव, चिन्ता या गलत व्यवहार की ओर ले जा सकती है। वैवाहिक जीवन की कुछ समस्याएँ जैसे – नपुंसकता, ठण्डापन,

अपराध–भावना, काम विकृति, अत्यधिक कामुकता आदि ये सब संगी साथियों के नकारात्मक प्रभाव का नतीजा होता है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) किस प्रकार से परिवार जीवन शिक्षा देने में स्कूल के शिक्षक ही प्रमुख व्यक्ति होते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4.4 परिवार जीवन शिक्षा प्रदान करने में धर्म की भूमिका

पारिवारिक जीवन की शिक्षा सभी धर्मों द्वारा अनौपचारिक रूप से परिवारों के माध्यम से ही दी जाती है। भारत के संदर्भ में, एक व्यक्ति के जीवन में धर्म का स्थान अति महत्त्वपूर्ण है। विवाह और परिवार को प्रत्येक धर्म द्वारा पवित्र माना गया है। प्रत्येक धर्म में विवाह और परिवार के लिए अपने–अपने कानून और नियम और तौर तरीका हैं।

अलग–अलग धर्मों में पारिवारिक संस्कृति अलग–अलग होती है। एक सफल पारिवारिक जीवन जीने के लिए मजबूत धार्मिक आधार होना बहुत आवश्यक है। आजकल युवाओं में एक फैशन बन गया है कि भगवान को अस्वीकारना एवं भौतिक संसार को महत्त्व देना। धर्म निरपेक्षता का युवा पीढ़ी ने गलत अर्थ निकाला है। श्री. सी. राजगोपालाचारी के अनुसार धर्मनिरपेक्षता का तात्पर्य यह नहीं है कि लड़को और लड़कियों को अनुशासन के लाभों से वंचित किया जाए जिसे अलग–अलग धर्मों के परिवारों ने खुले रूप से स्वीकार किए हैं।

अभी तक धर्मों के द्वारा पारिवारिक जीवन की विधिवत् शिक्षा के लिए कोई गंभीर सोच विचार नहीं किया गया था। लेकिन वैवाहिक संबंधों की टूटन का बढ़ता प्रतिशत और पारिवारिक जीवन में समस्याओं का बढ़ना, इनके कारण प्रायः सभी धर्म इसको गंभीरता से ले रहे हैं। कई धर्म, खासतौर से ईसाई, इन्होंने पारिवारिक जीवन की शिक्षा में कई सकारात्मक कदम उठाएँ हैं। पारिवारिक जीवन में अनुकूलन के प्रयास किए जा रहे हैं। पारिवारिक सलाह सुविधाएँ आयोजित की जाती हैं। चर्च को केन्द्रित कर चलाये जा रहे कार्यक्रम व्यापक रूप से स्वीकार्य हो रहे हैं और गति पकड़ रहे हैं। बहुत से दम्पत्ति सहायता एवं मार्गदर्शन हेतु इन केन्द्रों पर आते हैं।

अपने सदस्यों के लिए पारिवारिक जीवन की शिक्षा प्रदान करना प्रत्येक धर्म की अपनी जिम्मेवारी है। युवाओं को विवाह एवं पारिवारिक जीवन के बारे में जानने का अवसर इसकी शुरुआत करने से पहले ही उपलब्ध होना चाहिए। धार्मिक मूल्य किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को और भी अधिक निखार सकते हैं।

धर्म धार्मिक मान्यताओं के बारे में शिक्षा दे सकता है जो सेक्स और यौनिकता को एक दैवीय उपहार के रूप में समझने वाले मतों को शामिल कर सकता है। बच्चे और किशोर गर्भपात, जन्म नियंत्रण और लिंग भूमिकाओं पर सांस्कृतिक दृष्टिकोणों की विविधता से अवगत हो सकते हैं। इन मुददों पर विद्यालयी पाठ्यक्रम में बात नहीं की जाती। शिक्षक इन विभिन्न मतों पर चर्चा करने में

हिचकिचाहट अनुभव करते हैं। उन्हें डर होता है कि ऐसे विचार–विमर्श विशिष्ट धार्मिक तथा सांस्कृतिक मान्यताओं को बढ़ावा देने अथवा खंडन करने वाले माने जा सकते हैं। चूँकि सेक्स और उससे जुड़े मुददे वर्जित विषय के रूप में देखे जाते हैं अतः अधिकांश शिक्षक शिक्षण करते समय ऐसे विषयों से बचते हैं।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) क्या धर्म को परिवार जीवन शिक्षा में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4.5 जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में परिवार जीवन शिक्षा की पद्धतियाँ

पारिवारिक जीवन की शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। इसमें पुरुषों व स्त्रियों को परिपक्व बनाने वाले ज्ञान, दक्षता, दृष्टिकोण और नैतिक मूल्य आदि सम्मिलित हैं। ये शिक्षा व्यक्ति को विवाह, परिवार एवं समाज में उसकी अपनी भूमिका की पहचान कराने में सहायक होनी चाहिए।

हम यह प्रशिक्षण किस प्रकार दे सकते हैं? इस शिक्षा को देने के लिए कौन सी पद्धतियाँ हैं? किसी भी व्यक्ति के जीवन में विवाह और परिवार का एक महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। लेकिन बहुत थोड़े से दम्पत्ति ही इसका अनुभव रखते हैं क्योंकि इसके लिए विशेष जानकारी एवं शिक्षा आवश्यक होती है। इस शिक्षा के महत्त्व को ठीक से समझा नहीं गया आमतौर से यह अपेक्षा माता–पिता से की जाती है कि वे इस कार्य को समदानी इससे कई तरह की भ्रान्तियाँ हो सकती हैं। बहुत से माता–पिता उन्हीं बातों पर भरोसा करते हैं जो उनके पालन पोषण के समय की उन्हें याद रहती है। वे भी अपने मित्रों माता–पिता की सलाह पर निर्भर रहते हैं।

प्रायः सामान्य ज्ञान एवं बच्चों की देखभाल की पुस्तकें युवा दम्पत्ति के लिए मार्गदर्शक होती हैं। परन्तु ये पूरी तरह ठीक नहीं हैं। जिस प्रकार अन्य किसी व्यवसाय जैसे – अध्यापन नर्सिग, वाहन चालन या अन्य कोई व्यवसाय कार्य की शुरुआत से पहले कई वर्षों के खास प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। कई व्यवसायों में तो सेवाकालीन प्रशिक्षण भी दिया जाता है। लेकिन अधिकांश व्यक्तियों के लिए विवाह के लिए विवाह पूर्व की शिक्षा की आवश्यकता विचारणीय प्रश्न नहीं है। आसानी से यह उपलब्ध भी नहीं है। लेकिन आजकल इस प्रशिक्षण की महत्ता व्यापक रूप से स्वीकार की जाने लगी है।

क्योंकि पारिवारिक जीवन की शिक्षा मुख्यतः घर और स्कूल द्वारा ही दी जाती है, हम उनके द्वारा अपनाई जाने वाली पद्धतियाँ अलग–अलग अवस्थाओं के अनुरूप जैसे – स्कूल पूर्व की उम्र, प्राथमिक अवस्था (उम्र 6 से 9 वर्ष), किशोरावस्था से पूर्व एवं किशोरावस्था में, इनकी चर्चा सिलसिलेवार करेंगे।

स्कूल पूर्व की स्थिति

यह वह अवस्था है जहाँ पारिवारिक जीवन की शिक्षा का दायित्व पूर्ण रूप से परिवार का होता है। स्कूल इस प्रकरण में कहीं भी नहीं आता। प्राथमिक रवैया

जो प्रारंभिक वर्षों में घर में स्थापित होता है, बाद के दृष्टिकोण पर भी व्यापक असर रखता है। बच्चा प्रारंभिक जीवन का अधिक समय माता–पिता एवं अन्य पारिवारिक सदस्यों के बीच व्यतीत करता है। अतः पारिवारिक जीवन की शिक्षा की शुरुआत घर से ही होनी चाहिए। बाल्यकाल में माता को आगे आना पड़ता है। व्यक्तित्व का यह मूलभूत नमूना बाल्यकाल में ही बनने लगता है। यह कहा जाता है कि सेक्स शिक्षा भी माता–पिता द्वारा बच्चों को युवा होने पर दी जाती है जबकि वह ऐसा कई साल पहले शुरू कर सकते हैं।

बढ़ती लड़की के लिए, उसकी माँ आदर्श रूप होती है। छोटी लड़की कई तरीकों से अपनी माता को पहचानने की कोशिश करेगी। लेकिन लड़की को पिता की आवाज, स्पर्श और गर्माहट को भी महसूस करना चाहिए जो कि उसकी माता से एकदम अलग है। पिता की शक्ति, उनका विश्वास और लड़की के प्रति उनका व्यवहार ये सब भी उसके नन्हें दिमाग में एक अच्छे मनुष्य के विचार की छाप छोड़ते हैं। यदि वह इस तरह का अवसर चूकती है तो उसके लिए बाद में लड़कों और पुरुषों को समझना और उनके प्रति प्रशंसा का भाव मन में लाना बड़ा मुश्किल हो जाएगा। एक पुरुष का, अपने पिता के बारे में उसका अनुभव एक सुखद राह की भांति, अपने पति के साथ सामंजस्य करने और उसको समझने में उसके सामने होगा जब उसका विवाह हो जाएगा।

बढ़ता लड़का भी अपने माता और पिता से बहुत कुछ सीखता है। माता की चिन्ता आर स्नेह और छोटी–छोटी सुविधाओं का ख्याल रखना, कोमलता, गर्माहट और सहनशीलता य सब उसको एक अच्छी औरत की, उसकी पत्नी की पहचान कराते हैं। पिता का व्यवहार यह सिद्ध करता है कि एक पुरुष दृढ़ निश्चयी एवं शक्तिशाली होते हुए भी दयालु आर विचारवान हो सकता है।

घर के किसी विशेष कार्य की जिम्मेवारी को लेना और पूर्ण करना कोई आसान कार्य नहीं है। लेकिन माता–पिता का व्यवहार और भावना जिसके अन्तर्गत घर

की जिम्मेवारियाँ पूरी की जाती है, ये बच्चे के दृष्टिकोण का, स्त्री अथवा पुरुष के प्रति, आकार निश्चित करती हैं जो आगे की जिन्दगी में लाभकारी सिद्ध होती है।

स्कूल पूर्व की उम्र वाले बच्चे जिज्ञासु होते हैं क्योंकि उनके लिए आसपास की चीज़ें नई एवं उत्तेजनात्मक होती हैं। फ्रेड के अनुसार किसी व्यक्ति के जीवन के प्रथम छह वर्ष निर्माणात्मक होते हैं अतः इस उम्र में प्राप्त किए गए अनुभव बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं।

हमने अभी–अभी उन अनौपचारिक तरीकों की चर्चा की है जो माता–पिता अपने बच्चों को शिक्षा देने के लिए अपनाते हैं। सामान्यतः यह एक अप्रत्यक्ष एवं अनौपचारिक प्रक्रिया है। शिक्षा का मतलब है कि ना केवल यह जानना कि क्या पढाया जाए बल्कि यह भी कि परिवार में रोज़मर्रा के अनुभवों से व्यक्ति क्या ग्रहण करता है?

बच्चा परिवार के सदस्यों एवं माता–पिता द्वारा प्रस्तुत किए गए उदाहरणों से बहुत कुछ सीखता है। घर का भौतिक एवं भावनात्मक वातावरण सुव्यवस्थित, शांत एवं निर्मल होना बहुत जरूरी है। जो चीज़ें बच्चे की घर पर होने वाले शिक्षा को सबसे ज्यादा प्रभाव डालती है वे हैं आदेश, व्यवस्था, समय की पाबंदी, सफाई, किताबें, कला, संगीत, प्रार्थना आदि का होना अथवा इनकी अनुपस्थिति। ये तत्व बाद की पारिवारिक जिन्दगी को बनाने में बहुत प्रभावशाली है।

करके सीखना वाला तरीका भी पारिवारिक जीवन की शिक्षा के समय अपनाया जाना चाहिए। बच्चे को घर पर होने वाले कार्य कलापों जैसे कार्य, मनोरंजन, सामाजिक एवं धार्मिक कार्यकलाप आदि के दौरान बच्चों को इनमें हिस्सा लेने का पर्याप्त अवसर दिया जाना चाहिए। परिवार में दिन–प्रतिदिन होने वाले अनुभवों से बच्चा चरित्र, बुद्धिमता, भावनात्मक एवं शारीरिक परिपक्वता, धार्मिक एवं नैतिक मूल्य आदि धीरे–धीरे अपने अन्दर समेटता है।

क्या पारिवारिक जीवन शिक्षा औपचारिक होनी चाहिए?

शिक्षा के अनौपचारिक और अप्रत्यक्ष पद्धतियों के अलावा, माता–पिता को स्कूल पूर्व उम्र के बच्चों द्वारा उठाए गए सवालों का जवाब देने के लिए तैयार रहना चाहिए। माता–पिता को उसका न केवल उत्तर देना है बल्कि सावधान भी रहना है। उलझन भरे प्रश्न पूछने के लिए डाँटना नहीं चाहिए। उत्तर देने के लिए परीकथाओं का आश्रय भी नहीं लेना चाहिए। उनकी उम्र को देखते हुए बुद्धिमानीपूर्ण उत्तर देने चाहिए साथ ही युक्ति संगत उदाहरण भी। अच्छा होगा कि वैज्ञानिक शब्दों का इस्तेमाल किया जाए।

लेकिन दुर्भाग्य है कि भारतीय भाषाओं में सही वैज्ञानिक शब्दावली नहीं है। जवाब देने से पहले बच्चे का पूर्वज्ञान भी ध्यान में रखना चाहिए। माता–पिता को अच्छा श्रोता भी बनना चाहिए। स्पष्ट, ईमानदार और अविचल बने रहना चाहिए तथा झूठी सूचनाओं का सहारा कदापि न लें। यदि माता–पिता उत्तर देने के लिए इन्कार करते हैं तो बच्चा भविष्य में प्रश्न नहीं पूछेगा।

स्कूल जाने की उम्र (6 – 9 वर्ष)

स्कूल नहीं जाने वाला बच्चा किस प्रकार से भिन्न होता है? अब बच्चा लिंगीय भूमिका से परिचित हो जाता है। इस उम्र में उचित भूमिका का प्रतिरूप होना जरूरी है। जो सबसे प्रमुख बात बच्चा इस उम्र में ग्रहण करता है वह है कि माता–पिता किस प्रकार कार्य करते है। माता–पिता के एक दूसरे के प्रति किए गए कार्य, व्यवहार एवं दायित्वों की ओर बच्चों की दृष्टि रहती है। यदि पिता–माता के कार्यों को हेय दृष्टि से देखता है अथवा स्वयं को मुखिया एवं भरण पोषणकर्त्ता समझता है तो बाद में बच्चे भी ऐसा ही दृष्टिकोण जी करते हैं।

माता का एक औरत, एक पत्नी और एक माता के रूप में दृष्टिकोण उसका स्त्री होते स्वीकारना, और पिता का एक पुरुष का व्यवहार, उसकी दृढ़ इच्छाशक्ति उसकी उद्देश्य पूर्ण करने की भावना ये सब प्रमुख तत्व बच्चे के व्यक्तित्व को निखारते हैं। विनम्रता और गर्माहट तथा विशेष लगाव माता–पिता के आपसी

रिश्तों का स्नेह ये सब बच्चे के लिए अपने अनुभव हैं। बच्चा इन सबसे यह जानता है कि स्नेह एक इच्छित, महत्त्वपूर्ण और स्वागत योग्य भावना है। जब वह जीवन के तथ्यों को बड़े होकर जान पाते हैं वे याद रखते हैं कि यह भी प्यार की एक अभिव्यक्ति है।

बच्चों द्वारा पूछे गए प्रश्नों का क्या करें?

इस उम्र के दौरान बच्चे सेक्स और पारिवारिक जीवन के बारे में अनेक प्रकार के प्रश्न पूछते हैं। कभी भी यह मानकर न चलें कि उन्हें पता है। यही उचित समय है जब उनको रजोधर्म और तरुणाई के बारे में बताया जा सकता है। सेक्स शिक्षा देते समय इस बात को अवश्य याद रखना चाहिए कि यह 'अति अल्प और अति देरी से' अथवा 'जल्दी से एवं बहुत कुछ' दोनों में से कोई भी नहीं हो। उनके प्रश्नों का उत्तर देते समय उलझन महसूस ना करें। इस अवस्था में उनको प्रश्नों का उत्तर उनके पहले के ज्ञान में वृद्धि करेगा। यह उनकी उस समय के लिए प्रारंभिक तैयारी है जब बच्चा सेक्स के बारे में सोचने लगता है।

बच्चे में प्रोत्साहन एवं विश्वास पैदा करना चाहिए। कोई चीज़ दोहराने से दुखी नहीं होना चाहिए। यह अन्य प्रश्नों के लिए अवसर प्रदान करता है। उसको मित्रों के संग खेलने की और सामाजिक बनने की इजाजत दी जानी चाहिए। लेकिन इस उम्र के बच्चों के लिए माता पिता को अपनी आँखें और कान खुले रखने चाहिए।

जन माध्यमों की क्या भूमिका है?

जन माध्यम जैसे टी.वी., रेडियो, सिनेमा, पुस्तकें आदि इस उम्र के बच्चों के सेक्स और परिवार सम्बन्धी जानकारी में वृद्धि करते हैं। माध्यम चाहे कोई सा भी हो, मूल्य और जानकारी जो इस समय वे प्राप्त करते हैं, उनकी जिन्दगी के आधार का एक हिस्सा होगी।

स्कूल क्या कर सकते हैं?

स्कूलों में, शिक्षा का तरीका एवं पाठ्यक्रम बच्चे की समझ और उसकी परिपक्वता के स्तर के अनुरूप होना चाहिए। सेक्स की जानकारी, जोकि पारिवारिक शिक्षा का ही एक अंग है, बॉयोलाजी के पाठों के द्वारा सिखाई जा सकती है। नर और मादा का विचार भी सिखाया जा सकता है, पौधों और जानवरों की उत्पत्ति के द्वारा एवं अंकुरण के द्वारा भी बताया जा सकता है। मनुष्यों की सन्तानोत्पत्ति के बारे में इस उम्र में सिखाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

किशोरपूर्व अवस्था

इस अवस्था का क्या महत्त्व है? पारिवारिक जीवन के बारे में आधारमूलक ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह अवस्था सबसे उपयुक्त है। बढ़ता हुआ बच्चा ज्यादा जिज्ञासु होता है। वह अपने घर का, स्कूल का और आसपास का सामाजिक तानाबाना में जो भी घटित होता है बड़े ध्यान से देखता है। वह जो देखता और समझता है उसका मतलब निकालने की कोशिश भी करता है। अतः घर और स्कूल दोनों को उसको आस–पास के वातावरण को समझने का पर्याप्त अनुभव में सहयोग देना चाहिए।

जब बच्चा बड़ा होता है तो उसे उसके नर या मादा होने का सहज रूप में लेने में सहायता अवश्य करें। बचपन से वयस्क होने तक की लम्बी अवधि में बच्चे को जीवन में किसी भी समय कई तरह की समस्याओं का समाना करना पड़ सकता है। घर के अन्दर का प्रेम बच्चे के स्वस्थ विकास के लिए अति आवश्यक है। घर ही वह स्थान है जहाँ बच्चे की पूछ होती है, सराहना होती है और उसका होना सबको भला लगता है लेकिन प्यार को व्यक्त भी करना चाहिए। माता–पिता का आपसी प्रेम एवं माता–पिता और बच्चों के बीच प्रेम पारिवारिक जीवन की शिक्षा का सार तत्व है। अपने माता–पिता एवं अन्य पारिवारिक सदस्यों का प्यार पाकर

ही बच्चा विवाह के बाद के जीवन में अपने जीवन साथी और बच्चों को प्यार दे पाता है।

अच्छा पिता और माता बनने के लिए क्या करें?

मातृत्व और पितृत्व के प्रति बच्चे के दृष्टिकोण को बनाने में माता–पिता का प्रभाव ही सबसे प्रमुख कारक है। अपने बच्चों के बड़े होने के दौरान वर्षों में जो उदाहरण माता–पिता बच्चों के सामने रखते हैं वहीं यह सब जानने का पैमाना होता है कि बच्चा सुखी पारिवारिक जीवन जीएगा या दुखी। बच्चों को माता–पिता के बीच के पूर्व एवं समर्पित सम्बन्ध को अवश्य जानना चाहिए। समझदार माता–पिता बनने के लिए माता–पिता को अपने आपको भी ढालना पड़ेगा। यदि माता–पिता अपने बच्चों के लिए सब कुछ करना चाहते हैं तो उन्हें स्वयं से शुरुआत करनी चाहिए।

संगी साथी किशोरपूर्व अवस्था को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?

इस उम्र पर संगी साथियों का प्रभाव कुछ ज्यादा होता है। माता–पिता को अपने बच्चों के दोस्तों के बारे में जरूर पता रहना चाहिए। यदि लगे कि दोस्तों का रवैया उनके अपने विचारों से मेल नहीं खाता तो इस बारे में अपने बच्चों से बात करनी चाहिए। जो बच्चे अच्छे नैतिक मूल्य रखते हैं, अपने बच्चों को उनकी ओर उन्मुख करने के लिए प्रयास करना चाहिए। विपरीत सेक्स के प्रति आकर्षित होने में कोई दोष नहीं है बशर्ते कि कोई सेक्स से सम्बन्धित दुराचरण न हो।

क्या संगी साथियों से मेल–जोल की सीमा निर्धारित होनी चाहिए?

माता–पिता को अपने बच्चों के लिए सीमाएँ निर्धारण करनी चाहिए एवं उनका मार्गदर्शन करना चाहिए। उनके साथ सामान्य एवं प्यार भरे तरीके से बात करनी चाहिए। बच्चों से इन बातों की चर्चा के समय दृढ़ और साहसी रहना चाहिए। सेक्स संभाषण से बचना चाहिए। संवाद हल्का एवं दोस्ताना लेकिन ईमानदारी पूर्ण

होना चाहिए। बच्चे को उसके स्वयं के सेक्स के बारे में एवं विपरीत सेक्स के बारे में सही जानकारी देनी चाहिए। विपरीत सेक्स का सम्मान करने का भाव भी सिखाना चाहिए।

जन माध्यमों का क्या प्रभाव है?

वातावरण जिसमें आज के युग का बच्चा बढ़ रहा है, मूल रूप से बहुत बदल गया है। विभिन्न प्रचार माध्यमों द्वारा सेक्स संबंधी बातों का योजनाबद्ध ढंग से प्रचार किया जाता है। रहने का वातावरण सेक्स जागृति से परिपूर्ण होता है। कोई भी इसके प्रभाव से बच नहीं पाया है। बलात्कार, गर्भपात, विवाह पूर्व गर्भधारण, एस. टी.डी., समलैंगिकता आदि विषय खुले आम प्रसार माध्यमों में दृष्टिगोचर होते हैं। यह समय बच्चों को इस बारे में सतर्क करने के लिए एकदम उपयुक्त है। घर पर ही पिता अपने लड़के को एवं माता अपनी पुत्री को जिन्दगी के तथ्य समझाने की जिम्मेदारी ले सकते हैं। इस कार्य में घर के बड़े बुर्जुग काफी सहायक सिद्ध होते हैं।'

स्कूल को क्या करना चाहिए?

माता–पिता के पश्चात् स्कूल को किशोरवय पूर्व बच्चों को पारिवारिक जीवन की सीख ही की जिम्मेदारी लेनी चाहिए। स्कूल यह शिक्षा माता–पिता की अपेक्षा ज्यादा विस्तार एत व्यवस्थित तरीके से दे सकता है। तरुणों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उपय पाठ्यक्रम तैयार किए जाने चाहिए।

स्कूल में इस उम्र के बच्चों को किस प्रकार की सेक्स शिक्षा दी जानी चाहिए?

इस उम्र के बच्चों को सेक्स शिक्षा देने की वास्तव में आवश्यकता है। इसमें सही वैज्ञानिक जानकारी होनी चाहिए जो किशोरों की समस्याओं का समाधान करे। तरुणाई से पहले भावनात्मक प्रतिक्रियाओं के बिना भी सेक्स शिक्षा देना आसान होता है। यह शिक्षा लड़कों और लड़कियों को अलग–अलग दी जानी चाहिए।

सामान्य सफाई, शारीरिक रचना. एवं शारीरिक शिक्षा एवं व्यक्तित्व निखार के कार्यक्रम आदि की कक्षाएँ इस उद्देश्य हेतु लगाई जानी चाहिए। स्कूल पुस्तकालयों में सेक्स से सम्बन्धित मानक साहित्य अवश्य उपलब्ध होना चाहिए। प्रसार माध्यमों का सकारात्मक रुख का भी प्रयोग करना चाहिए।

किशोरवय

इस अवस्था का खास महत्त्व क्या है? यह अवस्था बढ़ रहे युवाओं पर व्यापक असर डालती है। यह बचपन से निकलकर पूर्ण वयस्क होने तक एक पुल की तरह है जो व्यक्तित्व विकास का समय है। अन्य किसी संक्रमण काल की तरह ये संक्रमण काल भी कई तरह की सामंजस्य समस्याएँ खड़ी करता है। उनकी आवश्यकताएँ, रुचियाँ एवं समस्याएँ बचपन की समस्याओं या वयस्कों की समस्याओं से एकदम भिन्न हैं।

किशोरों की मदद कौन कर सकता है?

माता–पिता, शिक्षक एवं अन्य बड़े लोगों को किशोरों की बढ़ती उम्र की समस्याओं को पहचानना चाहिए।

माता–पिता किशोर बच्चों को भविष्यकारी परिवार के लिए तैयार करने में अहम् भूमिका निभाते हैं। घर में रह कर किशोर सीखता है कि एक औरत होने या मर्द होने का मतलब क्या है। पारिवारिक अनुभव के आधार पर बच्चों पुरुष, पति और पिता शब्दों का अर्थ अपने जेहन में तलाशता है। लड़की भी एक स्त्री, पत्नी और माता की भूमिका को सीखती है। माता–पिता को भी यह मानना पड़ता है कि बच्चे, बड़े होने की ओर अग्रसर हैं। माता–पिता को अवश्य ही अपना सुरक्षात्मक कवच को ढील देनी चाहिए तथा किशोर बच्चों की अपने प्रति निर्भरता को बनाये रखना। ये बात इनको परिपक्व होने में बाधा डालती है।

आपको आश्चर्य हो सकता है कि किशोरों की रुचि घर से क्यों हटने लगती है? इसका एकमात्र कारण यही है कि अभी तक उसकी जो भी ज़रूरतें थी वे सभी घर पूरी हो जाती थी। लेकिन किशोरवय के आने पर सेक्स रूपी आवश्यकताएँ उभरती है और उनकी रुचि घर से बाहर के वातावरण में तब्दील हो जाती है। जीवन उसको पैतृक घर के बजाय अपने खुद के संजोये हुए घर की तरफ धकेलता है। वह अपनी पसन्द के जीवन साथी के साथ अपना एक अलग घर स्थापित करने की सोचता है। माता–पिता को इस बात से चिन्तित नहीं होना चाहिए। हाँ, माता–पिता को उसको अपना जीवन साथी चुनने में और अपना परिवार स्थापित करने में मदद एवं मार्ग दर्शन अवश्य करना चाहिए।

क्या किशोरों को गलत करने और कोशिश करते रहने की विधि से सीखना चाहिए?

कुछ माता–पिता सोचते हैं कि उनको अपने जवान लड़के लड़की की समस्याओं में दखल देने की ज़रूरत नहीं है। यह सही नहीं है। निःसंदेह बड़ों की भूमिका उनको प्रत्येक कष्ट से बचाने या प्रत्येक विपदा से रक्षा करने की नहीं होती। माता–पिता को उनको खुद के लिए कार्य करने की अनुमति देनी चाहिए। तभी वे एक जिम्मेवार वयस्क बनेंगे। माता–पिता की भूमिका केवल उनको सहायता करने एवं मार्ग दर्शक की होनी चाहिए जब उनके सम्मुख वास्तव में कोई समस्या आ जाती है। उनको अपने बच्चे के एक नौजवान होने पर खुश होना चाहिए।

किशोरों को अपने आप में आत्म विश्वास और निर्भरता तथा जैसे वे स्वयं है उसको उसी रूप में स्वीकारने की क्षमता के लिए माता–पिता से प्यार, आश्वासन, पहचान और प्रशंसा की उम्मीद होती है। घर में वह स्त्री की कोमलता एवं पुरुष की मजबूती एवं दो विपरीत लिंग किस प्रकार एक दूसरे के पूरक है इस बात को अनुभव करता है। यह कोई औपचारिक शिक्षा नहीं है लेकिन वह परिवार में रहने के कारण धीरे–धीरे द्विलिंगीय संसार में रहने की दार्शनिकता समझ लेता है। माता–पिता का व्यवहार उसकी शादी में एवं परिवार के प्रति सम्बन्धों में प्रभाव

छोड़ता है। इससे वे आत्मनिर्भर और आत्मविश्वासी स्त्री या पुरुष अथवा पति पत्नी बन सकते हैं।

स्कूल किशोरों की सहायता किस प्रकार से कर सकता है?

इस अवस्था में स्कूल पारिवारिक जीवन की शिक्षा के सुनियोजित कार्यक्रम दे सकता है। शिक्षाविदों और अधिकारियों को चाहिए कि वे ऐसा पाठ्यक्रम तैयार करें जिसमें पारिवारिक जीवन की आवश्यक जानकारियाँ और सुलझे हुए अनुभवों का समावेश हो। इससे पारिवारिक जीवन की शिक्षा की तैयारी और प्रशिक्षण की औपचारिक पहचान बन जायगी।

पारिवारिक जीवन में बुद्धिमतापूर्ण निर्णय करने हेतु बच्चों को सही जानकारी मिलनी चाहिए। उन्हें स्वयं भी उचित व्यवहार अपनाना चाहिए। ज्ञान से ही उनमें सुरक्षा की भावना पनपती है। जो बदले में उनको एक जिम्मेवार एवं रचनात्मक तरीके से रहने के लिए अपनी प्रतिभा को विकसित करने में मदद देती है।

सेक्स शिक्षा इस अवस्था में बहुत महत्त्वपूर्ण है। सेक्स इतिहास अथवा अंकगणित की तरह एक विषय नहीं है। अतः यह युक्त संगत नहीं है कि यह जैसा है उसको वैसा ही पेश किया जाए। यह अति आवश्यक है कि युवा पीढ़ी को प्यार और सेक्स के बारे में उनके प्रश्नों का सही–सही और ईमानदार उत्तर मिलें। लेकिन यह एकदम सामान्य तरीके से दी जानी चाहिए।

क्या पढ़ाया जाना चाहिए?

इस अवस्था में मानव प्रजनन प्रणाली के बारे में पढ़ाया जा सकता है। उनको इस बात से परिचित कराया जाना चाहिए कि सेक्स के लिए परिपक्वता, गर्भधारण क्रिया, बच्चे का जन्म लेना, अनुचित यौन सम्बन्ध, एस.टी.डी. और एड्स आदि क्या है? लड़के एवं लड़कियों के मध्य स्वस्थ दोस्ताना सम्बन्ध रहने चाहिए। विषय–वस्तु क्रियात्मक होनी चाहिए अर्थात् उन समस्याओं को सुलझाने वाली

होनी चाहिए जो युवा पीढ़ी के सामने विवाह से पहले अथवा विवाह के बाद के शुरुआती दिनों में विपरीत सेक्स के साथ समन्वय के दौरान आगे आती है। लेकिन दुर्भाग्य से हमारे यहाँ युवाओं को पर्याप्त मार्गदर्शन देने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नहीं है। फिर भी इस पाठ्यक्रम का खण्ड 3 युवा पीढ़ी की शरीर क्रिया विज्ञान सम्बन्धी अधिकांश मामलों पर प्रकाश डालता है।

पारिवारिक जीवन की शिक्षा के अन्तर्गत युवाओं को अवसर मिलना चाहिए कि वे चाल नर्सरी कक्षा के स्कूलों में जाकर अध्ययन करें कि छोटे बच्चों की देखभाल कैसे हो रही है एवं बच्चों की शिक्षा एवं मातृत्व–पितृत्व के बारे में अवलोकन करें।

पारिवारिक जीवन की शिक्षा से सम्बन्धित परिचर्चा एवं विचार गोष्ठियों का भी आयोजन होना चाहिए। जिम्मेवार जीवन साथी, मातृत्व–पितृत्व, परिवार नियोजन, पारिवारिक सम्बन्ध, स्त्री और पुरुष की शारीरिक रचना, जीवन साथी का चुनाव कैसे किया जाए आदि विषय इन चर्चाओं और गोष्ठियों में रखे जाने चाहिए। इस कार्य में डाक्टरों, चिकित्सा वैज्ञानिकों एवं पारिवारिक जीवन के बारे में पर्याप्त ज्ञान व अनुभव रखने वाले विशेषज्ञों की सेवाएँ भी सहायता के लिए ली जानी चाहिए। युवाओं को भरोसेमन्द सूत्रों की ही उपलब्धि की जानी चाहिए। शिक्षाविद् को भी अपने विषय का ज्ञाता होना चाहिए।

युवाओं की निजी समस्याओं और सन्देहों के निवारण हेतु स्कूलों में परामर्श सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए। विवाह से पहले के पाठ्यक्रम की शिक्षा का आयोजन करना चाहिए। इसके लिए जन माध्यमों का इस्तेमाल किया जा सकता है। पुस्तकालयों में पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित अच्छी पुस्तकों का संग्रह किया जाना चाहिए।

क्या युवाओं की पारिवारिक जीवन शिक्षा देने हेतु और कोई संस्था है?

सामाजिक और धार्मिक संगठन युवाओं को पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने में एक अहम भूमिका निभा सकते हैं। पिछले कुछ समय से सामाजिक एवं धार्मिक

संगठन युवाओं के लिए जीवन से जुड़े कार्यक्रमों का आयोजन कर रहे हैं। किशोर, नव विवाहित दम्पत्ति एवं प्रौढ़ विवाहित दम्पत्ति ऐसी एजेन्सियों के पास मार्ग दर्शन के लिए पहुंचते हैं। पारिवारिक अदालतें एवं परिवार परामर्श केन्द्र भी पारिवारिक मामलों में युवाओं और युवा दम्पत्तियों की सहायता करके बड़ा अच्छा कार्य करते हैं। कुछ समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ लोगों की सामान्य सेक्स सम्बन्धी चिन्ताओं से जुड़े मसले नियंत्रित रूप से अपने अंकों में देते हैं।

बोध प्रश्न 4

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) पारिवारिक जीवन शिक्षा देने के लिए घरों में कौन–सी पद्धतियाँ अपनाई जाती हैं?

क) स्कूल पूर्व की स्थिति?

.....

.....

.....

ख) किशोर अवस्था?

.....

.....

.....

4.6 सारांश

इस इकाई में आपने पारिवारिक जीवन शिक्षा देने में विभिन्न निकायों जैसे घर, स्कूल एवं धर्म के बारे में पढ़ा है। ऐसी शिक्षा के लिए घर ही सर्वोत्तम स्थान है। पारिवारिक जीवन के बारे में बचपन में जो प्रारंभिक दृष्टिकोण बनता है वहीं बाद के दृष्टिकोण को भी प्रभावित करता है। माता–पिता ही इस शिक्षा के लिए प्रथम एवं साथ ही सर्वोत्तम शिक्षक भी हैं। बच्चों के चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व निर्माण में घर की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण होती है। बच्चों को पारिवारिक जीवन के लिए तैयार करना माता–पिता की नैतिक जिम्मेदवारी होती है। सेक्स की शिक्षा प्रदान करना भी घर की जिम्मेदारियों में से एक है।

अपने बच्चों को पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने के लिए बहत से माता–पिता के पास तकनीकी ज्ञान एवं क्षमता नहीं होती। ऐसे बच्चों के लिए पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने में स्कूल महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। स्कूल में शिक्षक ही इस शिक्षा के लिए प्रमुख पात्र होता है। शिक्षकों में क्षमता भी होती है और बहुत से बच्चे शिक्षक पर ज्यादा भरोसा करते हैं। संगी साथी भी युवाओं को साजिक ढाँचा और मान्यताओं के अनुरूप तैयार होने में मदद करते हैं। युवा भी संगी साथियों में ज्यादा सहज और खुलापन महसूस करता है।

धर्म भी युवाओं को विवाह एवं परिवार के लिए तैयार करने में अहम भूमिका निभाता है। सफल पारिवारिक जीवन के लिए धार्मिक पृष्ठभूमि एवं धार्मिक मूल्यों का होना अति आवश्यकता है।

4.7 शब्दावली

वंचित होना : यह विशिष्ट शब्द है जिसमें व्यक्ति जीवन का सुख नहीं भोग सकता है या वह समाज के लाभों से वंचित रहता है।

बहिष्कृत करना : किसी व्यक्ति को समूह या समाज से बहिष्कृत कर देना।

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अल्फोंस । एच, क्लेमेंस, विवाह और परिवार, अप्रैटिस–हॉल–आईएनसी–एंगलवुडय एन.जे ऐन एंड जॉन मर्फी, सेक्स एजुकेशन एंड सक्सेसफुल पेरेंटिंग, पॉलीन बुक्स, सेंटपॉल प्रेस ट्रेनिंग स्कूलय मुंबई।

डी'ओजा, एंटनी, ए। यौन शिक्षा और व्यक्तित्व विकास, उषा प्रकाशन; नई दिल्ली।

ग्रुग्नी, डॉ. एंटनी, सेक्स एजुकेशन, बेटर योरसेल्फ बुक्स, सेंट पॉल प्रेस; मुंबई।

जी. गिन्नोट, डॉ. हैम, पेरेंट एंड चाइल्ड के बीच, एवन बुक्स, मैकमिलन, प्रकाशन सह; न्यूयॉर्क।

हर्लक, एलिजाबेथ बी., विकासात्मक मनोविज्ञान, टाटा–मैक ग्रे हिल पब्लिशिंग कंपनी; नई दिल्ली।

मस्कारेन्हास, मैरी मिग्नन फैमिली लाइफ एजुकेशन/वैल्यू एजुकेशन, क्रेस्ट – सेवासदन ट्रेनिंग इंस्टीट्यूटय बैंगलोर।

सूर्यकांति, ए., बाल विकास, कविता प्रकाशन, गांधीग्राम।

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) पारिवारिक जीवन के बारे में समझने और शिक्षित करने में घर एक आदर्श स्थान है क्योंकि माता–पिता और बच्चों के बीच वर्षों तक लगातार सम्बन्ध रहता है। यह सम्बन्ध दृष्टिकोण को विकसित करने और जानकारी बढ़ाने

में अति महत्वपूर्ण है। बड़े होने पर कोई व्यक्ति कैसे कार्य करता है यह बहुत कुछ इस बात से प्रभावित होता है कि उनकी बचपन की शिक्षा एवं अनुभव कैसे रहे हैं।

जो बुनियादी दृष्टिकोण प्रारंभिक वर्षों में घर पर विकसित होता है वही बाद के जीवन पर भी व्यापक असर बनाए रखता है। इसलिए परिवार को, बच्चे के भौतिक, भावनात्मक, बौद्धिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए आवश्यक शिक्षा देने की भूमिका की जिम्मेदारी लेना अति आवश्यक है। यह पारिवारिक जीवन की बुनियादी सफलता का आधार भी है।

शिक्षक के रूप में माता–पिता

बच्चों के लिए घर स्कूलों का भी स्कूल है और माता–पिता ही उनके सर्वश्रेष्ठ शिक्षक होते हैं। माता–पिता के प्रति बच्चे का लगाव प्रारम्भिक वर्षों में बच्चे के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। साथ ही यह कहा जा सकता है कि किसी वयस्क व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके घर के बचपन के अनुभवों से अवश्य प्रभावित रहता है।

जॉन लॉक के शब्दों में बच्चे का दिमाग 'तबूला रासा' (लेटिन भाषा में इसका अर्थ साफ स्लेट होता है) की तरह है। माता–पिता इस साफ स्लेट पर कुछ भी लिख सकते हैं। परिवार के बारे में संपूर्ण ज्ञान बच्चे की शुरुआती दिनों के अनुभवों से मिलता है। एक बच्चे को जिस प्रशिक्षण की जरूरत होती है, उसे वे सब घर से मिलते हैं तथा उसे वे जीवन के सभी उतार चढाव सीखने को मिल जाते हैं। अतः घर ही सबसे प्रथम सामाजिक निकाय है।

परिवार में प्रचलित मानदण्ड और नैतिक मूल्य बाद के जीवन के लिए मार्गदर्शक का कार्य करते हैं। अभिभावकों के वे उदाहरण, जैसे सामाजिक

न्यायप्रियता का गुण, सभी वर्गों और जाति के प्रति उदार रवैया, त्याग और दूसरों की सहायता करना आदि गुण बच्चे को अपना स्वयं का पारिवारिक जीवन बनाने में सहायता करते हैं। घर पर ही भावनात्मक, वैयक्तिक एवं सामाजिक व्यवहार की अभिव्यक्ति के अवसर भी मिलते हैं।

चरित्र निर्माण में घर की भूमिका

चरित्र पारिवारिक जीवन को किस प्रकार प्रभावित करता है? किसी भी परिवार की सफलता दम्पत्ति के चरित्र पर निर्भर करती है। घर के सदस्यों के चरित्र निर्माण में घर की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। सफलता या असफलता, अच्छा या खराब, सामंजस्य और खुशी अथवा शोक यह सब बुद्धिमता की अपेक्षा चरित्र से ज्यादा प्रभावित और निर्भर होते हैं। चरित्र मनुष्य को कुछ निश्चित सिद्धान्तों पर चलने को प्रेरित करता है। चरित्रवान मनुष्य पर भरोसा और विश्वास किया जा सकता है। अतः घर पर ही चरित्र का प्रशिक्षण एवं शिक्षा पूरे परिवार के लिए अनिवार्य है। आधुनिक युग में जिन्दगी के प्रत्येक हिस्से में अच्छे नेतृत्व का अभाव महसूस किया जाता है। इसका मुख्य कारण घर की ही गलती है। यह चरित्र निर्माण के दौरान अच्छे घरेलू वातावरण की अपर्याप्ता का प्रतिफल होता है।

माता पिता की यह जिम्मेदारी होती हैं, वे बच्चों को सर्वत्र स्वीकार्य लड़के–लड़की बनने, या सक्षम किशोर तैयार करने, अथवा आपसी सहभागिता एवं समन्वयकारी पति–पत्नी अथवा अच्छे माता–पिता बनाने के लिए प्रशिक्षण प्रदान करें। अच्छे घरों से ही अच्छे लोगों की रचना होती है। यदि माता–पिता अच्छा व्यवस्थित जीवन जी रहे हैं तो बच्चे भी वैसा ही वैवाहिक जीवन, घर और परिवार बना सकते हैं। बच्चा जो प्यार, सुरक्षा एवं लगाव पाता है और खुशहाल परिवार में अच्छी देखभाल प्राप्त करता है,

उसकी एक सचेत एवं खुशहाल पारिवारिक जीवन की ओर अच्छी शुरुआत होती है।

बोध प्रश्न 2

1) परिवार जीवन शिक्षा देने में शिक्षक की भूमिका

स्कूल में बच्चों को पारिवारिक जीवन की शिक्षा देने के लिए शिक्षक ही मुख्य व्यक्ति होता है। शिक्षक स्वयं सक्षम, मेधावी और विवेकपूर्ण होना चाहिए। स्कूल का कोई भी शिक्षक पारिवारिक शिक्षा दे सकता है। स्कूल में पढ़ाए जाने वाले प्रत्येक विषय और वहाँ के कार्यकलाप जीवन को बेहतर तरीके से समझने में योगदान दे सकते हैं। स्कूल में प्राप्त किए अनुभव आदर्शों और मूल्यों के निर्माण में सहयोग देते हैं। बदले में इससे बच्चे के चरित्र निर्माण में मदद मिलती है। यह शिक्षा वैयक्तिक स्तर एवं सामाजिक स्तर पर समन्वय बैठाने में भी योगदान देती है।

जैसे कि पहले कहा गया है कि सेक्स शिक्षा भी पारिवारिक जीवन शिक्षा का एक अहम पहलू है। शिक्षक ये शिक्षा बिना किसी झिझक के दे सकता है। शिक्षक इस गूढ़तम व्यक्तिगत रहस्य को भी प्रभावशाली तरीके से वर्णन कर सकता है। ज्यादा से ज्यादा छात्र शिक्षक के पास अपनी निजी एवं सामान्य समस्याएँ लेकर आते हैं इसके लिए वे माता–पिता के अपेक्षा शिक्षक को वरीयता देते हैं। उनका विश्वास है कि शिक्षक ज्यादा जानकार और ज्यादा व्यवस्थित होते हैं।

स्वयं के बारे में ज्यादा बेहतर जानने के लिए शिक्षक बच्चों की मदद करते हैं ताकि भविष्य में वे ज्यादा व्यवस्थित हो सकें। शिक्षक का कार्य होता है जानकारी देना, संदेहों को दूर करना और मार्ग दर्शन करना – संक्षेप में एक परामर्शदाता। अज्ञानता की अपेक्षा जानकारी से परिपूर्ण युवा पीढ़ी आगे

बढ़ने में आने वाली चुनौतियों का सामना सेक्स एवं वैवाहिक जीवन की बातों को बेहतर समझ के द्वारा अधिक प्रभावी ढंग से कर सकेगी।

बोध प्रश्न 3

1) अलग–अलग धर्मों में पारिवारिक संस्कृति अलग–अलग होती है। एक सफल पारिवारिक जीवन जीने के लिए मजबूत धार्मिक आधार होना बहुत आवश्यक है। आजकल युवाओं में एक फैशन बन गया है कि भगवान को अस्वीकारना एवं भौतिक संसार को महत्व देना। धर्म निरपेक्षता का युवा पीढ़ी ने गलत अर्थ निकाला है। श्री. सी. राजगोपालाचारी के अनुसार धर्मनिरपेक्षता का तात्पर्य यह नहीं है कि लड़को और लड़कियों को अनुशासन के लाभों से वंचित किया जाए जिसे अलग–अलग धर्मों के परिवारों ने खुले रूप से स्वीकार किए हैं।

अभी तक धर्मों के द्वारा पारिवारिक जीवन की विधिवत् शिक्षा के लिए कोई गंभीर सोच विचार नहीं किया गया था। लेकिन वैवाहिक संबंधों की टूटन का बढ़ता प्रतिशत और पारिवारिक जीवन में समस्याओं का बढ़ना, इनके कारण प्रायः सभी धर्म इसको गंभीरता से ले रहे हैं। कई धर्म, खासतौर से ईसाई, इन्होंने पारिवारिक जीवन की शिक्षा में कई सकारात्मक कदम उठाएँ हैं। पारिवारिक जीवन में अनुकूलन के प्रयास किए जा रहे हैं। पारिवारिक सलाक सुविधाएँ आयोजित की जाती हैं। चर्च को केन्द्रित कर चलाये जा रहे कार्यक्रम व्यापक रूप से स्वीकार्य हो रहे हैं और गति पकड़ रहे हैं। बहुत से दम्पत्ति सहायता एवं मार्गदर्शन हेतु इन केन्द्रों पर आते हैं।

अपने सदस्यों के लिए पारिवारिक जीवन की शिक्षा प्रदान करना प्रत्येक धर्म की अपनी जिम्मेवारी है। युवाओं को विवाह एवं पारिवारिक जीवन के बारे में जानने का अवसर इसकी शुरुआत करने से पहले ही उपलब्ध होना

चाहिए। धार्मिक मूल्य किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को और भी अधिक निखार सकते हैं।

बोध प्रश्न 4

1) यह वह अवस्था है जहाँ पारिवारिक जीवन की शिक्षा का दायित्व पूर्ण रूप से परिवार का होता है। स्कूल इस प्रकरण में कहीं भी नहीं आता। प्राथमिक रवैया जो प्रारंभिक वर्षों में घर में स्थापित होता है, बाद के दृष्टिकोण पर भी व्यापक असर रखता है। बच्चा प्रारंभिक जीवन का अधिक समय माता–पिता एवं अन्य पारिवारिक सदस्यों के बीच व्यतीत करता है। अतः पारिवारिक जीवन की शिक्षा की शुरुआत घर से ही होनी चाहिए। बाल्यकाल में माता को आगे आना पड़ता है। व्यक्तित्व का यह मूलभूत नमूना बाल्यकाल में ही बनने लगता है। यह कहा जाता है कि सेक्स शिक्षा भी माता–पिता द्वारा बच्चों को युवा होने पर दी जाती है जबकि वह ऐसा कई साल पहले शुरू कर सकते हैं।

बढ़ती लड़की के लिए, उसकी माँ आदर्श रूप होती है। छोटी लड़की कई तरीकों से अपनी माता को पहचानने की कोशिश करेगी। लेकिन लड़की को पिता की आवाज, स्पर्श और गर्माहट को भी महसूस करना चाहिए जो कि उसकी माता से एकदम अलग है। पिता की शक्ति, उनका विश्वास और लड़की के प्रति उनका व्यवहार ये सब भी उसके नन्हें दिमाग में एक अच्छे मनुष्य के विचार की छाप छोड़ते हैं। यदि वह इस तरह का अवसर चूकती है तो उसके लिए बाद में लड़कों और पुरुषों को समझना और उनके प्रति प्रशंसा का भाव मन में लाना बड़ा मुश्किल हो जाएगा। एक पुरुष का, अपने पिता के बारे में उसका अनुभव एक सुखद राह की भांति, अपने पति के साथ सामंजस्य करने और उसको समझने में उसके सामने होगा जब उसका विवाह हो जाएगा।

बढ़ता लड़का भी अपने माता और पिता से बहुत कुछ सीखता है। माता की चिन्ता और स्नेह और छोटी छोटी सुविधाओं का ख्याल रखना, कोमलता, गर्माहट और सहनशीलता ये सब उसको एक अच्छी औरत की, उसकी पत्नी की पहचान कराते हैं। पिता का व्यवहार यह सिद्ध करता है कि एक पुरुष दृढ़ निश्चयी एवं शक्तिशाली होते हुए भी दयालु और विचारवान हो सकता है।

घर के किसी विशेष कार्य की जिम्मेवारी को लेना और पूर्ण करना कोई आसान कार्य नहीं है। लेकिन माता–पिता का व्यवहार और भावना जिसके अन्तर्गत घर की जिम्मेवारियाँ पूरी की जाती है, ये बच्चे के दृष्टिकोण का, स्त्री अथवा पुरुष के प्रति, आकार निश्चित करती हैं जो आगे की जिन्दगी में लाभकारी सिद्ध होती है।

स्कूल पूर्व की उम्र वाले बच्चे जिज्ञासु होते हैं क्योंकि उनके लिए आसपास की चीजें नई एवं उत्तेजनात्मक होती हैं। फ्रेड के अनुसार किसी व्यक्ति के जीवन के प्रथम छह वर्ष निर्माणात्मक होते हैं अतः इस उम्र में प्राप्त किए गए अनुभव बहुत महत्वपूर्ण होते हैं।

हमने अभी–अभी उन अनौपचारिक तरीकों की चर्चा की है जो माता–पिता अपने बच्चों को शिक्षा देने के लिए अपनाते हैं। सामान्यतः यह एक अप्रत्यक्ष एवं अनौपचारिक प्रक्रिया है। शिक्षा का मतलब है कि ना केवल यह जानना कि क्या पढ़ाया जाए बल्कि यह भी कि परिवार में रोजमर्रा के अनुभवों से व्यक्ति क्या ग्रहण करता है?

बच्चा परिवार के सदस्यों एवं माता–पिता द्वारा प्रस्तुत किए गए उदाहरणों से बहुत कुछ सीखता है। घर का भौतिक एवं भावनात्मक वातावरण सुव्यवस्थित, शांत एवं निर्मल होना बहुत जरूरी है। जो चीजें बच्चे की घर

पर होने वाले शिक्षा को सबसे ज्यादा प्रभाव डालती है वे हैं आदेश, व्यवस्था समय की पाबंदी, सफाई, किताबें, कला, संगीत, प्रार्थना आदि का होना अथवा इनकी अनुपस्थिति। ये तत्व बाद की पारिवारिक जिन्दगी को बनाने में बहुत प्रभावशाली है।

करके सीखना वाला तरीका भी पारिवारिक जीवन की शिक्षा के समय अपनाया जाना चाहिए। बच्चे को घर पर होने वाले कार्य कलापों जैसे कार्य, मनोरंजन, सामाजिक एवं धार्मिक कार्यकलाप आदि के दौरान बच्चों को इनमें हिस्सा लेने का पर्याप्त अवसर दिया जाना चाहिए। परिवार में दिन–प्रतिदिन होने वाले अनुभवों से बच्चा चरित्र, बुद्धिमता, भावनात्मक एवं शारीरिक परिपक्वता, धार्मिक एवं नैतिक मूल्य आदि धीरे धीरे अपने अन्दर समेटता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 जीवन में नैतिक मूल्यों और व्यक्तित्व को विकास

*प्रो. मैरी मैथ्यू

रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 व्यक्तित्व का स्वरूप, परिभाषा और विकास

5.3 व्यक्तित्व विकास के प्रति सैद्धांतिक दृष्टिकोण

5.4 नैतिक मूल्यों का विकास

5.5 नैतिक विकास के सिद्धांत

5.6 नैतिक विकास पर पर्यावरण का प्रभाव

5.7 सारांश

5.8 शब्दावली

5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप व्यक्तित्व के स्वरूप, उसके विकास और व्यक्तित्व विकास में नैतिक मूल्यों की भूमिका के बारे में पढ़ेंगे। इकाई के पहले भाग में व्यक्तित्व के

* प्रो. मैरी मैथ्यू, संतोष नगर, त्रिवेन्द्रम।

विभिन्न सिद्धांतों की चर्चा की गई है। इकाई के दूसरे भाग में व्यक्ति में नैतिकता और नैतिक मूल्यों के विकास पर विचार किया गया है। व्यक्तित्व और नैतिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों पर भी इस इकाई में चर्चा की गई है।

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप :

- व्यक्तित्व के स्वरूप की चर्चा कर सकेंगे;
- व्यक्तित्व विकास के विभिन्न सिद्धांतों का वर्णन कर सकेंगे;
- नैतिक मूल्यों का अर्थ बता सकेंगे;
- नैतिक विकास के विविध सिद्धांतों को समझ सकेंगे;
- व्यक्तित्व और नैतिक मूल्यों के बीच संबंध बता सकेंगे; और
- व्यक्तित्व विकास और नैतिक मूल्यों के आधार पर एच आई वी/एड्स को नियंत्रित करने वाले उपायों की विवेचना कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना .

'व्यक्तित्व' शब्द लोकप्रिय भाषा में व्यापक रूप से प्रयुक्त होने वाला शब्द है। अधिकांश लोग व्यक्तित्व को व्यक्ति की बायाकृति और व्यवहार के रूप में मानते हैं।

हम प्रायः व्यक्ति के व्यक्तिगत बनाव–श्रृंगार, उसके चलने–बोलने का ढंग, उसके पहनावे, केश–सज्जा इत्यादि के आधार पर उसके व्यक्तित्व को श्रेय देते हैं। व्यक्तित्व को अक्सर व्यक्ति के चरित्र का प्रतिबिंब माना जाता है। यह भी गलत धारणा है। व्यक्तित्व पूर्णतया मनोवैज्ञानिक शब्द है। व्यक्तित्व को समझना मनोविज्ञान के प्रमुख लक्ष्यों में से एक है।

5.2 व्यक्तित्व का स्वरूप, परिभाषा और विकास

आप जानते ही हैं कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्तित्व का अत्यधिक महत्त्व है। आपके मन में कुछप्रश्न भी उठ सकते हैं। जैसे, इस उच्च–मूल्यांकन वस्तु का

स्वरूप क्या हा क्या हम सभी का व्यक्तित्व होता है? क्या व्यक्तित्व जन्म के समय से ही निर्धारित हो जाता है? कुछ लोग शांत व गंभीर जबकि कुछ लोग गुस्सैल व आक्रामक क्यों होते हैं? इस इकाई में हम ऐसे ही कुछ प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करेंगे?

व्यक्तित्व अंग्रेजी के 'पर्सनेलिटी' का पर्याय है। यह पर्सनेलिटी शब्द लेटिन के 'परसोना' (Persona) शब्द से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ है 'मुखौटा' । प्राचीन रोम में मंच में अपनी पहचान छुपाने के लिए नाटकों के पात्र मुखौटों का प्रयोग करते थे। इस प्रकार परसोना का अर्थ यह निकलता है कि व्यक्ति वास्तव में जो है वह नहीं बल्कि वह जैसा कि दूसरों को दिखाई देता है। परसोना व्यक्ति के बाहरी व्यवहार के लिए उत्तरदायी आंतरिक संगठन को नहीं दर्शाता। इस प्रकार परसोना वास्तविक व्यक्तित्व को निरूपित नहीं करता।

व्यक्तित्व का अर्थ बाह्याकृति से कहीं अधिक गहरा है। यह व्यक्ति के चरित्र, भावात्मक प्रवृत्तियों, समाजशीलता (मिलन–सरिता) और अन्य पहलुओं जैसे व्यक्ति 'क्या कहता और करता है' को व्यक्त करता है। यह उसकी शारीरिक, मानसिक, भावात्मक और नैतिक विकास की लम्बी प्रक्रिया का परिणाम होता है। मनोवैज्ञानिक के लिए, व्यक्तित्व एक गतिशील संकल्पना है जो व्यक्ति की संपूर्ण मनोवैज्ञानिक प्रणाली की वृद्धि और विकास को वर्णित करती है।

परिभाषाएँ

व्यक्तित्व का अध्ययन करने में हमें जो पहली समस्या का सामना करना पड़ा वह है इस के लिए एक आदर्श परिभाषा का पता लगाने की आवश्यकता। व्यक्तित्व के संबंध में भिन्न–भिन्न मनोवैज्ञानिकों के भिन्न–भिन्न विचार हैं। उन्होंने व्यक्तित्व को अपने–अपने नजरिए से परिभाषित किया है। इनमें से कुछ परिभाषाओं की चर्चा हम कर सकते हैं।

मुन्न (Munn) ने व्यक्तित्व को व्यक्ति की संरचना, व्यवहार के तरीकों, रुचियों, अभिवत्तिों क्षमताओं, योग्यताओं और अभिक्षमताओं (रूझाव) के विशिष्ट एकीकरण के रूप में परिभाषित किया। व्यक्ति विशेष में जिस विशिष्ट ढंग में से गुण समेकित होते हैं वही उसके व्यक्तित्व का निर्धारक है।

व्यक्तित्व के लिए जार्डन एलपोर्ट द्वारा दी गई परिभाषा का सर्वाधिक रूप से प्रयोग होता है। उसके अनुसार "व्यक्तित्व के भीतर उन मनो–भौतिकीय प्रणालियों का गतिशील संगठन है जो पर्यावरण के साथ उसके अद्वितीय सामंजस्य को निर्धारित करता है।'' इस परिभाषा में गतिशील स्वरूप अर्थात् व्यक्तित्व के परिवर्तनशील मूल्यों पर बल दिया गया है। इसमें परिवेश के साथ तालमेल की महत्ता को स्वीकारा गया है। इसमें मनो–भौतिकीय प्रणालियों की महत्ता पर बल दिया अर्थात् व्यक्ति की आदतें, मनोभाव, भाव और संवेग जिनकी प्रकृति तो मनोवैज्ञानिक होती है लेकिन आधार भौतिक होता है। इस परिभाषा में केवल व्यक्तित्व के सैद्धांतिक हिस्से पर ही बल दिया गया जो पर्याप्त नहीं है। व्यक्तित्व के लिए एक आदर्श परिभाषा ढूँढ पाना अत्यंत कठिन है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) व्यक्तित्व का स्वरूप बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

व्यक्तित्व का विकास

वृद्धि किस प्रकार होती है? यह दो प्रतिमानों परिवर्धन और परिवर्तन में होती है। एक पत्ते और तितली का उदाहरण लीजिए। वृद्धि की प्रक्रिया के दौरान पत्ता आकार में फैलता है। लेकिन उसका जो अनिवार्य रूप है वह वैसा ही रहता है। दूसरी और तितली पूरी परिपक्व तितली के रूप में आने तक परिवर्तन की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरती है। मानव में दोनों प्रकार के ही विकास दृष्टिगत होते हैं। जैसे–जैसे बच्चा बढता है और बड़ा होता है, उसका शरीर ज्यादा बड़ा व भारी होता चला जाता है। लेकिन पत्ते की भाँति उसकी संरचना वही रहती है। दूसरी ओर मानव के प्रारंभिक वर्षों में उसकी मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं में कई परिवर्तन होते हैं।

व्यक्तित्व विकास में बच्चे के व्यक्तित्व और वह बढ़कर वयस्क हुआ है उस वयस्क के व्यक्तित्व के बीच संबंध का पता लगाना निहित है। बच्चे से वयस्क व्यवहार और मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ किस प्रकार विकसित होती हैं यह समझ पाना ही व्यक्तित्व विकास की जानकारी है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि एक तितली किस प्रकार निकलती है यह समझ पाना ही व्यक्तित्व के विकास को समझना है।

व्यक्तित्व विकास का अध्ययन करने की आवश्यकता

हम व्यक्तित्व विकास का अध्ययन क्यों करते हैं? इसके कई कारण हैं जिनमें से कुछ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण निम्नलिखित हैं :

1) यह अध्ययन हमें व्यक्तित्व के परिपक्व स्तर पर उसकी कार्य–प्रणाली को समझने में सहायक होता है।

2) हम व्यक्ति के व्यवहार को केवल तभी समझ सकते है यदि हम उसके भावों, विश्वासों, कौशलों, रवैयों आदि के विशिष्ट संगठन के बारे में जानते हों।

3) यह अध्ययन हमें वयस्क व्यक्तित्व और व्यक्तित्व की गड़बड़ियों के बारे में पूर्वानुमान लगाने में सहायक होता है।

व्यक्तित्व को ढालना

जो व्यक्तित्व जैसे हैं वे ऐसे क्यों हैं? व्यक्तित्व में परिवर्तन क्यों होते हैं इसका भी कोई विशिष्ट कारण नहीं है। लेकिन व्यक्तित्व के निर्माण और उसके विकास में कई कारक एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं।

क) आनुवंशिकता

व्यक्ति के विकास को आकार देने में आनुवंशिकता कितनी महत्त्वपूर्ण है? आनुवंशिकता व्यक्ति के व्यक्तित्व को निर्धारित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। व्यक्ति समग्र आनुवंशिकता निधि गर्भधारण के समय ही अपने माता और पिता से गुणसूत्रों में स्थित जीनों के माध्यम से प्राप्त करता है। व्यक्ति का व्यक्तित्व प्रतिमान वस्तुतः इसी समय निर्मित होता है। बच्चा अपने व्यक्ति की आधारिक संरचना शारीरिक गठन, लिंग, स्वभाव, बुद्धिमत्ता इत्यादि वंशानुक्रम से प्राप्त करता है। बाद में ये पर्यावरण के साथ अंतःक्रिया द्वारा विकसित होते हैं।

ख) पर्यावरण

प्रसव पूर्व और प्रसवोत्तर पर्यावरण की प्रतिकूल परिस्थितियों का बाद में व्यक्तित्व विकास पर स्थायी और हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

व्यक्तित्व निर्माण पर दबाव डालने वाले महत्त्वपूर्ण पर्यावरण के कारक हैं– वह संस्कृति, जिसमें हम पलते बढ़ते हैं, हमारा परिवार, मित्र, सामाजिक समूह इत्यादि।

i) **संस्कृति** : संस्कृति हमारी मान्यताएँ, अभिवृत्तियाँ और मूल्य स्थापित करती है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचरित होते हैं।

ii) **परिवार** : बच्चा अपने रचनात्मक वर्ष अपने माता–पिता और भाई–बहनों के साथ परिवार में व्यतीत करता है। परिवार एक छोटा सा समूह है। लेकिन परिवार के सदस्यों के बीच घनिष्ठ संबंध के व्यक्तित्व के विकास को सशक्त ढंग से प्रभावित करते हैं। घर का वातावरण, बच्चा जिस स्कूल में जाता है, उसके मित्र, बहन–भाइयों की संख्या, उनके व्यक्तित्व, बच्चे की क्रमसूचक संख्या (अर्थात् बच्चा पहला है, दूसरा है या तीसरा), ये सभी उसके व्यक्तित्व के विकास में योगदान देते हैं। सौहार्द्रपूर्ण, स्नेहमयी, शांत परिवारिक माहौल से स्वस्थ व्यक्तित्व के विकास को बढ़ावा मिलता है।

iii) **आर्थिक पर्यावरण** : प्रतिकूल आर्थिक स्थितियों के कारण अक्सर अवांछनीय गुणों वाले व्यक्तित्व का विकास होता है जैसे – हीन भावना, संवेगात्मक और सामाजिक मेल जोल की पहल करने का अभाव। हालांकि इसके अपवाद भी हैं। लेकिन स्वनिर्मित पुरुष–महिलाएँ कम ही होते हैं।

iv) **सामाजिक भूमिका** : परिवार की सामाजिक स्थिति भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में निर्णायक कारक हैं। परिवार बच्चे को अन्य लोगों के साथ तालमेल बनाने, अपनी भावाभिव्यक्तियों को नियंत्रित करने, सहयोग इत्यादि के लिए प्रशिक्षण प्रदान करता है। वह

परिवार से क्या सीखती है वही सामाजिक समूह में उसकी भूमिका को निश्चित करता है।

ग) स्थिति

व्यक्तित्व पर आनुवंशिकता और पर्यावरण के प्रभावों को प्रभावित करने वाला तीसरा कारक है स्थिति। सामान्यतः व्यक्ति का व्यक्तित्व स्थिर व समानुरूप होता है। लेकिन भिन्न–भिन्न स्थितियों में उसमें परिवर्तन हो जाते हैं। विभिन्न परिस्थितियों में की गई विभिन्न माँगे व्यक्तित्व में भिन्न–भिन्न परिवर्तन लाती हैं।

आनुवंशिकता और पर्यावरण का सापेक्षिक महत्त्व

इस अवस्था में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठता है। व्यक्तित्व विकास में किसकी ज्यादा महत्त्वपूर्ण भूमिका है? आनुवंशिकता की या पर्यावरण की? इस प्रश्न का उत्तर सरल नहीं है। व्यक्तित्व दोनों प्रभावों का परिणाम प्रतीत होती है। वंशानुगत गुण व्यक्तित्व को आकार देने में पैरामीटर या बाह्य सीमाएँ निर्धारित करते हैं। पर्यावरणी कारक वंशानुगत योग्यताओं को सुदृढ़ या कमज़ोर बना सकते हैं। जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता है सामाजिक वातावरण वंशानुगत व्यक्तित्व विशेषकों के विकास को सुदृढ़ करता है। आनुवंशिकता और पर्यावरण एक दूसरे के पूरक हैं। आनुवंशिकता या पर्यावरण दोनों में से किसी एक की भी अनुपस्थिति में व्यक्तित्व विकास संभव नहीं है।

समाज कार्य मान्यताओं की प्रासंगिकता

भारत में समाज कार्यकर्त्ताओं की नियमावली (थॉमस 2015) में समाज कार्य की बाहर मूल मान्यताओं को रेखांकित किया गया है, जिनके नाम हैं – मानव सेवा, सामाजिक न्याय, मानव की महत्ता और गरिमा का सम्मान, मानव सम्बन्धों का महत्त्व, दक्षता, ईमानदारी, कठिन परिश्रम, शिक्षण, व्यवसायगत वफादारी, सांस्कृ

तिक संवेदनशीलता, राष्ट्रभक्ति और समर्पण। ये समाज कार्य मान्यताएँ व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है।

मानव–सेवा : समाज कार्यकर्त्ता आत्म–त्याग की भावना के साथ भाईचारे के आदर्श से अपनी सेवाएँ देता है। लोगों को समझना चाहिए कि दूसरों की सेवा करना व्यक्तिगत हित से अधिक महत्त्वपूर्ण है और इसलिए दूसरों की आवश्यकताओं को अपने व्यक्तिगत हितों पर प्रमुखता देनी चाहिए।

सामाजिक न्याय : समाज कार्यकर्त्ता की भाँति प्रत्येक व्यक्ति को समाज के दबे कुचले, लाभ से वंचित, दमित, शोषित और निर्धन व्यक्ति के प्रति अन्याय का विरोध करना चाहिए। मनुष्य की महत्ता एवं गरिमा मिलनी चाहिए वे अपनी महत्ता और गरिमा पर विचार करने, अनुभव करने योजना बनाने, निर्णय करने और कार्य करने योग्य है। प्रत्येक व्यक्ति के साथ स्नेहयुक्त और सम्मानपूर्ण व्यवहार किया जाना चाहिए।

मानव सम्बन्धों का महत्त्व : मानव सम्बन्ध का महत्त्व इंगित करता है कि समाज कार्यकर्त्ता को सेवा प्राप्तकर्त्ता की चिन्ता को समझना चाहिए और जानना चाहिए कि वे कैसा अनुभव कर रहे हैं जिसके परिणाम स्वरूप एक गर्मजोशी से भरा और स्वस्थ सम्बन्ध विकसित होगा।

दक्षता : कार्यकर्त्ता को अपने दक्षता–क्षेत्र में पेशेवरों तथा मुवक्किल के साथ उत्तरदायित्व तथा समर्पण से कार्य करना चाहिए। उन्हें सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रदत्त सेवाएँ उच्चतम गुणवत्तायुक्त, प्रभावी और मुवक्किल से सर्वोच्च हित को ध्यान में रखकर प्रदान की जाएँ।

ईमानदारी : मान्यताओं का एक महत्त्वपूर्ण उपभाग नैतिक और सामाजिक दृष्टि कोणों जैसे ईमानदारी, विश्वसनीयता, करूणा, उपयुक्तता, दान तथा सामाजिक उत्तरदायित्व से बनता है। कार्यकर्त्ता को व्यवहार के उच्च मानकों को ईमानदारी

से महत्ता में विश्वास रखकर सम्मानयुक्त होकर और न्याय तथा उपयुक्तता की भावना के साथ पेशे के नैतिक सिद्धांतों का पालन करना चाहिए।

कठिन परिश्रम : कठिन परिश्रम सफलता की सीढ़ी है। कठिन परिश्रम का कोई विकल्प नहीं है। कठिन परिश्रम व्यक्ति के जीवन की महत्त्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए आत्म–विकास का रास्ता बनाता है। आत्म–अनुशासित होना वह योग्यता है जिससे मनुष्य आत्म–प्रेरित होता है। इससे व्यक्ति आवश्यक और समझदारी से परिपूर्ण कार्य करने योग्य बनता है।

शिक्षण : समाज कार्यकर्त्ता मुवक्किल के व्यक्तिगत विकास और दृष्टिकोण को ऐसे प्रोत्साहित करता है जैसे एक शिक्षक विद्यालय प्रबंधन द्वारा सुनिश्चित किए गए प्रत्येक विद्यार्थी के विकास में संलग्न होता है। समाज कार्यकर्त्ता से यह आशा की जाती है कि वे मुवक्किल तथा सेवा प्राप्तकर्त्ता को चुनौतियां, बाधाएँ और समस्याओं का सामना करने के लिए प्रेरित करें।

पेशे के प्रति वफादारी : व्यक्ति को अपनी संस्था के प्रति वफादारी और हार्दिकता युक्त भावना का विकास करने की अत्यंत आवश्यकता है। कार्यकर्त्ता को अप्रिय (अस्वास्थ्यकारी) व्यवहार से बचना चाहिए जो पेशे की मान्यताओं को प्रभावित करता हो। पेशे से वफादारी कार्यकर्त्ता से यह आशा रखती है कि वे अप्रिय (अस्वास्थ्यकारी) व्यवहार से बचते हुए अपनी ' पेशेगत जिम्मेदारियों का पूर्ण समर्पण तथा निष्ठा से निर्वाह करें।

सांस्कृतिक संवेदनशीलता : प्रत्येक व्यक्ति को दूसरों की सांस्कृतिक विरासत और मान्यताओं के प्रति संवेदनशील होना चाहिए और सांस्कृतिक विभिन्नताओं का सामना करना चाहिए। कार्यकर्त्ता को सांस्कृतिक संवेदनशीलता को ध्यान में रखते हुए अपने विचार, विश्वास, रीति–रिवाज और जीवन पद्धति मुवक्किल पर थोपने नहीं चाहिए।

राष्ट्र भक्ति : व्यक्ति को अपने राष्ट्र की संवृद्धि तथा समृद्धि हेतु वफादार तथा समर्पित होना चाहिए, इसके वृद्धि तथा विकास के लिए कार्यरत होना चाहिए तथा इसकी मान्यताओं को संस्कृति को संरक्षित करना चाहिए। कार्यकर्त्ता को अपने राष्ट्र पर गर्व होना चाहिए और इसे अपने समाज कार्य के समय प्रमुखता दी जानी चाहिए।

उत्तरदायित्व और समर्पण : कार्यकर्त्ता को अपने परिवार संस्था और समाज के प्रति उत्तरदायित्व तथा समर्पण भाव से युक्त होना चाहिए। उन्हें उनको प्रोत्साहित करने के प्रति समर्पित होना चाहिए, सामाजिक पद्धति और ढाँचों में परिवर्तन लाना चाहिए जो समानता मानव अधिकारों तथा प्राकृतिक पर्यावरण को संरक्षित करने में बाधक हो।

समाज कार्य मान्यताओं को अपनाकर तथा उन्हें विकसित करके समाज कार्यकर्त्ता एक नैतिक रूप से श्रेष्ठ मनुष्य बन पाएगा।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) व्यक्तित्व को ढालने में कौन–से कारक प्रभावित करते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.3 व्यक्तित्व विकास के प्रति सैद्धांतिक दृष्टिकोण

व्यक्तित्व विकास व्यक्ति की एक अद्वितीय विशेषता है। भिन्न मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व विकास को भिन्न–भिन्न नजरियों से देखते हैं। क्या व्यक्तित्व सिद्धांत व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्वानुमान लगाने में सहायक हो सकते हैं? मात्र किसी एक सिद्धांत से हमें व्यक्तित्व विकास की पूरी तस्वीर प्राप्त नहीं होती। आइए यह जाने कि प्रत्येक सिद्धांत क्या कहता है। प्रत्येक सिद्धांत की सर्वोत्तम विशेषताएँ व्यक्तित्व विकास को बेहतर तरीके से समझ पाने में हमारी सहायता करेंगी।

i) जैविक परिप्रेक्ष्य

व्यक्तित्व का जैविक आधार इस क्षेत्र में किए जाने वाले अनुसंधानों से सिद्ध होता है। यह देखा गया है कि 50% व्यक्तित्व विशेषताएँ आनुवंशिक रूप से निर्धारित होती है। शेष पर्यावरण के साथ अंतःक्रिया से निर्धारित होती है। डार्विन के सिद्धांतों के अनुसार, वंशानुगत गुण व्यक्ति को पर्यावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सहायक होते हैं।

ii) व्यक्तित्व विकास का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत

इस सिद्धांत का मानना है कि व्यक्तित्व की मूलभूत गतिकी में दो विरोधी शक्तियों इच्छाओं को रोकने से उत्पन्न होने वाली चिंता और चिंता उत्पन्न करने वाली इच्छाओं के प्रति सुरक्षा के बीच अंर्तद्वन्द्व शामिल है।

फ्रायड का सिद्धांत

इस क्षेत्र में सिग्मंड फ्रायड का महत्त्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने व्यक्तित्व व्यक्ति में सचेतन, अग्रचेतन और अचेतन के आधार पर व्यक्तित्व का वर्णन किया।

इदम् (इड) (Id) अहम् और पराहम्

फ्रायड का मानना है कि हमारा व्यक्तित्व इदम्, अहम् और पराहम्, तीन प्रक्रियाओं की परस्पर क्रिया के इर्द–गिर्द निर्मित होता है। इदम् मानसिक ऊर्जा का अचेतन भंडार है। अन्य दो प्रणालियाँ इसी मनो ऊर्जा पर संचालित होती है। मानव में दो मूलभूत सहज प्रवृत्तियाँ होती हैं। – 'जीवन' या सेक्स सहज प्रवृत्ति और 'मृत्यु' या आक्रामक सहज प्रवृत्ति। मानव के लिए अपेक्षित सभी अंतर्नोद (drive) इन्हीं दो सहज प्रवत्तियों से व्युत्पन्न होते हैं।

इदम् (ID) जन्म के समय विद्यमान होती है। इसे नैतिकता या वास्तविकता की जानकारी नहीं होती। यह केवल अपनी इच्छाओं की संतुष्टि से संबद्ध होती है। यह सुखेप्सा सिद्धाता (Pleasure Principle) द्वारा निर्देशित होती है।

अहम् व्यक्तित्व के प्रबंधक के रूप में काम करता है। यह यथार्थता के सिद्धांत का पालन करता है। इदम् की कौन–सी मूल प्रवृत्तियों को संतुष्टि प्रदान करती है और ये कैसे किया जा सकता है, इसे अहम् नियंत्रित चयन करता है व निर्णय लेता है।

पराहम् नैतिकता के सिद्धांत पर काम करता है। यह समाज के मूल्यों का परिणाम है।

यदि इनमें से कोई एक प्रणाली अन्य दोनों पर हावी हो जाए तो उसका क्या परिणाम होगा?

सशक्त अहम् की उपस्थिति सुसंतुलित व्यक्तित्व को सुनिश्चित करती है। पराहम् की प्रबलता से तंत्रिकातापी व्यक्तित्व मुखर होता है जबकि अहम् और पराहम् पर इदम् का आधिपत्य अपचारी व्यक्तित्व का विकास करता है।

व्यक्तित्व विकास में मनोलैंगिक (मनःकामुक) अवस्थाएँ

इदम् अहम् और पराहम् की संकल्पनाओं के अतिरिक्त फ्रायड ने व्यक्तित्व विकास में सेक्स की महत्ता पर बल दिया। सेक्स अंतर्नाद के लिए मानसिक ऊर्जा कामलिप्सा को उन्होंने व्यक्तित्व का आधार माना। इस तरह फ्रायड ने मनोलैंगिक विकास की पाँच अवस्थाओं के आधार पर व्यक्तित्व विकास का वर्णन किया।

कामोत्पादक क्षेत्र

विकास की प्रत्येक अवस्था में बच्चे को शरीर के एक विशिष्ट क्षेत्र को उद्दीप्त करने से सुख–आनंद की प्राप्ति होती है। ये ही कामोत्पादक क्षेत्र कहलाते हैं। लेकिन पर्यावरण उसकी इच्छाओं की संतुष्टि में प्रतिबंध लगाता है। बच्चा इस अंतर्द्वंद का कैसे मुकाबला करता है यही उसके व्यक्तित्व विकास में निर्णायक होता है।

नियतन : नियतन किसी अवस्था में अत्यधिक या अत्यंत न्यून संतुष्टि का परिणाम है। इसका अभिप्राय है कि किसी विशिष्ट अवस्था पर व्यक्तित्व भावात्मक रूप से नियत हो जाता है। यह व्यक्तित्व विकास में भी हानिकारक है। विकास पाँच अवस्थाओं में होता है

क) मौखिक अवस्था (प्रथम वर्ष)

मुँह के उद्दीपन द्वारा सुख प्राप्त किया जाता है। इस अवस्था में संतोष कई वयस्क व्यक्तित्व लक्षणों जैसे समायोजन और दृढ़ता की नींव रखता है। यदि इस अवस्था में काम लिप्सा नियत हो जाए तो कौन से लक्षण (विशेषताएँ) विकसित होंगे। नियतन के फलस्वरूप निष्क्रिय व्यक्तित्व का निर्माण होता है। यह अत्यधिक खानपान, धूमपान, मद्यपान या अन्य व्यक्तियों के विचारों की व्यंग्यपूर्ण आलोचना से संबंधित है।

ख) गुदा–संबंधी अवस्था (2 से 3 वर्ष)

निष्कासन प्रक्रिया आनंद का केंद्र बन जाती है। इस अवस्था में बच्चा मल–मूत्र त्यागने में नियंत्रण करना सीख जाता है। यहीं से हम बच्चे में अहं के विकास की शुरुआत देख सकते हैं। यदि माता–पिता बच्चे को शौचादि आदतें सिखाने के प्रति अत्यधिक सख्ती बरतते हैं तो बच्चे में व्यग्रता (उत्कंठा) की भावनाएँ विकसित हो जाती है। वह अपनी व्यग्रता और क्रोध (रोष) को अधिक से अधिक अनुप्रयुक्त समय व स्थान पर मल त्याग करके प्रदर्शित करता है। ये सभी प्रकार के व्यवहार बहिष्कार विशेषषताओं – निर्दयता, तोड़–फोड़, अव्यवस्था क्रोधोन्माद इत्यादि के आदि रूप हैं।

दूसरी ओर, सही समय और स्थान पर शौचादि के लिए प्रशंसा उसे यह अहसास देती है कि शौचादि एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है। यही विचार सृजनात्मकता और उत्पादकता की नींव डालता है।

गुदा संबंधी नियतन के कारण किस प्रकार व्यक्तित्व विकसित होता है। इससे कि जिद्दी और विवश होकर आज्ञा पालन करने वाले व्यक्तित्व का विकास होता है।

ग) लिंग अवस्था (4 से 6 वर्ष)

व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण अवधि है। इस अवस्था में जननांगीय अंगों की स्वयं हस्तक्रिया करने से आनंददायक अनुभूति आती है। काम संबंधी कई समस्याएँ तभी पैदा होती हैं यदि इस अवस्था पर अत्याधिक या अतिन्यन तुष्टि होती है। कई मामलों में कामुकता व्यक्ति में अपराध की भावना उत्पन्न कर देती है। कई अन्य मामलों में व्यक्ति सेक्स में लिप्त होकर अपनी व्यग्रता को कम करने का प्रयास करता है।

इडिपस द्वंद्व : इस अवस्था में बच्चों में इडिपस द्वंद्व होता है। यह एक ऐसी मानसिक अवस्था है जिसमें अपने से विपरीत लिंग के अभिभावक के लिए अत्यधिक आकर्षण और अपने ही लिंग के अभिभावक लिए ईष्या होती है। इसी अवस्था में बच्चा यह भी जानता है कि यह गलत है और वह अपने समान लिंग वाले अभिभावक का स्नेह व प्यार खोना नहीं चाहता। इस द्वंद्व के समाधान के लिए बच्चा अपने समान लिंग वाले अभिभावक से तादात्म्य स्थापित करने का प्रयास करता है। वह अपने समान लिंग वाले अभिभावक से लैंगिक अनुकूलन, व्यवहार और मूल्यों को समाविष्ट करने का प्रयास करता/करती है। इडिपस मनोग्रंथि के समाधान के फलस्वरूप पराहम् का निर्माण होता है।

अनसुलझी इडिपस मनोग्रंथि के कारण बाद में वैवाहिक जीवन में कई परेशानियाँ आती हैं। वे न तो अपने साथी के नजदीक आ सकते हैं और न ही सामान्य यौन संबंध स्थापित कर सकते हैं। अत्यधिक सम्मोहक महिला सेक्स के प्रति अपराध भावना महसूस करती रहती है।

फ्रायड का मानना है कि प्रत्येक व्यक्ति द्विलिंगी होता है। इसका क्या अर्थ है? इसका अभिप्राय है विपरीत सेक्स के सदस्यों के साथ–साथ समान लिंग वाले सदस्यों के प्रति भी आकर्षण। यह समलिंग कामुकता के लिए आवश्यक आधार है। लेकिन यह सहजवृत्ति अधिकांश लोगों में दबी छिपी रहती है।

घ) प्रसुप्ति अवधि (6 से 12 वर्ष)

फ्रायड के विचार से लैंगिक आवेग इस अवस्था में प्रसुप्त या निष्क्रिय होता है। हालाँकि तथ्य यह है कि यह वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति समान लिंग वाले व्यक्ति को मित्र बनाना सीखता है। इस अवस्था में लड़के के दोस्त लड़के और लड़कियों का सहेलियाँ लड़कियाँ होती हैं। लैंगिक रूप से परिपक्व व्यक्ति को समान लिंग वाले और अन्य सेक्स वाले अर्थात् दोनों प्रकार के लोगों की संगत में सहज ढंग से रहना आना चाहिए। इसी

अवस्था में सीखना प्रारंभ होना है। बच्चा भावात्मक स्वतंत्रता प्राप्त करना भी प्रारंभ कर देता है। पर्यावरण के बारे में और अधिक जानकारी उसके अंह–विकास को बढ़ावा देती है।

ङ) **जननांगीय अवस्था**

यह विकास की अंतिम अवस्था है। इस अवस्था में काम संबंधी रुचियाँ पुनः जागृत होती हैं। विपरीत लिंग के प्रति रुचि होती है। लिंग आकर्षण, समाजीकरण काम धंधे की योजना बनाना, विवाह और पारिवारिक जीवन की शुरुआत इसी अवस्था से होती है।

यदि पिछली अवस्थाओं में व्यक्ति भली–भाँति समयोजित होता है तो वह सामान्य विषमलिंगी संबंध स्थापित करने योग्य हो जाता है। वयस्क जीवन में अधिकांश लैंगिक समस्याएँ आरंभिक अवस्थाओं की असफलता के फलस्वरूप ही आती हैं। विकास की विभिन्न अवस्थाओं को विभाजित करने के लिए कोई निश्चित सीमारेखा नहीं है। व्यक्तित्व द्वारा प्राप्त अंतिम व्यक्तित्व में सभी अवस्थाओं का योगदान शामिल होता है।

इस सिद्धांत की समीक्षा

1) सेक्स को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है।

2) फ्रायड के विचार असमान्य व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों से प्राप्त उसके क्लीनिक अनुभवों से व्युत्पन्न है।

3) इस सिद्धांत के कई मुद्दों के परिणाम अनुभवजन्य नहीं हैं। तब फ्रायड के सिद्धांत से हमें क्या ज्ञात होता हैं।?

हम फ्रायड के सिद्धांत को पूरी तरह अस्वीकार या स्वीकार नहीं कर सकते। इसमें से हम कुछ हिस्से स्वीकार कर सकते हैं, कुछ अस्वीकार और कुछ को सुधार

सकते हैं। फ्रायड ने कुछ चुनौतीपूर्ण विचार प्रस्तुत किये है जो आज भी प्रासंगिक हैं।

एच आई वी/एड्स के नियंत्रण में अनुप्रयोग

उपर्युक्त सिद्धांतों से हमें ज्ञात हुआ कि इड (इदम) आनंद सिद्धांतों पर काम करती है। इद के आवेग अहं और पराहम् द्वारा नियंत्रित होते हैं लेकिन यदि इड ज्यादा सशक्त होगी तो यह अहम् या पराहम् की आवाज को कोई महत्त्व नहीं देगी। वह नैतिक मूल्यों से भी कोई सरोकार नहीं रखेगी। यह आनंददायक गतिविधियों का मजा लेने में ही लगी रहेगी। इद को नियंत्रित करके अवांछित काम–जीवन की रोकथाम की जा सकती है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) इड, अहम् और पराहम् कैसे कार्य करते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) मनोलैंगिक विकास की अवस्थाओं का उल्लेख कीजिए। व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में प्रत्येक अवस्था के महत्व के बारे में बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

सामाजिक संज्ञानात्मक सिद्धांत

आपने पढ़ा कि मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत व्यक्तित्व के विकास के लिए मुख्य रूप से अचेतन पर ध्यान केंद्रित किया गया है। अब हम सामाजिक–संज्ञानात्मक सिद्धांतों पर एक नजर डालेंगे। यह एक व्यापक शब्द है जिसमें व्यवहारात्मक और सामाजिक अध्ययन सिद्धांतों के साथ–साथ संज्ञानात्मक मनोविज्ञान भी शामिल है। अध्ययन सिद्धांतवासियों ने अवलोकनीय व्यवहार पर अपना ध्यान–केन्द्रित किया। उन्होंने व्याक्तित्व विकास में पर्यावरण की भूमिका पर भी बल दिया। बच्चा अपने व्यक्तित्व का विकास कैसे करता है? इस क्षेत्र में अग्रगामी जॉन बी. एफ स्किनर व्यवहार के निर्माण के सरल उद्दीपन अनुक्रिया संबंध में विश्वास रखते हैं। उन्होंने सुदृढ़ीकरण (प्रबलीकरण) की महत्ता पर ज़ोर दिया और व्यवहार में चेतना की भूमिका को बहिष्कृत किया।

अधिकांश अध्ययन सिद्धांतवादियों ने इस क्षेत्र में अग्रगण्यों का अनुसरण किया। हालांकि आधुनिक समय में व्यवहारवाद में, मानव व्यवहार के संदर्भ में वास्तविक जीवन की समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है।

अवलोकनात्मक अध्ययन

सामाजिक अध्ययन सिद्धांत के आधार पर एलबर्ट बांडुरा ने व्यक्तित्व विकास को एक नया दृष्टिकोण दिया। बांडुरा और उसके सहकर्मियों (1989) ने दर्शाया कि हम व्यक्तित्व संबंधी अधिकांश गुण प्रत्यक्ष प्रबलीकरण सहित या उसके बिना अवलोकनात्मक अध्ययन के जरिए अर्जित करते हैं।

उदाहरण के लिए, एक बच्चा अपने मॉडल का अवलोकन करता है और उसके व्यवहार की नकल करता है। मॉडल से प्राप्त सबलीकरण बच्चे के लिए भी सबलीकरण का काम करता है। इस तरह मॉडलों का अवलोकन करके बच्चा कई विशेषताएँ सीखता है। यह उसके अद्वितीय व्यक्तित्व के निर्माण के लिए रास्ता बनाता है। अध्ययन के विविध घटक (पर्यावरण, व्यवहार, व्यक्तिगत संज्ञानात्मक अंतर इत्यादि) व्यवहार के विशिष्ट पद्धति के निर्माण के लिए एक दूसरे के साथ अंतःक्रिया करते हैं।

आइए, विद्यार्थी का अपनी पढ़ाई के लिए एक विशेष विषय चुनने का उदाहरण लें (व्यवहारात्मक) उसका चयन अपने परिवार और दोस्तों से प्रभावित होता है। (पर्यावरण) और यह उसकी अपनी व्यक्तिगत अभिरुचि द्वारा भी प्रभावित होता है (व्यक्तिगत संज्ञानात्मक कारक) ये सभी परस्पर एक दूसरे कारकों को प्रभावित करते हैं।

अंतर्नोद न्यूनीकरण सिद्धांत (Drive reduction)

यह सिद्धांत डालार्ड और मिलर द्वारा प्रस्तुत किया गया। जब एक व्यक्ति प्रेरणाओं द्वारा प्रेरित होता है तब वह उन्हें कम करने के लिए अनक्रिय सीखता है। अंतर्नोद न्यूनीकरण ईनाम व प्रबलीकरण प्रदान करता है। इसके बदले में वह अन्य प्रेरणाओं को जागृत करता है। इस तरह, सामाजिक पर्यावरण से व्यक्ति नई अनक्रियाएँ और नयी व्यवहार अभिरचना सीखता है। परिणामस्वरूप उसका व्यक्तित्व विकसित होता है।

अध्ययन प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक कौन से हैं?

ये हैं व्यक्ति की स्वाभाविक या अर्जित योग्यताएँ, उसके परिपक्वता के स्तर उद्दीपन और पर्यावरण से प्राप्त होने वाले उसके प्रबलीकरण।

एच आई वी/एड्स के नियंत्रण में अनुप्रयोग

पर्यावरण के साथ अंतःक्रिया करके व्यक्तित्व अर्जित किया जाता है। हमारे जीवन हमारे विगत अनुभवों द्वारा निर्धारित नहीं होते, भले ही हमारे अनुभव महत्त्वपूर्ण हैं। सीखने की प्रक्रियाएँ व्यक्ति को उसकी आदतें छोड़ने में सहायक होती हैं। यदि व्यक्ति सेक्स संबंधी किसी गलत आदत को ग्रहण करता है तो उसे बदला जा सकता है। सकारात्मक मॉडलों की उपस्थिति भी हमारी गलत आदतों को परिवर्तित करने में सहायक होती है।

व्यक्तित्व विकास पर मानवतावादी परिप्रेक्ष्य

इस परिप्रेक्ष्य में मानव अनुभवों की समग्र विशेषताओं पर बल दिया गया है। मनोविज्ञान में यह तीसरी शक्ति भी कहलाता है जो मनोगति की और व्यवहारात्मक मनोविज्ञान का विकल्प है।

कार्ल रोज़र का स्व–सिद्धांत

व्यक्तित्व विकास की व्याख्या करने के लिए कार्ल रोज़र ने स्व–सिद्धांत को प्रतिपादित किया। प्रतिदिन, प्रतिक्षण, हमें अपने पर्यावरण में कई घटनाओं का सामना करना पड़ता है। हम इन्हें कैसे अनुभूत करते हैं और किस प्रकार व्याख्या करते हैं ये अनुभव हमारे व्यवहार को निर्धारित करते हैं।

इस सिद्धांत के अनुसार व्यक्तित्व विकास कैसे होता है?

रोज़र के व्यक्तित्व सिद्धांत में दो मूलभूत प्रणालियाँ अंतर्निहित है – एक जीव और दूसरा व्यक्ति स्वयं (Self)। यह दोनों प्रणालियाँ व्यक्ति के गोचरात्मक क्षेत्र में

संचालित हो रही हैं। व्यक्तित्व इसी अंतःक्रिया की देन है। गोचरात्मक क्षेत्र से अभिप्राय है व्यक्ति द्वारा अनुभव की गई वास्तविकता या व्यक्ति की व्यक्तिगत वास्तविकता है। जीव अनुभव की सम्पूर्णता को निरूपित करता है (चेतन और अचेतन)। व्यक्ति का स्व (Self) स्वीकृत अनुभव का जागरूक हिस्सा है।

स्व–संकल्पना का अर्जन एक लंबी व निरंतर प्रक्रिया है। हम अपने अनुभवों को कैसे अनुभव करते हैं – सकारात्मक रूप से या नकारात्मक रूप में, यह हमारी स्व–संकल्पना पर निर्भर करता है। स्व–संकल्पना सामाजिक अनुभवों के प्रति व्यक्ति की अंत–क्रिया के फलस्वरूप विकसित होती है। उदाहरण के लिए, यदि कोई आपसे कहता है कि आप एक बहुत खूबसूरत और बुद्धिमान जवान लड़कें हैं तो आप अपनी संकल्पना में शामिल करेंगे कि आप एक उद्यमी युवा व्यक्ति हैं और आप अपनी इस स्व–संकल्पना को बनाए रखने का हर संभव प्रयास करेंगे। हम पहले से ही निर्मित स्व–संकल्पना के अनुरूप अपने व्यवहार को नियमित करते हैं।

यदि व्यक्ति में झूठी स्व–धारणा विकसित हो जाए तो क्या होता है? वास्तविक और कल्पित संकल्पनाओं के बीच असंगति से व्यवहार असमान्य हो सकता है। अनुकूल (स्वस्थ) व्यक्तित्व का विकास तभी होता है यदि व्यक्ति की आत्म छवि में और उसके वास्तविक अनुभवों के बीच सौहार्दपूर्ण मेल हो।

आत्मसिद्धि सिद्धांत

आत्मसिद्धि पर सर्वाधिक सुविख्यात सिद्धांत ज़रूरतों के सोपानक्रम पर अब्राहिम मसलों का सिद्धांत है। उसका मानना था कि मानव व्यक्तित्व जन्मजात संभावनाओं की पूर्ति पर निर्भर करता है। उन्होंने परिकल्पना की कि प्रत्येक मानव के भीतर ज़रूरतें उसकी महत्ता के क्रम अथवा सोपानक्रम में व्यवस्थित होती है। इनका क्रम

आधारभूत से जटिल ज़रूरतों में होता है। उन्होंने व्यक्तित्व विकास की प्रेरणात्मक पूर्ति की पाँच अवस्थाओं का वर्णन किया जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

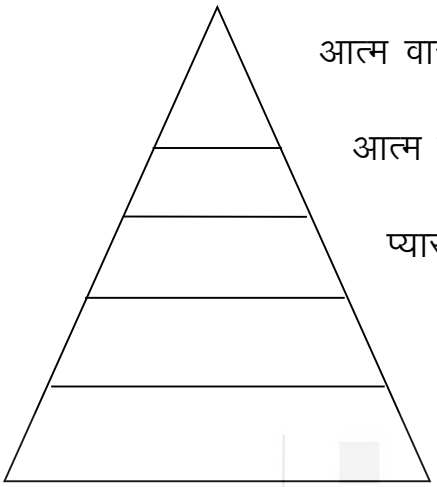

निम्न स्तर पर ज़रूरत तुष्टि के बाद ही अगली ज़रूरत प्रमुख बनती है। प्रारंभिक ज़रूरतों की तुष्टि गौण ज़रूरतों को प्रेरित करती है इस प्रकार व्यक्ति सोपानक्रम की सीढ़ियाँ चढ़ता जाता है।

हमारे समाज में अधिकांश लोग निम्न स्तर पर ज़रूरतों की तुष्टि पर ध्यानकेंद्रित करते हैं। ऐसा क्यों? इसका कारण है मूलभूत ज़रूरतें – जो कि व्यक्ति के जीवित रहने के लिए अनिवार्य है, उनकी तुष्टि के बाद ही व्यक्ति बड़ी ज़रूरतों के बारे में सोच सकता है। एक भूखा इंसान समाज को पुनःनिर्मित करने के बारे में नहीं सोच सकता है। क्या इसके कुछ अपवाद हैं? हमें इसके कई अपवाद मिल सकते हैं। कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो मूलभूत ज़रूरतों की पूर्ति की परवाह किए बिना विचारों, धर्म और सामाजिक मूल्यों के लिए संघर्ष करते हैं लेकिन ऐसे लोग बहुत ही कम हैं।

आलोचना

यह व्यक्तित्व के प्रति एक अवैज्ञानिक दृष्टिकोण है। अभी भी मासलों के ज़रूरत सिद्धांत को व्यापक मान्यता प्राप्त हुई है। इन सिद्धांतों ने व्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रेम,

व्यक्तिगत वृद्धि और मूल्यों में काफी योगदान दिया है। मानवतावादी सिद्धांतवादियों ने मनोविज्ञान के सर्जनात्मक पक्ष की ओर ध्यान केंद्रित किया।

एच आई वी/एड्स के नियंत्रण में अनुप्रयोग

मानवतावादी मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्ति को सकारात्मक विशेषताओं के संदर्भ में देखने को कहा हमारी दोषपूर्ण आत्मछवि या असमर्थित पर्यावरणी शक्तियों के कारण समस्याएँ हो सकती हैं। इस सिद्धांत से उद्भूत संदेश है कि पर्यावरण को नियंत्रित करके हम जीवन के प्रति गलत रवैये को नियंत्रित कर सकते हैं, विशेष रूप से अस्वस्थ काम संबंध । यदि हम अपने पर नियंत्रण नहीं रख सकते हैं तब हम कई यौन रोगों का शिकार हो सकते हैं।

लक्षण दृष्टिकोण

इस दृष्टिकोण के समर्थकों के अनुसार व्यक्तित्व की मूलभूत धारणा संबंधी इकाई विशेषता (लक्षण) है। विशेषताएँ सापेक्षिक रूप से स्थायी और स्थिर सामान्य व्यवहार प्रतिरूप है जो व्यक्ति कई स्थिति में प्रदर्शित करता है।

जी.बी. यालपोर्ट व्यक्तित्व का वर्णन करने के लिए लक्षण दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने वाले पहले व्यक्तित्व सिद्धांतवादी थे। उन्होंने विशेषताओं को मूलभूत, केंद्रीय और गौण विशेषताओं में विभाजित किया। मूलभूत विशेषताएँ अत्यंत प्रभावी और प्रमुख होती हैं। इनकी संख्या बहुत कम होती है। केंद्रीय विशेषताएँ व्यक्तित्व के निर्माण खंड हैं। ये व्यक्ति के व्यक्तित्व के केंद्रबिंदु होते हैं। गौण विशेषताएँ कम महत्त्वपूर्ण होती हैं।

व्यक्तित्व का नवीनतम सिद्धांत आर.बी. केटल द्वारा विकसित किया गया। केटल के विचार में व्यक्तित्व विशेषताओं की जटिल संरचना है। उन्होंने इस सिद्धांत को विकसित करने के लिए कारक विश्लेषण सिद्धांत का प्रयोग किया। उनके अनुसार चार प्रकार की विशेषताएँ होती हैं।

1) **सामान्य विशेषताएँ :** ये विशेषताएँ सामान्य जनसंख्या में पाई जाती हैं; वे विशेषताएँ जो सभी लोगों में सामान्य होती हैं।

2) **अद्वितीय विशेषताएँ :** यह प्रत्येक व्यक्ति में अलग–अलग होती हैं।

3) **सतही विशेषताएँ :** ये वे विशेषताएँ है जो हमारे व्यवहार के प्रदर्शन द्वारा पहचानी जाती हैं। ये दिखावटी स्तर पर होती है। इन्हें तत्काल देखा जा सकता है।

4) **स्रोत विशेषताएँ :** ये अंतर्निहित संरचनाएँ या स्रोत हैं जो व्यक्ति के व्यवहार को निर्धारित करते हैं। स्रोत विशेषताएँ सतही विशेषताओं से ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं। यह व्यक्तित्व का मूल स्रोत है।

एच आई वी/एड्स के नियंत्रण में अनुप्रयोग

इस सिद्धांत के अनुसार, व्यक्तित्व को आकार प्रदान करने में स्रोत और सतही विशेषताएँ अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। स्रोत विशेषताएँ आनुवंशिकता द्वारा निर्धारित होती हैं। जबकि सतही विशेषताएँ पर्यावरण द्वारा प्रभावित होती हैं। इन दोनों विशेषताओं की एच आई वी/एड्स को नियंत्रित करने में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। वंशानुगत विशेषताएँ व्यक्ति को पर्यावरण को नियंत्रित करने में सहायक होनी चाहिए।

बोध प्रश्न 4

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) अध्ययन प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक कौन से हैं? .

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) मेसलो के ज़रूरतों के सोपानक्रम सिद्धांत का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.4 नैतिक मूल्यों का विकास

नैतिक मूल्यों से तात्पर्य, सिद्धान्तों के उन समूह से है जो व्यक्ति का सही तथा गलत है के बीच अंतर जानने में मार्गदर्शन करते हैं।

प्रत्येक सांस्कृतिक समूह में अनुमोदित व्यवहार के अपने–अपने मानदंड होते हैं। कुछ को सही माना जाता है क्योंकि वे अपने सदस्यों के कल्याण के प्रति उपयोगी होते हैं जब कुछ अन्य गलत माने जाते हैं क्योंकि वे समाज के कल्याण के लिए खतरनाक होते हैं।

बच्चों में नैतिकता का आर्विभाव कैसे होता है? ज्यों–ज्यों वे बड़े होते हैं वे नैतिक मूल्य कैसे सीखते हैं? मनोवैज्ञानिक कई वर्षों से इन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं। आज तक कई मनोवैज्ञानिक इस क्षेत्र में गहन अनुसंधान कर रहे हैं।

किसी व्यक्ति के सांस्कृतिक समूह में क्या गलत और क्या सही है इसके विषय में जन्म से ही जानकारी किसी को भी नहीं होती। जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता जाता है वैसे–वैसे उसका आचरण विकसित होता जाता है। उसका आचरण उसके अपने नैतिक जीवन और जिस समूह का वह सदस्य या सदस्या है को प्रतिबिंबित करता है। वह अपने आस–पास के व्यक्तियों के व्यवहार का अचेतन रूप से अनुकरण करना प्रारंभ कर देता/देती है। वह अपने समाज की परंपराओं, रीति–रिवाजों और संस्कृति का अनुकरण करता है। वह सीखता है कि लोग समाज द्वारा स्वीकृति कार्य के आधार पर उसके गलत या सही व्यवहार का निर्णय लेते हैं। इस तरह धीरे–धीरे वह नैतिकता का पाठ सीखता/सीखती है। समूह किस कार्य को अनुमोदित करता है यह सीखना एक लम्बी व कठिन प्रक्रिया है।

नैतिक मूल्य व्यक्ति के व्यक्तित्व को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?

नैतिक मूल्य प्रत्यक्ष रूप से व्यक्ति के व्यवहार और निर्णयों की कवालिटी को प्रभावित करते हैं। एक व्यक्ति उन मूल्यों को सीखता है जो उसकी ज़रूरतों उसकी और इच्छाओं को संतुष्ट करती है और इसी के साथ–साथ समूह द्वारा अनुमोदित होती हैं।

व्यक्ति द्वारा अर्जित नैतिक मूल्य उसके व्यक्तित्व का प्रतिबिंब होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति उन मूल्यों को विकसित करता है जो उसके लिए महत्त्वपूर्ण होते हैं और जीवन में उसका मार्गदर्शन करते हैं।

नैतिक मूल्यों को हम किस प्रकार सीखते हैं?

कुछ ऐसी व्यवहार–संबंधी सांस्कृतिक मान्यताएँ हैं जो समाज द्वारा नियंत्रित होती हैं। नैतिक मूल्यों को सीखने से अभिप्राय है कि बच्चा व्यवहार की इन मान्यताओं को किस ढंग से आत्मसात् करता है कि क्या गलत है और क्या सही है और बच्चों दंड अन्य तकनीको के प्रयोग की समझ द्वारा बच्चा नैतिक मूल्यों को विकसित करता है। नैतिकता के निर्धारक कई स्तरों पर विद्यमान होते हैं। प्रत्येक समाज में नैतिकता की सुरक्षा और अच्छे व्यवहार की गारंटी के लिए कई विनिर्दिष्ट नियम हैं। इसके अतिरिक्त, कुछ मनोवैज्ञानिक निर्धारक भी हैं। नैतिकता के भावात्मक संज्ञानात्मक और व्यवहारात्मक घटक होते हैं। ये घटक एक दूसरे से संबद्ध होते हैं। ये सभी कारक नैतिकता के विकास में एक दूसरे के साथ क्रया करते हैं।

बोध प्रश्न 5

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) नैतिकता का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.5 नैतिक विकास के सिद्धांत

नैतिक विकास के सिद्धांत

इस इकाई में हम नैतिक विकास के कुछ प्रमुख सिद्धांतों की भी चर्चा करेंगे। प्रत्येक सिद्धांत में नैतिक विकास के कुछ विशेष पहलुओं का वर्णन किया गया है। हमारे विवरण में प्रत्येक सिद्धांत की अच्छाइयों और सीमाओं पर प्रकाश डाला गया है।

सामाजिक–जैविक सिद्धांत

नैतिक विकास का जैविक परिप्रेक्ष्य समाजजैविकी नामक क्षेत्र द्वारा निरूपित होता है। इसका मानना है कि नैतिकता का मूल हमारे स्पीशीज के आनुवंशिक उत्तराधिकार में है। यह कई समाजोन्मुख व्यवहारों जैसे – मदद करना, सहयोग देना, मिल बाँटना इत्यादि में देखे जा सकते हैं। यह सिद्धांत नैतिक विकास के सभी पहलुओं को स्पष्ट नहीं कर सकता है। लेकिन यह नैतिक व्यवहार के अनुकूल महत्त्व की ओर संकेत करता है।

मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत

क) फ्रायड का सिद्धांत

मनोलैंगिक विकास की लैंगिक अवस्था में उत्पन्न होने वाले इडिपस मनोग्रंथि के बारे में आप पहले ही पढ़ चुके हैं। आप यह भी पढ़ चुके हैं कि इसको कैसे सुलझाया जा सकता है। फ्रायड का मानना है लैंगिक अवस्था में इडिपस ग्रंथि का समाधान नैतिकता की शुरुआत को दर्शाता है। बच्चे में यह अंर्तद्वन्द्व भय और व्यग्रता पैदा करता है। वह अपने माता–पिता के स्नेह के खोने के बारे में चिंतित होता/होती है। इन व्यग्रताओं पर विजय पाने के लिए बच्चे समान लिंग वाले अभिभावक से तादात्म्य का अनुभव करते हैं। समान लिंग वाले अभिभावक की ओर विरोध की भावना

उस बच्चे में स्वयं के प्रति अपराध भावना के रूप में संचालित हो जाती है। यह बच्चों में नैतिक विकास की शुरुआत है।

इस सिद्धांत की क्या सीमाएँ हैं? फ्रायड का सिद्धांत नैतिक विकास में एक प्रेरक के रूप में केवल अपराध के इर्द–गिर्द निर्मित हैं लेकिन अपराध भावना विवेक के विकास को बढ़ावा नहीं देती। शारीरिक दंड और डांट–फटकार बच्चों को प्राधिकारी के प्रति विद्रोही बना देते हैं। इसके बजाय विवेक निर्माण में प्रेरण ज्यादा प्रभावी है। अब प्रश्न उठता है कि प्रेरण है क्या? बच्चों को यह बताना कि उनके दुर्व्यवहार का दूसरों पर क्या परिणाम पड़ता है, प्रेरण है। यह बच्चों को सकारात्मक निर्देश देता है। भावी स्थितियों में इसका व्यापक मूल्य है।

ख) वर्तमान मनो–विश्लेषणात्मक सिद्धांत

हाल ही के मनो–विश्लेषणात्मक विचार बच्चों और माता–पिता के बीच संवेदनशील भावात्मक संबंध पर अधिक महत्त्व डालते हैं। रॉबर्ट एमडे और अन्य मनोविज्ञानियों (1987) के अनुसार यह भावात्मक लगाव नैतिक मानदंड अर्जित करने के लिए व्यापक नींव है। जो बच्चे माता–पिता के साथ संबंध में सुरक्षित करते हैं उनके द्वारा जीवन के प्रारंभिक वर्षों से ही सही व्यवहार सीखने की संभावना अधिक होती है। माता–पिता केवल निषेध ही नहीं बल्कि व्यवहार के लिए सकारात्मक मार्गदर्शन भी प्रदान करते हैं। ये दोनों बच्चे की पराहम् में शामिल होते है। ईनाम बच्चे को माता–पिता के नैतिक मानदंडों को आत्मसात् करने में सहायक होता है। उदाहरण के लिए, माता–पिता की ओर से अनुमोदन पूर्ण एक मुस्कान उस कार्य को समझने व उसकी स्वीकृति में सहायक होती है। निंदा करने से शर्म और ठेस की भावनाएँ उत्पन्न होती है।

सामाजिक अध्ययन सिद्धांत

आइए, नैतिक विकास पर सामाजिक सिद्धांतवादियों की राय जानने का प्रयास करें। उनका मानना है कि अन्य अनुक्रियाओं की तरह प्रतिरूपण (moldelling) और प्रबलीकरण के जरिए नैतिक व्यवहार भी अर्जित किया जाता है।

पारंपरिक व्यवहारवादियों के अनुसार, बच्चे नई अनुक्रियाएँ सक्रिय अनुकूलन के जरिए सीखते हैं। वे वयस्क नैतिक मानदंड तभी सीखते हैं यदि उनका व्यवहार उनके जीवन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वयस्कों –माता–पिता और अध्यापक, द्वारा प्रबलीकृत होता है प्रबलीकरण प्रशंसा, अनुमोदन या ईनाम के रूप में हो सकता है।

बच्चा अच्छा या बुरा व्यवहार अन्य तरीके से भी सीखता है और वह है अपने प्रतिरूप की नकल करना। प्रतिरूप का प्रभाव वास्तविक अनुभव के बाद भी कई सप्ताहों तक रहता है।

प्रतिरूप (मॉडल) के क्या गुण होते हैं?

स्नेहमयी, अनुक्रियाशील, सशक्त और जो वे कहते हैं वह करते हैं, ऐसे मॉडलों के प्रति बच्चे ज्यादा ग्रहणशील होते हैं। नैतिक क्रियाओं के लिए दंड एक अच्छा प्रेरक है। लेकिन इसकी भी सीमाएँ हैं। कठोर दंड देने से सामाजिक रूप से वांछनीय व्यवहारों को प्रोत्साहित नहीं किया जा सकता।

संज्ञानात्मक सिद्धांत

संज्ञानात्मक सिद्धांतविदों का मानना है कि व्यक्तियों में सर्जन के जरिए नैतिकता विकसित होती है।

नैतिक विकास में सर्जन से क्या अभिप्राय है इसका अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिससे बच्चा द्वंद्वकारी स्थिति में गलत और सही कार्य के बारे में सही निर्णय लेने में सक्षम हो जाता है। इस प्रक्रिया से बच्चा नयी नैतिक अंतर्दृष्टि प्राप्त करता हैं

वह मानव संबंधों के नियमन के सिद्धांत व क्रिया विधियों के बारे में भी सीखता है।

पीयज़े का सिद्धांत

इस क्षेत्र में एक प्रारंभिक सिद्धांत पीयज़े द्वारा प्रतिपादित किया गया। पीयज़े ने नैतिक विकास में नियमों की महत्ता पर बल दिया। उसके अनुसार विभिन्न परिस्थितियों में लागू हाने वाले नियमों के लिए स्वीकृति व सम्मान अर्जित करना नैतिक विकास है।

पीयज़े की नैतिक विकास की अवस्थाएँ

पीयज़े ने नैतिक विकास के लिए दो अवस्थाओं की पहचान की। बच्चे जीवन के प्रारंभिक वर्षों में नियमों और उनके लागू करने से संबद्ध होते हैं। लगभग 5 वर्ष की आयु के आसपास वे नियमों को पहचानना प्रारंभ कर देते हैं और उनके प्रति सम्मान ते हैं। यह अवस्था विधिबाह्यक (पराधीन) नैतिकता कहलाती है। विधिबाध्य शब्द से अभिप्राय है दूसरे की सत्ता के अधीन। नियमों को समाज की बाह्य विशेषताओं के रूप में देखा जाता है। इसमें बिना तर्क–वितर्क और निर्णयन के नियमों का स्वतः आज्ञापालन किया जाता है।

बच्चा बिना सवाल–जवाब किए नियमों का पालन क्यों करता है? इसके कई कारण हैं। सबसे पहला कारण है वयस्क जो कि बच्चों के जीवन में बहुत शक्तिशाली होते हैं, बच्चों को नियमों का पालन करने को बाध्य करते हैं।

दूसरा कारण बच्चे की बौद्धिक अपरिपक्वता है। उसे ज्ञान नहीं होता कि नियमों को संशोधित या परिवर्तित किया जा सकता है।

पीयज़े के अनुसार नैतिक विकास की दूसरी अवस्था स्वायत्त नैतिकता है। इस अवस्था में बच्चे अपनी तार्किक शक्ति का प्रयोग करते हैं और नियमों के गुणधर्म पर प्रश्न पूछते हैं। 5–12 वर्ष की आयु में बच्चे की न्याय की संकल्पना परिवर्तित

हो जाती है। वह जान जाता है कि नियम कठोर नहीं होते। वे लचीले होते हैं और बहुमत के आधार, स्थिति के अनुसार इन्हें संशोधित किया जा सकता है। इस अवस्था में समूह का प्रभाव अत्यंत विशिष्ट होता है।

कुल नैतिक विकास पीयज़े की धारणा से भी कहीं अधिक व्यापक प्रक्रिया है।

पीयज़े के सिद्धांत का कोहलबर्ग द्वारा विस्तार

पीयज़े सिद्धांत का प्राथमिक संदर्भ के रूप में प्रयोग करते हुए कोहलबर्ग ने नैतिक विकास का विस्तृत सिद्धांत विकसित किया। नैतिक विकास का वर्णन करने के लिए कोहलबर्ग ने स्तर और अवस्था दृष्टिकोण का प्रयोग किया। उसके अनुसार छह नैतिक अवस्थाएँ होती है। उन्हें तीन प्रमुख स्तरों वाले समूहों में रखकर दो अवस्थाओं में विभक्त किया गया है। अवस्था को समझने के लिए तीन नैतिक स्तरों की जानकारी अनिवार्य है।

1) परंपरा–पूर्व स्तर (Pre-Conventional Level)

नैतिक मूल्य बाह्य घटनाओं में विद्यमान होते हैं। नैतिक समझ पुरस्कार, दंड और प्राधिकारी व्यक्ति की शक्ति पर आधारित होती है।

अवस्था–1, दंड आज्ञापालन अभिविन्यास

सज़ा के भय से बच्चे अच्छे व्यवहार को अपनाते हैं। प्राधिकारी की आज्ञा का पालन न करके वे किसी मुसीबत में फंसना नहीं चाहते।

अवस्था–2 साधनपरक लक्ष्य अभिविन्यास

नैतिक चयन व्यक्तिगत ज़रूरतों की तुष्टि और यदा–कदा दूसरों की ज़रूरतों के आधार पर किया जाता है। वे समझना प्रारंभ कर देते हैं कि नैतिक दुविधा के बारे में लोगों के भिन्न भिन्न परिप्रेक्ष्य हो सकते हैं।

ii) परंपरागत स्तर

हमारे समाज में यह अधिकांश किशोरों और वयस्कों की अवस्था है। अब आप पूछ सकते हैं कि परंपरा से क्या अभिप्राय है? परंपरा का अर्थ है जिस समाज में व्यक्ति जीता है उस समाज के नियम, अपेक्षाएँ और परिपाटियाँ।

इस अवस्था में नैतिक मूल्य सामाजिक नियमों को पुष्ट करने में विद्यमान होते हैं। यह दूसरों की अपेक्षाओं के अनुसार सामाजिक क्रम और व्यवहार सुनिश्चित करता है। यह व्यक्ति को सकारात्मक मानव संबंध स्थापित करने में सहायक होता है।

अवस्था–3 अच्छे लड़के/लड़की का अभिविन्यास

रिश्तेदारों और सम–समूह से समर्थन और स्नेह पाने की इच्छा बच्चों में अच्छे व्यवहार करने के लिए उत्प्रेरित करती है। वे दूसरों को खुश रखना और मदद करना चाहते हैं। आप बच्चों को देख सकते हैं कि अधिकांश लोगों की नजर में वे रूढिबद्ध लड़का/लड़की की छवि बनाए रखने का प्रयास करते हैं।

अवस्था–4 सामाजिक क्रम अनुरक्षण अभिविन्यास

इस अवस्था में, व्यक्ति समाज के नियमों को बनाए रखने का कर्त्तव्य निभाता है। वह प्राधिकरी का सम्मान करता है। सामाजिक क्रम अपने लिए व समाज के कल्याण के लिए बनाए रखा जाता है।

iii) रूढ़ि–उत्तर स्तर

यह कोहलबर्ग के नैतिक विकास का उच्चतम स्तर है। इस स्तर में व्यक्ति मूर्त सिद्धांतों और मूल्यों के संदर्भ में नैतिका को परिभाषित करता है। जो सभी स्थितियों और समाजों में लागू होता है।

अवस्था–5 सामाजिक संविदा अभिविन्यास

यह अवस्था व्यक्ति के अधिकांश और समाज के स्वीकृत कानूनों के बीच संविदा को दर्शाती है। वह जानता है कि बहुमत के अधिकारों की सुरक्षा के लिए कानून बदले जा सकते हैं। इस अवस्था में मुख्य ज़ोर समुदाय कल्याण पर होता है। यह मानव अधिकारों की रक्षा पर केंद्रित होता है।

अवस्था–6 सार्वभौमिक नैतिक सिद्धांत अभिविन्यास

यह अवस्था अंतर्विवेक–उन्मुख होती है। वह सख्ती से सामाजिक–नियमों का पालन नहीं करता/करती। वह सार्वभौमिक मानव मूल्यों द्वारा उत्प्रेरित होता/होती है। वे व्यक्ति का नैतिक–निर्णय लेने में मार्गदर्शन करते हैं। इस संदर्भ से .यह प्रश्न उठता है : हम सर्वोत्तम ढंग से नैतिक विकास के इन तीनों स्तरों को कैसे जान सकते हैं। यदि हम इन तीनों को अपने और समाज के नियमों और अपेक्षाओं के बीच भिन्न प्रकारों के रूप में लें तो हम इन स्तरों को भली–भाँति समझ सकते हैं। स्तर–1 पर नियम और अपेक्षाएँ स्वयं के लिए बाह्य है।

स्तर–2 पर व्यक्ति नियमों और दूसरों, विशेषकर जो सत्ता में है कि सामाजिक अपेक्षाएँ के साथ स्वयं का तादात्म्य स्थापित करता है। स्तर–3 पर स्व नियमों और दूसरों की अपेक्षाओं से भिन्न हो जाता है। वह अपने द्वारा चुने गए सिद्धांतों के संदर्भ में मूल्यों को परिभाषित करता है।

आलोचना

कोहलबर्ग की अवस्थाएँ सुदृढ़ रूप से निश्चय अनुक्रम में आयु और रूप से संबद्ध है लेकिन वास्तविक जीवन में नैतिक विकास कोहलबर्ग द्वारा माने गए विकास की तुलना में कम दृढ़ संगठित अवस्था धारणा में उचित है। उनके सिद्धांत में सभी संस्कृतियों की नैतिक तार्किकता की पूरी परिधि पर विचार नहीं किया गया। इस सिद्धांत में छोटे बच्चों की नैतिक जानकारी को वास्तविकता से कम आंका गया है।

बोध प्रश्न 6

टिप्पणीः अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) पीयज़े के अनुसार नैतिक विकास की दो अवस्थाएं कौन–सी हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.6 नैतिक विकास पर पर्यावरण का प्रभाव

नैतिक मूल्यों के विकास को संवर्धित करने वाले कारक कौन हैं? इनमें से कुछ का उल्लेख नीचे किया गया है।

1) **साथी समूह :** अपने हम उम्रों के साथ अंतःक्रिया से नैतिक समझ को बढ़ावा मिलता है। अपने मित्रों के साथ मुद्दों के बारे में जोशपूर्ण व जीवंत विचार–विमर्श करने में बच्चे को कोई बाधा नहीं होती।

2) **बाल–पोषण रीतियाँ :** माता–पिता बच्चे के पालन–पोषण के लिए कौन–सी रीतियाँ अपनाते हैं यह बच्चे के नैतिक विकास को किस प्रकार प्रभावित करता है? गलत काम के लिए शारीरिक दंड देने से बच्चों में अकसर नकारात्मक रवैये उत्पन्न हो जाते हैं। बच्चे सजा से डरते हैं। सजा से

बचने के लिए, हो सकता है बच्चा अपने कार्य को तर्कसंगत ठहराए या सजा से बचने के लिए झूठ बोले। माता–पिता बच्चे के गलत कार्य को स्वीकार न करके बच्चों को दिए जाने वाले कुछ विशेष लाभों से वंचित रख सकते हैं। ऐसे मामले में, बच्चा अपने द्वारा किए जाने वाले गलत काम को गलत मानता है और प्रलोभन के प्रति तीव्र प्रतिरोध होता है। इसका सबसे बढ़िया तरीका है बच्चे के साथ उस गलत काम के संबंध में बातचीत करना। उसके द्वारा किए जाने वाले गलत काम का स्वयं बच्चे पर और दूसरों पर क्या प्रभाव पड़ सकता है उसे समझाएँ। पिता की अपेक्षा बच्चा माता से ज्यादा प्रभावित होता है।

3) **अनुशासन :** अनुशासन व्यक्ति में नैतिक मूल्य विकसित करने में सहायक होता है। बच्चों को अनुशासित करते समय वयस्कों को उस कारण पर बल देना चाहिए कि क्यों किसी एक काम को गलत और दूसरे को सही माना जाता है। .

   क) **ईनाम :** इनका सुदृढ़ शैक्षिक मूल्य होता है। यह दर्शाता है कि बच्चे ने सही और स्वीकृत ढंग का व्यवहार किया और ईनाम उसे ऐसा कार्य पुनः करने के लिए. उत्प्रेरित करता है।

   ख) **सजा :** यदि सजा बच्चे की आयु और उसके काम के अनुरूप होती है केवल तभी वह मूल्यों के विकास को प्रभावित करती है। सजा उचित रूप से दी जानी चाहिए। तभी वह बच्चे को सामाजिक अपेक्षाओं की पुष्टि के लिए उत्प्रेरित करेगी।

4) **अन्य कारक :** आस–पड़ोस, स्कूल, जनसंचार माध्यम, टेलीविजन, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ इत्यादि बच्चे को अपने सामाजिक समूह के सांस्कृतिक रूप से स्वीकृत मूल्यों के बारे में सीखाते हैं।

व्यक्तित्व का विकास घर, स्कूल, समाज और अन्य व्यक्तियों की उपस्थिति में होता है। इन्हीं स्रोतों से बच्चा नैतिक मूल्य सीखता है। आज हम परिवार और सामाजिक जीवन भंग होते देख सकते हैं। हमें कई समस्याओं जैसे आनुवंशिक प्रौद्योगिकी, लैंगिक विकृति एच आई वी/एड्स इत्यादि का सामना करना पड़ सकता है। ये मुद्दे हमारी भावी पीढ़ी के जीवन के लिए खतरा है। आज, अपने समाज में, हम ऐसे कई व्यक्तियों के संपर्क में आते हैं जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी में तो प्रवीण हैं लेकिन नैतिक मूल्यों के विषय में अनभिज्ञ हैं। इन सभी निम्नीकरण शक्तियों से लड़ने के लिए हमें अपने युवाओं को तैयार करना होगा. हमें उनमें अच्छे नैतिक मूल्यों को समाविष्ट करना होगा। हमें युवा पीढ़ी को जीवन के अच्छे मूल्यों के महत्त्व के प्रति सजग बनाना चाहिए। ताकि जब बच्चा बड़ा होता है और उसके व्यक्तित्व का विकास होता है तो हम उसे समाज द्वारा स्वीकृति नीति संहिता से परिचित करवा सकें।

आज के समाज में नीति–संहिता सीखना बहुत कठिन है। इसके कारण निम्नलिखित हैं:

i) व्यक्ति को अपने पर्यावरण में विभिन्न संहिताओं का सामना करना है।

ii) नीति–संहिताओं और लोगों के व्यवहार के बीच विरोध होता है।

iii) नए व्यवहार प्रतिमानों की सामाजिक स्वीकृति से नीति–संहिताओं में परिवर्तन होते हैं।

यह अंतर्द्वंद्व व्यक्ति में नैतिक मूल्यों के विकास को धीमा करता है। सामाजिक समूह छोटे बच्चे द्वारा नीति–संहिताओं के उल्लंघन को सहन कर लेता है। लेकिन जब वही बड़ी/बड़ा होता/होती है, और वह समाज द्वारा स्वीकृत व्यवहार को पूरा नहीं कर सकता/सकती, तब उसे सजा दी जाती है। यही व्यक्ति महसूस करता/करती है कि वह समाज की अपेक्षाओं को पूरा नहीं कर सकता/सकती। तो इससे उसमें अपराध की भावना आ सकती है। ऐसे व्यक्ति की

स्व–संकल्पनाहीन होगी। यदि व्यक्ति समाज के मूल्यों के अनुरूप नहीं हो सकता तो अनिश्चितता और संदेह उसके व्यक्तित्व की विशेषताएँ होगी। दूसरी ओर, यदि व्यक्ति समाज द्वारा स्वीकृत नैतिक मूल्यों को सीखता है और उन्हीं के अनुसार व्यवहार करता है तो वह सुरक्षित महसूस करेगा/करेगी। ऐसा व्यक्ति हर परिस्थिति में सुविधाजनक महसूस करेगा और हर स्थिति में स्वयं को ढाल लेगा।

नैतिक विकास और एच आई वी नियंत्रण

अच्छे नैतिक मूल्य विकसित कर लेने पर व्यक्ति हानिकारक यौन संबंधों में लिप्त नहीं होगा। इससे काफी हद तक एच आई वी की घटनाओं की रोकथाम होगी। विवाह और परिवार की संस्थाओं के माध्यम से समाज मनुष्य की कामेच्छा का नियमन करता है। अच्छे नैतिक मूल्य मनुष्य के जीवन की एच आई वी/एड्स/यौन संचारित जैसे रोगों के शिकंजों . से रक्षा कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 7

टिप्पणी: अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

1) नैतिक मूल्यों के विकास को बढ़ावा देने वाले कारक कौन–से हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.7 सारांश

इस इकाई में आपने व्यक्तित्व के स्वरूप और व्यक्तित्व विकास के विभिन्न सिद्धांतों के बारे में जानकारी हासिल की। आप नैतिक मूल्यों के महत्त्व से भी परिचित हुए। हमने नैतिक विकास के विभिन्न सिद्धांतों की भी चर्चा की। हमने संक्षेप में व्यक्तित्व विकास और नैतिक मूल्यों के संबंधों का भी वर्णन किया। नैतिक मूल्य व्यक्ति में स्वस्थ जीवन शैली विकसित करने में किसी प्रकार सहायक हो सकते हैं इस पर भी चर्चा की गई।

5.8 शब्दावली

अनुकूलन : पीयजे के सिद्धांत में, अनुकूलन से अभिप्राय है पर्यावरण के साथ प्रत्यक्ष अंतःक्रिया के जरिए योजनाएँ बनाने की प्रक्रिया।

अंतर्नाद : एक जागृत प्रतिक्रिया प्रवृत्ति जो व्यक्ति में गतिविधियाँ प्रारंभ करने और व्यक्ति के सामान्य सक्रियता स्तर को बढ़ाने के लिए उसे जारी रखता है।

अपराधशीलता : 18 वर्ष से कम आयु के व्यक्ति का आपराधिक व्यवहार।

आनुभविक : अवलोकनीय और मूर्त (वास्तविक) घटनाओं से संबंधित।

विषमलिंगी कामुकता : विपरीत सेक्स वाले व्यक्ति के प्रति निर्देशित रुचि या व्यवहार।

समलिंगी कामुकता : समान लिंग वाले व्यक्ति के प्रति निर्देशित काम रुचि या व्यवहार।

अभिप्रेरण : एक अंत या वे लक्ष्य की ओर व्यक्ति के व्यवहार की दिशा को निर्धारित करने के लिए संचालित होने वाला यह एक प्रभावी और लक्ष्यार्थ कारक है।

क्रिया प्रसूत अनुकूलन : यह सीखने की प्रक्रिया का एक प्रकार है जहाँ सबलीकरण द्वारा ज्यादा संभावना या बार–बार किया जाने वाली अनुक्रिया की जाती है।

मानक : समूह के लिए मानदंड मूल्य

समाजोन्मुख : व्यक्ति द्वारा की जाने वाली ऐसी क्रियाएँ जिसमें वह दूसरे व्यक्ति के लिए करता है और किसी पारितोषित की आशा नहीं रखता।

प्रबलीकरण (सबलीकरण): उपयुक्त उद्दीपक की सहायता से अनुक्रिया को सुदृढ़ करने की प्रक्रिया ताकि वह क्रिया बार–बार हो।

अनुक्रिया : उद्दीपन के परिणामस्वरूप व्यक्ति की क्रिया।

उद्दीपन : ऊर्जा परिवर्तन जो ग्राही को उत्तेजित करता है।

आत्म–सिद्धित : वह जरूरत जो व्यक्ति को अपने बारे में खोज करने और अपनी क्षमता को पूरा करने के लिए प्रेरित करती है।

आत्मधारणा : व्यक्ति की अपने चरित्र के बारे में मान्यताएँ।

5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

थॉमस लिकोना, मोरल डिवलेपमेंट एंड बीहेवियर, 1 हाल्ट, रिनहर्र एंड विंस्टन न्यूयार्क, यू.एस.एस.।

थॉमस, ग्रेसियस (2015), कोड ऑफ एक्सि फॉर सोशल वर्क्स, नई दिल्ली, इग्नू ।

जेम्स टी बोस, साइकोलोजी एंज ए विहेवीयरल साइंस, गु ईयर पब्लिशिंग कं., पेसिफिक पालीसेज, CALIT.

एलिजाबेथ की हरलॉक, 'पर्सनेलिटी डिवलपमेंट', टाटा मेकग्रयू हिल पब्लिशिंग कं. लि., नई दिल्ली।

स्टूयार्ट कोचेन : 'सोशियल एंड पर्सनेलिटी डिवेलपमेंट इन चिल्ड्रन', मेकमिलन पब्लिशिंग कं., न्यूयार्क।

ल्येयेला कोल एंड इरमा नेल्सन हाल : 'साइकोलोजी ऑफ एजेलसेंस', हाल्ट, रिनहर्ट एंड विस्टन, न्यूयार्क।

कालूइन एस, हाल एंड गारगनर लिंडजे : 'क्लोरीज ऑफ पर्सनेलिटी', विले इस्टर्न लि. नई दिल्ली।

लाउरा ई. बर्क : 'चाइल्ड डिवेलपमेंट' पेंटिस हॉल ऑफ इंडिया प्रा. लि., नई दिल्ली।

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) जब मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व की बात करते हैं तो उनका अभिप्राय गतिशील संकल्पना है जो व्यक्ति की संपूर्ण मनोवैज्ञानिक प्रणाली की वृद्धि और विकास को वर्णित करता है। यह व्यक्ति के पूरे व्यवहार की क्वालिटी है।

यह व्यक्ति के चरित्र, भावात्मक प्रवृत्तियों, समाज–शीलता (मिलन–सारिता) और पहलूओं जैसे व्यक्ति क्या कहता या करता है, को व्यक्त करता है।

बोध प्रश्न 2

1) व्यक्ति समग्र आनुवंशिकता निधि अपने माता–पिता से जीनों के माध्यम से प्राप्त करता है। पर्यावरण के साथ अंतक्रिया से ये गुणवताएँ विकसित होती हैं। व्यक्ति के व्यक्तित्व को ढालने से परिवार स्कूल, सामाजिक व आर्थिक पर्यावरण और विशिष्ट परिस्थितियों महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

बोध प्रश्न 3

1) इड् सुखेप्सा सिद्धांत का अनुसरण करता है। ये नैतिका या वास्तविकता से संबद्ध नहीं होता। अहम् यथार्थ के सिद्धांत का पालन करता है। पराहम नैतिकता सिद्धांतों पर काम करता है।

2) मनो–लैंगिक विकास की अवस्थाओं का उल्लेख करें। व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में प्रत्येक अवस्था का महत्व बताएँ।

   क) मौखिक अवस्था : इस अवस्था में संतोष से समायोजन और दृढ़ता की नींव पड़ती है। नियतन के फलस्वरूप निष्क्रिय व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

   ख) गुदा संबंधी अवस्था : अत्यधिक सख्ती से निर्दयता, तोड़फोड़ अवस्था आदि का विकास होता है। उचित अनुशासन सृजनात्मकता और उत्पादकता की नींव डालता है। नियतन से जिद्दी, विवश और आज्ञा पालन करने वाले व्यक्तित्व का विकास होता है।

ग) लिंगीय अवस्था : अनुसुलझी ईडिपस ग्रंथि के कारण बाद में वैवाहिक जीवन में कई यौन संबंधी और वैवाहिक समस्याएँ हो सकती हैं।

घ) प्रसुप्ति अवस्था : इस अवस्था में लैंगिक आवेग प्रसुप्त होते हैं।

ङ) जनांगीय अवस्था : यदि व्यक्ति पहले की अवस्थाओं में भली–भाँति समायोजित होता है तो वह सामान्य विषमलिंगी संबंध स्थापित करने योग्य हो जाता है।

बोध प्रश्न 4

1) व्यक्ति की योग्यताएँ, उसका परिपक्वन, का स्तर, उद्दीपन और पर्यावरण से जो प्रबलीकरण वह प्राप्त करता है।

2) व्यक्ति की जरूरतें एक सोपानक्रम में व्यवस्थित होती है। पाँच जरूरतों–शरीर क्रियात्मक सुरक्षा, सामाजिक, सम्मान और आत्मसिद्धि का सोपानक्रम होता है। निम्न स्तर की जरूरतों की तुष्टि अगले स्तर की जरूरतों के लिए प्रेरित करती है।

बोध प्रश्न 5

1) नैतिकता में समाज के सांस्कृतिक मूल्यों को आत्मसात करना सम्मिलित है। सांस्कृतिक समूह द्वारा क्या गलत और क्या सही माना जाता है यह सीखना भी नैतिका में शामिल है। बच्चे में सामाजिक अवधारणाएँ सत्ता और अन्य तकनीकों द्वारा विकसित की जाती है। बच्चों को दूसरों के प्रति चिंता दर्शाने की योग्यता विकसित करना भी सीखाया जाता है।

बोध प्रश्न 6

1) अवस्था–I विधिबाह्यक नैतिकता : बच्चा जानता है कि वह दूसरों की सत्ता के अधीन है। नियमों को समाज की बाह्य विशेषताओं के रूप में देखा जाता है।

अवस्था–II : स्वायत्त नैतिकता : इस अवस्था में बच्चे तार्किक शक्ति का प्रयोग करते हैं और नियमों के गुणधर्म पर प्रश्न पूछते हैं। नियमों के बारे में अपने पिछले विचारों के बारे में वे कठोर या अनमनीय नहीं होते।

बोध प्रश्न 7

1) समसमूह (साथी समूह), बाल–पोषण रीतियाँ, अनुशासन, ईनाम, दंड, आस–पड़ोस, स्कूल, जन–संचार माध्यम।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY